MAHN101CCT

आधुनिक हिंदी काव्य

(भाग -1, 1936 तक)

एम.ए.

(प्रथम सेमेस्टर के लिए)

पेपर-1

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी

हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad
Course : Aadhunik Hindi Kavya
ISBN: 978-93-95203-28-9
First Edition : December, 2022

Publisher	:	Registrar, Maulana Azad National Urdu University
Edition	:	December, 2022
Copies	:	1000
Copy Editing	:	Dr. Wajida Isharat/Dr. L. Anil, DDE, MANUU, Hyderabad
Covering	:	Dr. Mohd. Akmal Khan, DDE, MANUU, Hyderabad
Printing	:	Print Times & Business Enterprises, Hyderabad

Aadhunik Hindi Kavya

For

M.A. Hindi

1st Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University
Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat
Director: dir.dde@manuu.edu.in   *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in
Phone number: 040-23008314   Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)

संपादक

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल
(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिंदी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabhadeo Sharma
Former Head, Higher Education and Research Centre, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि., हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

डॉ. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Dr. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Hyderabad Centre, Secunderabad, Hyd

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

पाठ्यक्रम-समन्वयक

डॉ. आफ़ताब आलम बेग

सहायक कुल सचिव, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद

लेखक	इकाई संख्या
• **डॉ. डॉली**, सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, गुरुनानक महाविद्यालय, चेन्नै	1
• **डॉ. अबु होरैरा**, अतिथि प्राध्यापक, हिंदी विभाग, मानू	2
• **डॉ. वाजदा इशरत,** अतिथि प्राध्यापक, दू. शि. नि., मानू	3,4
• **डॉ. इबरार खान,** असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, मिर्ज़ा ग़ालिब कॉलेज, गया	5,6
• **डॉ. सुषमा देवी,** प्राध्यापक, हिंदी विभाग, भवन्स विवेकानंद कॉलेज, सैनिकपुरी, सिकंदराबाद	7,8
• **डॉ. एन. लक्ष्मीप्रिया**, असिस्टेंट प्रोफेसर, महात्मा गांधी सरकारी कॉलेज, मायाबंदर (अंडमान-निकोबार)	9,10
• **डॉ. सुपर्णा मुखर्जी**, प्राध्यापक, हिंदी विभाग, सेंट एन्स जूनियर एंड डिग्री कॉलेज फॉर गर्ल्स एंड वुमेन	11,12
• **डॉ. चंदन कुमारी,** प्राध्यापक, हिंदी विभाग, भवन्स श्री ए. के. दोषी महिला कॉलेज, जामनगर	13,14
• **प्रो. गोपाल शर्मा**, पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भाषाविज्ञान विभाग अरबा मींच विश्वविद्यालय, इथियोपिया	15
• **डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा**, असिस्टेंट प्रोफेसर, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान, दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद	16

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	7
संदेश	:	निदेशक	9
भूमिका	:	पाठ्यक्रम –समन्वयक	10
खंड/ इकाई		**विषय**	**पृष्ठ संख्या**
खंड 1	:	**आधुनिक हिंदी काव्य : छायावाद पर्यंत**	
इकाई 1	:	आधुनिकता और आधुनिक बोध	13
इकाई 2	:	भारतेंदुयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ	26
इकाई 3	:	द्विवेदीयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ	40
इकाई 4	:	छायावादी कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ	62
खंड 2	:	**भारतेंदु युग और द्विवेदी युग**	
इकाई 5	:	भारतेंदु हरिश्चंद्र : एक परिचय	76
इकाई 6	:	'कहाँ करुणानिधि केशव सोए' और 'मातृभाषा प्रेम'	94
इकाई 7	:	मैथिलीशरण गुप्त : एक परिचय	112
इकाई 8	:	'साकेत' : नवम सर्ग	128
खंड 3	:	**छायावाद**	
इकाई 9	:	जयशंकर प्रसाद : एक परिचय	147
इकाई 10	:	कामायनी : 'चिंता' एवं 'श्रद्धा'	168
इकाई 11	:	निराला : एक परिचय	201
इकाई 12	:	'राम की शक्तिपूजा'	221

खंड 4	**:**	**काव्यालोचन**	
इकाई 13	:	सुमित्रानंदन पंत : एक परिचय	244
इकाई 14	:	'पल्लव' : काव्यालोचन	261
इकाई 15	:	महादेवी वर्मा : एक परिचय	279
इकाई 16	:	'रश्मि' : काव्यालोचन	300
		परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना	**325**

प्रूफ रीडर:

प्रथम : डॉ. वाजदा इशरत, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दू. शि. नि., मानू

द्वितीय : डॉ. एल. अनिल, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा),
दू. शि. नि., मानू

अंतिम : डॉ. आफताब आलम बेग, सहायक कुल सचिव, दू. शि. नि., मानू

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यत प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय मातृभाषा / घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनने का सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां है जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपने दूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के

लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना रहा है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले दो वर्षों के दौरान कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामले और संचार चलन भी काफी कठिन रहे हैं लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किया जा रहा है। मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस विश्वविद्यालय का अंग बनने के लिए ह्लदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके के लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का बाकायदा प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और ट्रांसलेशन डिविजन से हुआ था और इस के बाद 2004 में बाकायदा पारंपरिक शिक्षा का आगाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए। नए स्थापित विभागों और ट्रांसलेशन डिविजन में नियुक्तियाँ हुईं। उस वक़्त के शिक्षा प्रेमियों के भरपूर सहयोग से स्व-अधिगम सामग्री को अनुवाद व लेखन के द्वारा तैयार कराया गया।
पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है कि दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से लगभग जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के मयार को बुलंद किया जाय। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवततापूर्ण करके स्व-अधिगम सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड-24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार कराया जा रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज पर आधारित कुल 15 पाठ्यक्रम चला रहा है। बहुत जल्द ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम शुरू किए जाएंगे। अधिगमकर्ताओं की सरलता के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 5 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह और अमरावती) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क तैयार किया है। इन केन्द्रों के अंतर्गत एक साथ 155 अधिगम सहायक केंद्र (लर्निंग सपोर्ट सेंटर) काम कर रहे हैं। जो अधिगमकर्ताओं को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (डी. डी. ई.) ने अपनी शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इसके अलावा अपने सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ ऑनलाइन तरीके से ही दे रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर अधिगमकर्ता को स्व-अधिगम सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्र ही ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध कराया जाएगा। इसके साथ-साथ अध्ययन व अधिगम के बीच एसएमएस (SMS) की सुविधा उपलब्ध की जा रही है। जिसके द्वारा अधिगमकर्ताओं को पाठ्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसलिंग, परीक्षा के बारे में सूचित किया जाता है।

आशा है कि देश में शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई उर्दू आबादी को मुख्यधारा में शामिल करने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'आधुनिक हिंदी काव्य - भाग 1 (1936 तक)' शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के एम.ए. (हिंदी) प्रथम सत्र के दूरस्थ शिक्षा माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इससे इस पाठ्यक्रम के प्रथम प्रश्न पत्र की जरूरतों की पूर्ति होगी। इस पुस्तक की संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार नियमित माध्यम की पाठ्यचर्या के अनुरूप रखी गई है।

हिंदी साहित्य का आधुनिक काव्य नवजागरण आंदोलन के साथ जन्म लेता है और स्वतंत्रता आंदोलन के साथ विकसित होता है। इस यात्रा में 1936 एक महत्वपूर्ण पड़ाव है, जहाँ से हिंदी कविता प्रगतिशीलता की ओर मुड़ती है। प्रस्तुत पाठ्यक्रम इस परिवर्तन बिंदु तक के हिंदी कविता के विकास को प्रमुख कवियों और उनकी रचनाओं के माध्यम से स्पष्ट करने की दृष्टि से बनाया गया है। आधुनिक हिंदी काव्य की इस अवधि में तीन क्रमिक उत्थान दिखाई देते हैं - भारतेंदु युग, द्विवेदी युग और छायावाद युग। प्रस्तुत पुस्तक के पहले खंड में आधुनिक बोध की व्याख्या करते हुए इन तीनों युगों की परिस्थितियों तथा काव्य प्रवृत्तियों पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है। दूसरा खंड भारतेंदु युग और द्विवेदी युग के दो युग निर्माता कवियों भारतेंदु हरिश्चंद्र और मैथिलीशरण गुप्त के परिचय और काव्य पर केंद्रित है। तीसरे और चौथे खंड में छायावाद के चार स्तंभों के रूप में प्रतिष्ठित चार रचनाकारों - जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा का परिचय देते हुए उनके काव्य का अध्ययन और विवेचन किया गया है।

इस प्रकार यह पुस्तक छायावाद तक के आधुनिक हिंदी काव्य को आत्मसात करने की दृष्टि से स्वतःपूर्ण और समर्थ पुस्तक है। इसके अध्ययन से जहाँ छात्र आधुनिक हिंदी कविता के विकास, विषय वस्तु, भाषा-शैली और काव्य सौंदर्य से परिचित होंगे, वहीं इस काव्य में निहित राष्ट्रीय चेतना और मानव मूल्यों को भी आत्मसात कर सकेंगे। इस सामग्री के अध्ययन से उनके

मानसिक, बौद्धिक और नैतिक स्तर का विकास भी होगा। प्रस्तुत पुस्तक की सारी सामग्री को छात्रों की सुविधा के लिए कुल 16 इकाइयों के रूप में सरल, सहज और सुबोध भाषा में प्रस्तुत किया गया है।

इस समस्त पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन विद्वान इकाई लेखकों, ग्रंथों और ग्रंथकारों से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञ हैं।

-डॉ. आफताब आलम बेग

पाठ्यक्रम समन्वयक

आधुनिक हिंदी काव्य

(भाग -1, 1936 तक)

इकाई 1 : आधुनिकता और आधुनिक बोध

रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मूल पाठ : आधुनिकता और आधुनिक बोध

1.3.1 आधुनिकता का अर्थ

1.3.2 आधुनिकता की परिभाषाएँ

1.3.3 आधुनिकता : उद्भव और विकास

1.3.4 आधुनिकता के तत्व

1.3.5 आधुनिकता का प्रभाव एवं महत्व

1.3.6 आधुनिक बोध

1.4 पाठ सार

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

1.6 शब्द संपदा

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

वर्तमान में सबसे अधिक प्रचलित शब्द है आधुनिक। सामान्य जीवन एवं भाषा में इस शब्द का प्रयोग बड़ा आम हो गया है। अंग्रेजी में इसे 'मॉडर्न' का पर्याय माना जाता है और शब्दकोश के अनुसार इसका अर्थ है-'वर्तमान या हाल ही में घटित'। आधुनिक हिंदी काव्य के साथ आधुनिकता,आधुनिकता बोध या आधुनिक बोध और उत्तर आधुनिकता जैसे शब्द लगातार जुड़ते रहे हैं। मानव जीवन में कविता का विशेष महत्व रहा है। कविता कवि की भावनाओं का

उद्घाटन है। कविता कवि की संवेदनाओं का प्रवाह है। कविता जीवन को नई चेतना प्रदान करने का अनूठा माध्यम है। प्राचीन काल में कविता का अस्तित्व गद्य समान महत्वपूर्ण नहीं था किंतु आधुनिक काल में कविता को नया रूप मिलने के साथ-साथ हिंदी साहित्य में गरिमापूर्ण स्थान मिला।

1.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में आप आधुनिक हिंदी काव्य के परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता एवं आधुनिक बोध के बारे में पढ़ेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- आधुनिकता और आधुनिक बोध के अर्थ और स्वरूप से अवगत हो सकेंगे।
- आधुनिकता के प्रभाव एवं महत्व की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- आधुनिकता के उद्भव और विकास को समझ सकेंगे।
- आधुनिकता के तत्वों को समझ सकेंगे।
- आधुनिकता और परंपरा के संबंध से परिचित हो सकेंगे।

1.3 मूल पाठ: आधुनिकता एवं आधुनिक बोध

1.3.1 आधुनिकता का अर्थ

लैटिन भाषा में आधुनिकता का अर्थ है-'इस काल में'।किंतु धीरे-धीरे अंग्रेजी में इस शब्द का प्रयोग कुछ अलग अर्थ में होने लगा और इसका अभिप्राय-'सामाजिक संरचना एवं मूल्यों में परिवर्तन या फिर नए मूल्यों एवं एक नई सोच का जन्म'के साथ जुड़ गया।इस तरह यदि देखा जाए तो आधुनिक शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है- पहला-काल से संबंधित अर्थ और दूसरा-प्रवृत्तिमूलक अर्थ। विकास मानव जीवन का अभिन्न अंग है।विकास तब ही संभव है जब समय के चलन को अपनाया जाए।यह प्रक्रिया आधुनिकता कहलाती है। आधुनिक शब्द अंग्रेजी के शब्द 'मॉडर्न' का हिंदी रूपांतर हैं जिसका अभिप्राय हैं प्रचलन या फैशन जो भी समकालीन हैं अर्थात वर्तमान समय में चलन में है वही आधुनिक है। डॉ. नगेंद्र लिखते हैं - आधुनिक शब्द कासामान्यत: तीन अर्थों में प्रयोग होता है : समय सापेक्ष,नए का वाचक और विशिष्ट दृष्टिकोण या जीवन दर्शन का वाचक।

बोध प्रश्न

- 'आधुनिक' शब्द का किन तीन अर्थों में प्रयोग होता है?

1.3.2 आधुनिकता की परिभाषा

आधुनिकता को कई विद्वानों ने परिभाषित किया है।

डॉ. योगेंद्र सिंह ने बताया है कि 'साधारणतः आधुनिक होने का अर्थ फैशनेबल से लिया जाता है। वे आधुनिकता को एक सांस्कृतिक प्रयत्न मानते हैं जिसमें तर्क संबंधी मनोवृत्ति,दृष्टिकोण,संवेदना,वैज्ञानिक विश्वदृष्टि,मानवता,प्रौद्योगिक प्रगति आदि सम्मिलित हैं। ये आधुनिकता पर किसी एक ही जातीय समूह या सांस्कृतिक समूह का स्वामित्व नहीं मानते वरन् संपूर्ण मानव समाज का अधिकार मानते हैं।'

डॉ. गिरिजा कुमार माथुर का मत है कि 'आधुनिकता परिवर्तित भावबोध की वह स्तिथि है,जिसका प्रादुर्भाव यांत्रिक तथा वैज्ञानिक विकासक्रम के वर्तमान बिंदु पर आकर हुआ है।'

सी.ई.ब्लेक के अनुसार 'आधुनिकता एक ऐसी मनोवृत्ति का परिणाम है जिसमें यह विश्वास किया जाता है कि समाज को बदला जा सकता है और बदला जाना चाहिएतथा परिवर्तन वांछनीय है। आधुनिकता में व्यक्ति को संस्थाओं के बदलते हुए कार्यों के अनुरूप समायोजन करना होता है,इससे व्यक्ति के ज्ञान में वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप वह पर्यावरण पर नियन्त्रण प्राप्त कर लेता है।'

मैक्स वेबर के अनुसार 'आधुनिकता व्यक्ति एवं समाज के सदा से चले आ रहे स्वरूप को मिलने वाली स्पष्ट स्वीकृति है।आधुनिक अस्मिता अतीत में की गई अस्मिता की संरचनाओं की शृंखला में मात्र अगली कड़ी नहीं है बल्कि यह इन संरचनाओं के मूल में उपस्थित कारणों पर से पर्दा उठाने की प्रक्रिया है।'

बोध प्रश्न

- आधुनिकता को आप किस प्रकार परिभाषित करेंगे?

1.3.3 आधुनिकता : उद्भव और विकास

आधुनिकता अपने प्रारंभिक समय में'प्रबोधन युग'के रूप में जानी जाती थी।आधुनिकता के उद्भव के संदर्भ में प्रमोद तलगेरी का मत है कि "सोलहवीं-सतरहवीं शताब्दी में यूरोप में एकमहत्वपूर्णवैचारिक परिवर्तन आया - इसके तहत दर्शन एवं विज्ञान को धर्म एवं धर्म विज्ञान से बिल्कुल अलग करके देखा जाने लगा। इसके पश्चात विभिन्न प्रकार का विकास प्रारंभ हुआ।मार्शल बर्मन की एक पुस्तक (बर्मन 1983) के अनुसार आधुनिकता को तीन पारंपरिक चरणों में वर्गीकृत किया गया है :

- आरंभिक आधुनिकता: 1500-1789 (या 1453-1789 पारंपरिक इतिहास लेखन में)
- शास्त्रीय आधुनिकता: 1789-1900 (होब्सबौम योजना में दीर्घ 19वीं सदी (1789-1914) से संबंधित)
- उत्तर आधुनिकता: 1900-1989

ल्योटार्ड और बौड्रीलार्ड जैसे लेखकों का मानना है कि आधुनिकता 20वीं सदी के मध्य अथवा उत्तरार्ध में समाप्त हो गई और इस प्रकार आधुनिकता के बाद की अवधि को उत्तर आधुनिकता (1930 का दशक /1950 का दशक/1990 का दशक-वर्तमान) वर्णित किया गया है। अन्य सिद्धांतकारों ने 20वीं सदी के अंत से लेकर वर्तमान समय की अवधी को आधुनिकता का ही एक अन्यचरण माना है।

आधुनिकतावादी कविता आधुनिकतावादी साहित्य की परंपरा में 1890 और 1950 के बीच मुख्य रूप से यूरोप और उत्तरी अमेरिका में लिखी गई कविता को संदर्भित करती है।

बोध प्रश्न

- मार्शल बर्मन ने आधुनिकता को कितने चरणों में वर्गीकृत किया है?

1.3.4 आधुनिकता के तत्व

आधुनिकता के गत्यात्मक तत्व

साक्षरता

किसी भी परिवर्तन के लिए कौशल, प्रशिक्षणऔर शिक्षा की आवश्यकता होती है। मनुष्य का निर्माण करती है एवं उसे आधुनिक विकास की ओर अग्रसर करतीहै।शिक्षा के द्वारा ही विचारों और पद्धतियों का आदान-प्रदान होता है।

गतिशीलता

आधुनिक समाज गतिशील समाज भी है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में गतिशीलता के भौतिक तथा सामाजिक स्वरूपों का विकास होता है।

विवेकशीलता

आधुनिकता की प्रक्रिया में मनुष्य की विवेकशीलता में वृद्धि हो जाती है। दूसरे शब्दों में विवेकीकरण भी आधुनिकता का महत्वपूर्ण मापदंड है।आधुनिकता मूल रूप से विवेक पर विश्वास रखती है।

समय और संस्कृति

समय एवं संस्कृति का उसी प्रकार से रिश्ता है जिस प्रकार एक व्यक्ति अपनी प्रतिमा दर्पण में देखता है।समय के अनुसार संस्कृतियों में परिवर्तन होते रहते हैं। समय और संस्कृति एक दूसरे के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं।

बोध प्रश्न

- आधुनिकता के गत्यात्मक तत्वों के नाम बताइए।

1.3.5 आधुनिकता का प्रभाव एवं महत्व

आधुनिकता ने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि सभी मानव जीवन से जुड़े क्षेत्रों पर अपना प्रभाव छोड़ा है ।आधुनिकता का प्रभाव सकारात्मक भी रहा और नकारात्म कभी।

19वीं शताब्दी में होने वाले परिवर्तन ने पूरे समाज को पूरी तरह बदल दिया, फलस्वरूप लोगों के जीवन में बदलाव आया।बड़े शहरों का जन्म हुआ,सामाजिक व्यवहार में

परिवर्तन आया,शहरी संस्थाओं का निर्माण हुआ आदि।जीवन अधिक उन्मुक्त एवं रूढ़ीवादी हो गया।आधुनिकता के प्रभाव स्वरूप परंपराओं मान्यताओं एवं प्रथाओं के बंधन शिथिल हुए।भारतीय समाज पर आधुनिकता का प्रभाव कुछ अलग ढंग से पड़ा।भारतीय समाज में आधुनिकता के सारे गुणों को स्वीकार करके सुविधा संपन्न जीवन व्यतीत करना तो शुरू किया किंतु संपूर्ण आधुनिकता को आत्मसात नहीं कर सका।भारतीय संदर्भ में आधुनिकता के प्रभाव को लेकर कृष्ण दत्त पालीवाल कहते हैं कि 'आधुनिकता ने भारतीय सभ्यता को संस्कृति को केले के पत्तों की तरह अपनी आवारा हवाओं से चीर दिया।लेकिन विडंबना यह है कि इस यूरोपीय आधुनिकता ने प्रगति और विकास के सुनहरे सपने दिखाए।सेक्युलर फिलॉसफी का पाठ पढ़ाया और ऐसे कौशल से पढ़ाया कि उसके भी तरसे जातिवाद, प्रदेशवाद,संप्रदायवाद और अधिनायकवाद के अंकुर फूट कर वृक्ष बने।'साहित्य भी इस आधुनिकता से अछूता नहीं रहा।जहाँ एक और आधुनिकता का लेखन पर प्रभाव पड़ा वहीं दूसरी ओर भारतीय रूढ़िवादी सोच को भी दिखाया गया।आधुनिकता एक निश्चित विचारधारा है जिसमें पुराने के विरुद्ध नए का संघर्ष है।आधुनिकता असमानता को दूर करती है और बौद्धिकता तथा योग्यता को महत्व देती है।इससे अंधविश्वास एवं अनैतिक परंपराओं का अंत होता है।

बोध प्रश्न

- आधुनिकता किसको महत्व देती है?

1.3.6 आधुनिक बोध

आधुनिक बोध दो शब्दों से बनता है आधुनिक एवं बोध। आधुनिक का अर्थ है नयापन या कुछ समय से प्रचलन में आया हुआ। बोध शब्द का अर्थ होता है ज्ञान या जानकारी होना। इस प्रकार आधुनिक बोध का अर्थ है वर्तमान का बोल या वर्तमान में चल रहे प्रचलन का बोध होना। आधुनिक बोध नवीन विचारों का बोध कराता है एवं मनुष्य को ब्रह्म से दूर रखता है। आधुनिकता एक निरंतर चलनेवाली विकासशील प्रक्रिया है और यह आवश्यक हो जाता है कि उसकी सामायिकता का बोध रहे। आधुनिक काल में वर्ण्य विषय राष्ट्रीयता संघर्ष राजतंत्र प्रजातंत्र विकास तथा विभिन्न प्रकार की समस्याओं पर केंद्रित रहे, इन विषयों का बोध आम आदमी को साहित्य द्वारा मिलता रहा जो उससके विकास का मार्ग बनाता गया।

बोध प्रश्न

- आधुनिक बोध से क्या अभिप्राय है?

प्रिय छात्रो! हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के नामकरण का आधार इस काल में आधुनिकता और आधुनिक बोध की प्रवृत्ति की प्रधानता है। आप जानते ही हैं कि किसी भी इतिहास को मोटे तौर पर तीन खंडों में बाँटकर देखा जाता है। पहला खंड आरंभिक, प्राचीन या आदिकालीन कहा जाता है, तो दूसरे खंड को मध्य खंड कहने की परंपरा है। तीसरा खंड आम तौर से वर्तमान काल से संबंधित होता है। भारत के इतिहास को भी इसी प्रकार तीन खंडों में बाँटा जाता है-प्राचीन भारत, मध्यकालीन भारत और आधुनिक भारत। आधुनिक भारत की आरंभिक सीमा भारत में विदेशी कंपनियों के प्रवेश और ईस्ट इंडिया कंपनी तथा ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के साथ जुड़ी हुई है। चेतना की दृष्टि से देखें तो पता चलता है कि उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में भारतीय नवजागरण घटित हुआ। यह नवजागरण ही वास्तव में भारत में आधुनिक बोध के उदय का सूचक है। सामाजिक बोध में आ रहे इस बदलाव का सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य पर भी प्रभाव पड़ा। हिंदी साहित्य भी इसका अपवाद नहीं है। भारतीय नवजागरण, प्रथम स्वाधीनता संग्राम और पत्रकारिता के उदय ने मिलजुलकर एक ऐसा वातावरण तैयार किया कि हिंदी भाषी समाज और हिंदी साहित्य आधुनिकता की चेतना से अनुप्राणित हो उठे। यहाँ डॉ.बच्चन सिंह के इस कथन को उद्धृत करना उचित होगा कि -

> ‘आधुनिक’ शब्द दो अर्थों - मध्यकाल से भिन्नता और नवीन इहलौकिक दृष्टिकोण- की सूचना देता है। मध्यकाल अपने अवरोध, जड़ता और रूढ़िवादिता के कारण स्थिर और एकरस हो चुका था, एक विशिष्ट ऐतिहासिक प्रक्रिया ने उसे पुनः गत्यात्मक बनाया। मध्यकालीन जड़ता और आधुनिक गत्यात्मकता को साहित्य और कला के माध्यम से समझा जा सकता है। (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.399)

अभिप्राय यह है कि आधुनिकता अपने मूल रूप में जड़ता की विरोधी है।जड़ता यथास्थिति को बनाए रखना चाहती है, जबकि आधुनिकता यथास्थिति को तोड़कर परिवर्तन लाना चाहती है। इसीलिए आचार्य नलिन विलोचन शर्मा ने कहा है कि ‘परिपाटी के पट-परिवर्तन का नाम ही आधुनिकता है।’यह फैशन और सामयिकता दोनों से अलग है, क्योंकि

इसका संबंध बाहरी दिखावे से नहीं, बल्कि मानसिक परिवर्तन से है।1857 का प्रथम भारतीय स्वाधीनता संग्राम भारतीयों की मानसिकता में आ रहे परिवर्तन का सूचक होने के कारण ही भारतीय समाज और साहित्य में आधुनिकता का आरंभिक बिंदु बन सका। यह परिवर्तन था गुलामी की मानसिकता से आजादी की मानसिकता में परिवर्तन। जैसा कि राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'झांसी की रानी' के आरंभ में ही कहा है -

सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भृकुटी तानी थी,
बूढ़े भारत में भी आई फिर से नई जवानी थी,
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,
चमक उठी सन सत्तावन में
वह तलवार पुरानी थी।

आजादी की इस चेतना का जागरण ही भारत में आधुनिकता की आरंभिक आहट था। इसके परिणाम स्वरूप मध्यकाल से चली आ रही सामाजिक परिपाटियों के साथ ही साहित्य की भी परिपाटियाँ बदली। दरबार से निकलकर साहित्य आम आदमी के व्यापक सुख-दुख के साथ जुड़ा। इसके साथ ही दृष्टिकोण में भी मूलभूत बदलाव देखने में आया। जैसा कि डॉ.बच्चन सिंह ने माना है -

आधुनिक शब्द में जो दूसरा अर्थ ध्वनित होता है,वह है - इहलौकिक दृष्टिकोण। धर्म, दर्शन, साहित्य, चित्र आदि सभी के प्रति नए दृष्टिकोण का आविर्भाव हुआ। मध्यकाल में पारलौकिक दृष्टि से मनुष्य इतना अधिक आच्छन्न था कि उसे अपने परिवेश की सुध ही नहीं थी, पर आधुनिक युग में वह अपने पर्यावरण के प्रति अधिक सतर्क हो गया। आधुनिक युग की पीठिका के रूप में इस देश में जिन दार्शनिक चिंतकों और धार्मिक व्याख्याताओं का आविर्भाव हुआ, उनकी मूल चिंता इहलौकिक है। सुधार, परिष्कार और अतीत का पुनराख्यान नवीन दृष्टिकोण की देन है। (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ.400)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आधुनिक बोध की दो बेसिक कसौटियाँ हैं –

1.जड़ता और रूढ़िवाद का खंडन करते हुए गतिशीलता की स्वीकृति,

2. परलोक, पुनर्जन्म और भाग्यवाद से मुक्त होकर लौकिक और भौतिक दृष्टिकोण की स्वीकृति।

बोध प्रश्न

- आधुनिक भारत की आरंभिक सीमा किस से जुड़ी हुई है?
- बच्चन सिंह के अनुसार आधुनिक क्या है?
- आधुनिकता अपने मूल में क्या है?
- नलिन विलोचन शर्मा के अनुसार आधुनिकता क्या है?
- 1857 की प्रथम भारतीय स्वाधीनता संग्राम को किस प्रकार देखा जा सकता है?

1.4 पाठ सार

'आधुनिकता'शब्द वर्तमान की कोख़ से जन्म लेता है। समसामयिकता और आधुनिकता समय के साथ- साथ चलते हैं, इस दृष्टि से प्रत्येक नया काल अपने आप में आधुनिक होता है। परंपरा का विरोध तथा नयापन इस शब्द की विशेषता रही है। भले ही आधुनिकता का उद्भव पश्चिम में हुआ हो किंतु भारत में प्राचीन काल से चली आ रही मान्यताओं, नियमों और परंपराओं को हमेशा महत्व दिया जाता रहा है अर्थात यहां हर समय अपने आप में आधुनिक रहा है। आधुनिकता को स्वीकार और आत्मसात करने वाला व्यक्ति परंपरा को अपने ढंग से स्वीकार करता है। पारंपरिक जीवन मूल्य उनके लिए बंधन बन जाते हैं। इसीलिए कई बार व्यक्ति उसे अस्वीकार कर देता है। कई विद्वानों ने आधुनिकता के अर्थ को परिभाषित करने का प्रयास किया है। जैसे पीटर वर्जन ने माना है कि आधुनिक समाज व्यक्तिगत स्वतंत्रता की कुछ ऐसी गारंटी करता है इस समाज में जीने वाला आधुनिक व्यक्ति अपने आप को पारंपरिक समाज में जीने वाले लोगों से अलग समझता है। आधुनिकता अपने प्रारंभिक समय में प्रबोधन युग के रूप में जानी जाती थी। भारतीय समाज में आधुनिकता के प्रभाव को समझ पाना कठिन है क्योंकि भारतीय समाज की समाज व्यवस्था की संरचना ही अलग तरह की है। भारतीय समाज में आधुनिकता के सारे उपकरणों को स्वीकार करके सुविधा संपन्न जीवन व्यतीत करना तो शुरू कर दिया, किंतु भारतीय समाज संपूर्ण आधुनिकता को आत्मसात नहीं कर सका। भारतीय समाज में आज भी अंधविश्वास, कुरीतियाँ, कुप्रथाएँ, मान्यताएँ समाज को जकड़े हुए हैं, इसी

लिए आधुनिकता में पारंपरिकता एवं नवीनता दोनों समाहित हो जाते हैं। भारतीय समाज दो स्वरूपों में विभक्त है- परंपरा के साथ जीने वाला समाज और परंपरा से मुक्त होकर जीने वाला समाज। समय प्रवाह के साथ-साथ आधुनिकता ने समाज में कई समस्याएँ भी उत्पन्न की हैं और आधुनिकता अपने निर्धारित लक्ष्य तक नहीं पहुंच पाई है। आधुनिकता का अर्थ और परिभाषा देते हुए आधुनिकता के उद्भव और उसके महत्व को रूपायित किया गया है। मोटे तौर पर आधुनिकता एक निश्चित विचारधारा को व्याख्यायित करने वाला पद है जिसमें पुराने के विरुद्ध नए का संघर्ष है। विज्ञान,तर्क एवं बुद्धि इसके प्रमुख हथियार हैं। वैज्ञानिक आविष्कार और औद्योगिक क्रांति के परिणाम स्वरुप मानव जीवन में आया हुआ परिवर्तन आधुनिकता का परिचय कराता है। मानव की जरूरतों को पूर्ण करना आधुनिकता का लक्ष्य है। आधुनिकता और आधुनिक बोध का गहरा संबंध है। वर्तमान समय के साथ जीते हुए जब व्यक्ति को समसामयिक स्थितियों का बोध हो जाता है तब वह आधुनिकता और आधुनिक बोध के साथ अपना संबंध स्थापित कर लेता है।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं –

1. परिपाटी के पट-परिवर्तन का नाम आधुनिकता है।
2. आधुनिकता न तो समय से बंधी होती है, और न मूल्य से; बल्कि इसका संबंध जड़ता के स्थान पर गत्यात्मकता को अंगीकार करने से है।
3. हिंदी साहित्य के संदर्भ में आधुनिक बोध का अभिप्राय मध्यकालीन बोध से मुक्त होने से है। अर्थात मानव विरोधी जड़ रूढ़ियों और भाग्यवाद से मुक्ति।
4. भारत का नवजागरण आंदोलन और स्वतंत्रता संघर्ष मूलतः आधुनिक बोध के परिणाम हैं।

1.6 शब्द संपदा

1. अति आवश्यक = बहुत जरूरी
2. अति व्याप्ति = सीमा या नियम से अधिक
3. अभिप्राय = अर्थ
4. अवतीर्ण होना = प्रकट होना

5. ढकोसला = दिखावा

6. पारिभाषिक = विशेष परिभाषा में बंधी हुई

7. रूढ़ियाँ = पुरानी परंपराएँ

8. समसामयिकता = समय के अनुसार

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500शब्दों में दीजिए।

1. आधुनिकता के उद्भव और विकास को रेखांकित कीजिए।
2. आधुनिकता की विभिन्न परिभाषाएँ देते हुए उसके तत्वों की चर्चा कीजिए।
3. परंपरा और आधुनिकता का संबंध दर्शाइए।
4. आधुनिकता का महत्व बताते हुए साहित्य में उसका स्थान निर्धारित कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200शब्दों में दीजिए।

1. मानव और समाज पर कविता का क्या प्रभाव पड़ता है?
2. आधुनिकता की विशेषताएँ लिखिए।
3. आधुनिक बोध किसे कहते हैं? स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

आधुनिकता की दौड़ में हानि हो रही है- ( )

(1.अ) धर्म की (ब) मनुष्य की (स) संस्कृति और समाज की

2.________विश्वयुद्धों का निर्माण हुआ ( )

(अ)विज्ञान के कारण (ब) आधुनिकता के कारण (स) मध्य युग के कारण

3.मानव जीवन पर कुदरती आपत्तियों का खतरा मंडरा रहा है - ( )

(अ)आधुनिकता के कारण (ब)युद्ध के कारण (स) प्रकृति के सतत दोहन के कारण

4.उत्तरआधुनिकता का विकास हुआ - ( )

(अ) आधुनिकता के पश्चात (ब) आधुनिकीकरण के पश्चात (स) मध्य काल के पश्चात

II. रिक्त स्थानों की पूर्तिकीजिए -

1. परंपरा आधुनिकता को....... देती है।
2. साहित्य जीवन की.......... है।
3. आज जो आधुनिक है वह आने वाले कल में........... हो जाएगा।
4. साहित्य का केंद्र बिंदु......... है।
5. नवीनता के लिए .... अपेक्षित होती है ।

III. सुमेल कीजिए -

1. आधुनिक	(अ) आधुनिकता के तत्व
2. 1857	(आ) आधुनिकता के बाद की अवधि
3. गतिशीलता	(इ) इहलौकिक दृष्टिकोण
4. उत्तर आधुनिकता	(ई) प्रथम स्वाधीनता संग्राम

1.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता : गंगा प्रसाद विमल

2. हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास : रामकुमार वर्मा

3 .साहित्यिक निबंध : गणपति चंद्र गुप्त

4 .हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचन्द्र शुक्ल

5.आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण : रमेश कुंतल मेघ

6 .आधुनिकता की अवधारणा : निखिल उपाध्याय

7.हिंदी साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि : विनय कुमार पाठक

8. आधुनिक साहित्य का इतिहास : बच्चन सिंह

9. आधुनिकता के पहलू : विपिन कुमार अग्रवाल

इकाई 2 : भारतेंदुयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 मूल पाठ : भारतेंदुयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

2.3.1 भारतेंदुयुगीन परिस्थितियाँ

2.3.1.1 सामाजिक स्थिति

2.3.1.2 राजनीतिक स्थिति

2.3.1.3 आर्थिक स्थिति

2.3.1.4 शिक्षा

2.3.2 भारतेंदु युग के काव्य की प्रवृत्तियाँ

2.3.2.1 राष्ट्रीयता की भावना

2.3.2.2 सामाजिक चेतना

2.3.2.3 शृंगारिकता

2.3.2.4 भक्ति भावना

2.3.2.5 हास्य व्यंग्य की प्रधानता

2.3.2.6 ब्रजभाषा का प्रयोग

2.4 पाठ सार

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

2.6 शब्द संपदा

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

19 वीं शताब्दी के मध्य भाग से हिंदी साहित्य में कविता का एक नया दौर आरंभ हुआ। यह समय सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तनों का समय था। समाज सुधार आंदोलन, ईसाई मशीनरियों का धर्म प्रचार और छापाखाने का निर्माण कुछ ऐसी परिस्थितियाँ थीं जिनके कारण साहित्य जगत में भी उथल-पुथल मच गया। साहित्यकार समाज की उपज होता है। वह समाज में घटित अनेक घटनाओं या परिवर्तनों से प्रभावित होता है। ऐसी परिस्थितियों में उसका साहित्य भी प्रभावित होगा। अन्य क्षेत्रों के साथ-साथ कविता के क्षेत्र में भी काफी परिवर्तन आया। कहने का आशय यह है कि जो कविता दरबारीपन से प्रभावित थी वही कविता 19 वीं सदी तक आते-आते बदल चुकी थी। भाषा के स्तर पर तो परिवर्तन आया ही, साथ ही विषय के स्तर पर काफी बदलाव नजर आने लगा। ब्रज और अवधि का स्थानापन्न खड़ीबोली ने किया। आम जनमानस के दुःख-दर्द को अभिव्यक्ति मिली।

भारतेंदु युगीन कविता की बात करते समय सर्वप्रथम भारतेंदु हरिश्चंद्र का नाम लेना आवश्यक है, क्योंकि आधुनिक युग के प्रथम उत्थान को भारतेंदु युग कहा जाता है। इससे उनके व्यक्तित्व और कृतित्व की महत्ता का अनुमान लगाया जा सकता है। भारतेंदुयुगीन रचनाकार या कहे भारतेंदु मंडल के कवियों में प्रताप नारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', ठाकुर जगमोहन सिंह, अम्बिकादत्त व्यास, राधाचरण गोस्वामी और सियारामशरण प्रमुख हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में भारतेंदु युगीन कविता से परिचित हो सकेंगे।
- भारतेंदु युग की काव्य प्रवृत्तियों से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु युग के काव्य के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- इस युग के कवियों और उनके रचनाओं से परिचित होंगे।
- भारतेंदु युग में बदलती हुई भाषा के रूप से परिचित हो सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : भारतेंदुयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

हिंदी साहित्य के इतिहास में आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल के बाद आधुनिक काल का आरंभ होता है। आधुनिक काल का आरंभ भारतेंदु युग के रूप में हुआ। इस युग में गद्य एवं पद्य पर विशेष रूप से बल दिया गया, क्योंकि इसके पूर्व के काल में काव्य को ब्रज और अवधि में लिखा गया था। परंतु भारतेंदु युग में काव्य की भाषा परिवर्तित होकर खड़ी बोली के रूप में विकसित होने लगी तथा गद्य के विविध रूप विकसित होने लगे। इसके साथ ही आधुनिक काल में राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में भी विविधता दिखाई देने लगी। इसी परिवर्तन को भारतेंदु जी ने हिंदी कविता को शृंगार से बाहर निकाल कर एक नवीन प्रवृत्तियों से संचालित करने का कार्य किया। हिंदी कविता राज दरबार से निकलकर जन साधारण के बीच आ गई।

2.3.1 भारतेंदुयुगीन परिस्थितियाँ

2.3.1.1 सामाजिक स्थिति

भारत में अंग्रेजों ने भारतीय समाज को अधिक प्रभावित किया। अंग्रेजों ने केवल भारत का शोषण ही नहीं किया, बल्कि अनेक वैज्ञानिक आविष्कार भी लाए थे। भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियों को नष्ट करने एवं दूर करने में काफी हद तक सफल भी हुए। जब भारतीय समाज सो रहा था, मोह में डूबा हुआ था, तब उनको जगाने का कार्य अंग्रेजों ने किया। भारतीयों में चेतना की झलक उठी और रामकृष्ण परमहंस, राजा राममोहन राय (ब्राह्मण समाज), दयानंद सरस्वती (आर्य समाज), विवेकानंद, महर्षि अरविंद जैसे समाज सुधारकों ने भारत में पुरातन से आ रही कुरीतियों के विरुद्ध क्रांति छेड़ी। छापाखाने के निर्माण ने इन सुधार आंदोलनों को और गतिशील बनाया।

भारतेंदु युग का काव्य देशप्रेम, देशभक्ति और समाज सुधार से ओतप्रोत था। स्वतंत्रता के बाद से भारतीय समाज में मूल रूप से चेतना उभरकर सामने आई। काव्य में मानव जीवन की संवेदनाएँ, सुख-दुख, पीड़ा, आक्रोश, यथार्थ, वर्ग और भेदभाव आदि आज सामाजिक स्थिति की ही देन है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युग के काव्य में क्या देखा जा सकता है?

2.3.1.2 राजनीतिक स्थिति

आधुनिक काल का आरंभ सन 1857 ई. से हुआ और आधुनिकता की शुरूआत एक शताब्दी पूर्व से हुई। आधुनिक काल के आरंभ में युद्धों का समय था जब राजा, महाराजा अपनी सेनाओं के साथ युद्ध करते और उनके दरबार में रहने वाले कवियों का बोलबाला था। परंतु बदलते हुए समय में कवियों को दरबार छोड़कर बाहर आना पड़ा और समाज से जुड़ी समस्याओं को अपनी कविता का माध्यम बनाया। क्योंकि यह समय युद्ध का समय था जब ईस्ट इंडिया कंपनी ने सिराजुद्दौला को युद्ध में हराया। सिराजुद्दौला की पराजय के बाद अंग्रेजों ने भारत पर अपना अधिकार जमा लिया। मुगल सम्राट शाह आलम भी पराजित हुआ। इसी तरह मराठा और सिख भी पारस्परिक मतभेदों के चलते अंग्रेज़ों के सामने खड़े न हो सके और उनकी शक्तियाँ कम हो गईं। साहित्य भी पहली बार मनुष्य के वृहत्तर सुख-दुख के साथ जुड़ा। इसी प्रकार भारतेंदु के समय में गद्य के माध्यम से जब आधुनिक काल में जीवन से जुड़ी समस्याओं की चिंगारियाँ या चेतना गद्य में दिखाई दे रही थी तब पद्य में नहीं थी। क्योंकि इस काल में भाषा का रूप ब्रज एवं अवधि था समाज में मनुष्य की संवेदनाओं की अभिव्यक्ति ब्रज भाषा में ही होती रही। इसके उपरांत जब परिवर्तन आया तो खड़ीबोली काव्य पर विशेष बल दिया गया।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु के समय देश में कैसी राजनैतिक परिस्थितियाँ थीं?

2.3.1.3 आर्थिक स्थिति

साहित्य में समय के परिवर्तन दिखाई देता है। जब हम हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल में प्रवेश करते हैं, तो उस समय की परिस्थितियों में काफी बदलाव देख सकते हैं। आर्थिक स्थिति चिंताजनक थी। अंग्रेज़ व्यापारी के रूप में भारत आए थे, किंतु उनकी नीतियों में लूट की नीति शामिल थी। इसकी शुरूआत ईस्ट इंडिया कंपनी से की गई थी। औद्योगिक गिरावट भारतीय जन साधारण को और भी गिराती चली गई। इस संबंध में भारतेंदु ने लिखा है कि-

“अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।

पै धन विदेश चलि जात, इहै अति ख्वारी॥”

इस युग में अकाल, कर और महँगाई इतनी बढ़ गई कि भारतीय उद्योग को बढ़ावा देने का प्रयास किया गया और साथ ही साथ अंग्रेजों को बहिष्कार करने के लिए लोगों में जागरूकता आई।

बोध प्रश्न

- अंग्रेजों की क्या नीति रही?

2.3.1.4 शिक्षा

ब्रिटिश राज्य की स्थापना के बाद भारत में आर्थिक परिस्थिति बहुत दयनीय बन गई। आर्थिक रूप से कुछ ऐसी नवीन समस्याएँ उत्पन्न हुईं, जिनसे जूझने के लिए नए-नए विचारों की आवश्यकता पड़ी। जैसे नई शिक्षा प्रणाली द्वारा ज्ञान-विज्ञान की उपलब्धि। उससे इस दिशा में बहुत सहायता मिली। परंतु 18 वीं शताब्दी के अंत में भारत को पाश्चात्य के ज्ञान-विज्ञान के संपर्क में आना पड़ा। लेकिन भारत के ज्ञान-विज्ञान से काफी भिन्नता थी। दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, गणित, औषधि-विज्ञान, धर्मशास्त्र और काव्यशास्त्र आदि में इसके मुकाबले कोई अन्य देश नहीं था। ब्रिटिश राज्य की स्थापना के पहले ईसाई मशीनरियों ने दक्षिण भारत में अपने धर्म प्रचार के काम में लगे हुए थे। प्लासी के युद्ध के बाद डेनिश मिशन कोलकाता आया। लेकिन उसका भी क्रिया-कलाप सीमित थे। उस संस्था का मुख्य उद्देश्य था ईसाई धर्म का प्रचार-प्रसार करना।

भारतेंदु युग में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थितियाँ बहुत अधिक ठीक नहीं थीं। साथ ही साथ अंग्रेज राजनीति के माध्यम से लोगों के मध्य विरोध की भावना उत्पन्न करने और उनको आर्थिक रूप से कमज़ोर कर अपनी नीति में सफल होने लगे थे। परंतु इस युग के कवियों ने अपनी कविता के माध्यम से समाज में जागरूकता पैदा की जो अंग्रेजों से मुक्ति दिलाने में काफी मददगार साबित हुई।

बोध प्रश्न

- डेनिश मिशन का क्या उद्देश्य था?

2.3.2 भारतेंदु युग के काव्य की प्रवृत्तियाँ

भारतेंदु युगीन कवियों ने अपने काव्य में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी पक्षों का वर्णन अपनी कविता में किया करते थे; क्योंकि भाव, भाषा, छंद, दुख-सुख आदि सभी प्रकार के विचारों से इस काल के साहित्यकारों ने अपनी भावना प्रकट की। इनके काव्य में राष्ट्रीयता की भावना, देश भक्ति के साथ-साथ राज भक्ति, सामाजिक चेतना, शृंगारिकता, भक्ति-भावना, प्रकृति चित्रण, हास्य व्यंग की प्रधानता और ब्रजभाषा का प्रयोग अनेक प्रवृत्तियों को देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युगीन काव्य की कुछ मुख्य प्रवृत्तियों का नाम बताइए।

2.3.2.1 राष्ट्रीयता की भावना

अंग्रेजों के अत्याचारों से पीड़ित भारतीय जनता में राष्ट्रीयता की भावना जगाने का प्रयास भारतेंदु युगीन कवियों ने किया। कविताओं के माध्यम से कवियों ने जनता को चेताया तथा उन्हें शोषण के विरुद्ध लड़ने हेतु प्रोत्साहित किया। उदाहरण के लिए राधाचरण गोस्वामी (हमारो उत्तम भारत देस), प्रेमघन (धन्य भूमि भारत सब रतननि की उपजावनि), राधा कृष्णदास (भारत बारहमासा) आदि प्रमुख हैं। भारतेंदु भी अंग्रेजों के शोषण को अपनी कविता में इस प्रकार अंकित किया है -

> "भीतर-भीतर सब रस चूसै, हंसी-हंसी के तन-मन-धन मूसै।
>
> जाहिर बातन में अति तेज़, क्यों सखि सज्जन! नहिं अँगरेज़।।"

भारतेंदु युग में देश भक्ति या देश प्रेम, राज भक्ति का मिश्रण मिलता है। अंग्रेजों ने जिस तरह से शासन व्यवस्था कर रहे थे, भीतर ही भीतर भारत को आर्थिक रूप से कमजोर कर रहे थे और शोषण भी जारी था। इसी संबंध में भारतेंदु 'भारत दुर्दशा' में लिखते हैं -

> "अंग्रेज राज सुख साज सजे सब भारी।
>
> पै धन बिदेश चलि जात, इहै अति ख्वारी।।"

इस तरह से हम कह सकते हैं कि राष्ट्रीयता का उदय भारतेंदु युग में हो चुका था।

बोध प्रश्न

- 'भारत दुर्दशा' किसकी रचना है?
- भारतेंदुयुगीन कविता में प्रमुख रूप से किस तरह प्रवृत्ति को देखा जा सकता है?

2.3.2.2 सामाजिक चेतना

हिंदी साहित्य के इतिहास में रीतिकाल के कवियों ने समाज की तरफ अपनी आँखें बंद कर ली थी। परंतु भारतेंदु युग में भारतेंदु और उनके समकालीन कवियों ने सामाजिक जीवन से जोड़कर कविता का आरंभ किया। उनके सुख-दुख, संवेदनाएँ, जागरूकता एवं आर्थिक स्थिति तथा अन्य सभी समस्याओं को लेकर भारतेंदु युग में सामाजिक चेतना से संबंधित काव्य लिखे गए थे। आर्य समाज एवं ब्रह्म समाज आदि सामाजिक आंदोलनों के प्रभाव से इस काल में एक नई सामाजिक चेतना का उदय हुआ। विधवा विवाह, स्त्री शिक्षा, जातिगत भेद-भाव का निवारण कविताओं में मुख्य रूप से मुखरित होने लगे। भारतेंदु 'भारत दुर्दशा' में सामाजिक चेतना का चित्र इस प्रकार अंकित करते हैं-

> "रोबहु सब मिली आबहु भारत भाई।
> हा-हा भारत दुर्दशा न देखी जाई।।"

इसी प्रकार भारतेंदु मंडल के रचनाकार बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने अपनी कविता में पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण करने वाले साहबों पर व्यंग्य करते हैं कि-

> "चूसहु चूरूट लाख पर लागत पान बिना मुंह सून।
> अच्छर चारि पढ़े अंगरेजी बन गए अफलातून।।"

प्रतापनारायण मिश्र बाल विधवाओं की समस्या को लेकर अपनी कविता में लिखते हैं-

> "कौन करेजो नहिं कसकत सुनि,
> विपति बाल विधवन की।"

राधाचरण गोस्वामी भारत की दुर्दशा पर अपनी चिंता इस प्रकार व्यक्त करते हैं-

> "मैं हाय-हाय दै धाय पुकारौं रोई।
> भारत की डूबी नाव उबारौ कोई।।"

कहा जा सकता है कि भारतेंदु हरिश्चंद्र आधुनिक काल में भारत की डूबती नैया को बचाने का कार्य राधाचरण गोस्वामी की कविता में जनचेतना की बात सामने आती है और जनता के बीच भारत के संदर्भ में या राष्ट्रीय भावना के संदर्भ में एक जागरूकता का परिचय कराती है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युग में सामाजिक चेतना का उदय कैसे हुआ?

2.3.2.3 शृंगारिकता

भारतेंदु हरिश्चंद्र के समकालीन कवियों ने भी रस को काव्य की आत्मा माना। प्रतापनारायण मिश्र के अलावा सभी मुख्य कवि अपनी रचनाओं में शृंगार का वर्णन कर रहे थे। रीतिकालीन कवियों ने जिस तरह से दरबारी कविताएँ लिखीं या कृष्ण कथा के संदर्भ में प्रेम और सौंदर्य का वर्णन किया उसी प्रकार राधाकृष्ण दास ने 'राम जानकी' कविता में शृंगार का वर्णन प्रचुर मात्रा में किया है। भारतेंदु और प्रेमघन की प्रारंभिक रचनाओं में विशेष रूप से शृंगारिकता को देखा जा सकता है। भारतेंदु ने प्रेम सरोवर, प्रेम माधुरी, प्रेम तरंग, प्रेम फुलवारी आदि में भक्ति शृंगार और विशुद्ध शृंगार दोनों का समावेश किया है। प्रेमघन की रचनाओं में देखा जाए तो 'युगल मंगल स्तोत्र' तथा 'वर्षा बिंदु' भी इसी प्रकार की रचनाएँ हैं। सौंदर्य, प्रेम और विरह का वर्णन दोनों ही कवियों ने भरपूर किया है। उदाहरण के लिए -

"आजु लौं न मिले तो कहा हम तो तुमरे सब भांति कहावैं।
मेरौ उराहनौ है कछु नाहिं सबै फल आपुने भाग को पावैं।।
जो हरिचंद भई सो भई अब प्रान चले चहैं तासो सुनावैं।
प्यारे जू है जग की यह रीति बिदा की समय समैं कंठ लगावैं।।"

"अब यों उर आवत है सजनी, मिली जाऊं गरे लगि के छतियाँ।
मन की करि भांति अनेकन औ मिलि कीजिए री रस की बतियाँ।।
हम हारि आरी करि कोटि उपाय, लिखी बहु नेह भरी पत्तियाँ।
जगमोहन मोहिनी मूरति के बिना कैसे कटें दुख की रतियाँ।।"

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युग के किन रचनाकारों ने शृंगारपरक रचनाएँ लिखीं?

2.3.2.4 भक्ति भावना

भारतेंदु जी को भक्ति भावना विरासत में मिली थी क्योंकि उनके पिताजी ने राम और कृष्ण भक्ति पर अनेक रचनाएँ लिखी थीं। इसी प्रकार से भारतेंदु की रचनाओं में भी भक्ति प्रमुख रूप से मुखरित होती है। भक्ति सर्वस्व, वैशाख महात्म्य एवं कार्तिक स्नान भारतेंदु की प्रमुख भक्तिपरक रचनाएँ हैं। भारतेंदु पुष्टिमार्गीय भक्त थे और वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित थे। इसलिए उनकी कविताओं में भक्ति भावना को देखा जा सकता है-

"मेरे तो साधु एक ही हैं जग नंदलला वृषभानु दुलारी।"

भक्ति भावना की जब बात आती है, तब हम मध्यकालीनता की तरफ पहुँच जाते हैं जहाँ पर संप्रदायों की बात की जाती है। भारतेंदु एक जगह पर लिखते हैं-

"सखा प्यारे कृष्ण के गुलाम राधारानी के।"

राधा और कृष्ण की मधुर छवि का अंकन उनके अनेक पदों में भी मिलता है। उदाहरण के लिए -

"नैन भरि देखी लेहु यह जोरी।

मनमोहन सुंदर नर नागर श्री वृषभानु किसोरी।

कहा कहूं छवि कहि नहिं आवै वह सांवर यह गोरी।"

भक्तिकाल के अंतर्गत संत कवियों की कविताओं में भी दिखाई देता है उसी प्रकार की भावना पंडित प्रतापनारायण मिश्र एवं राधाकृष्ण दास के काव्य में जिस प्रकार की भक्ति भावना का स्वरूप दिखाई देता है। संसार की नश्वरता और मोह माया के बंधन का उल्लेख भी इनकी रचनाओं में मिलता है। राधाकृष्ण दास की इन पंक्तियों को देखें-

"जो विषया संतन तजी ताहि मूढ़ लपटात।

कहा नर डारत वमन करि स्वान स्वाद सौं खात॥"

इसी प्रकार ईश्वर के प्रति दृढ़ विश्वास के साथ अपनी भावनाओं को भारतेंदु जी ने बड़ी दीनता के साथ व्यक्त करते हैं-

"उधारौ दीनबंधु महाराज

जैसे हैं तैसे तुमरे ही नहीं और सौ काज॥"

अंततः यह कह सकते हैं कि जिस प्रकार हिंदी साहित्य के भक्ति काल में भक्ति विद्यमान थी, ठीक उसी प्रकार से भारतेंदुयुगीन काव्य में भक्ति भावना मिलती है। ईश्वर से प्रार्थना, मोह माया का बंधन, संसार की नश्वरता का भी प्रयोग इनकी भक्ति में मिलता है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु किस प्रकार के भक्त थे?

2.3.2.5 हास्य व्यंग्य की प्रधानता

भारतेंदु युग में व्यंग्यात्मक कविताओं को प्रचुर मात्रा में लिखा गया। इस काल के सभी कवियों ने अंग्रेजी शासन, पश्चिमी सभ्यता, सामाजिक आडंबर, अंधविश्वास और रूढ़ियों आदि अनेक मुद्दों पर व्यंग्य किया है। उनकी व्यंग्योक्तियों को तीन वर्गों में बाँटा जा सकता है- पैरोडी, स्यापा और गाली। उदाहरण के लिए -

"मुँह जब लागै तब नहिं छूटे, जाति मान धन सब कुछ लूटे।

पागल करि मोहिं करे खराब, क्यों सखि सज्जन? नहीं शराब।।"

भारतेंदु ने नाटकों में व्यंग्योक्तियों के माध्यम से तत्कालीन परिस्थितियों का चित्रण किया है। 'अंधेर नगरी' में चूरन वाला कहता है-

"चूरन साहब लोग जो खाता।

सारा हिंद हजम कर जाता॥"

प्रतापनारायण मिश्र की कविताएँ हर गंगा, बुढ़ापा, उर्दू का स्यापा हास्य व्यंग्य की दृष्टि से बहुत प्रसिद्ध हैं। जनमानस में जागरूकता और आक्रोश भरना इस युग के कवियों का मुख्य लक्ष्य था। इसलिए इस युग की कविताओं में राष्ट्रीयता की भावना, सामाजिक चेतना, भक्ति भावना के साथ-साथ हास्यप्रद एवं व्यंग्य प्रधान रचनाएँ काफी प्रचुर मात्रा में लिखी गईं।

बोध प्रश्न

- व्यंग्योक्तियों को किन-किन वर्गों में बाँटा जा सकता है?

2.3.2.6 ब्रजभाषा का प्रयोग

भारतेंदु युग के अधिकतर कवियों ने ब्रज भाषा में ही काव्य रचना की क्योंकि काव्य के लिए ब्रज भाषा को ही उपयुक्त माना गया। इस युग के कवियों की भाषा पद्माकर एवं घनानंद जैसी गंभीर भाषा तो नहीं थी, लेकिन उसमें वही धारा एवं स्वाभाविकता विद्यमान थी। पंडित प्रतापनारायण मिश्र की ब्रज भाषा में कन्नौजी का असर और उर्दू शब्दों का उपयोग साफ झलकता है। भारतेंदु ने भी साफ-सुथरी ब्रज भाषा का प्रयोग किया था, परंतु उनके काव्य 'फूलों का गुच्छा' में उर्दू के पर्यायवाची शब्द बहुत अधिक मिलते हैं। यह भी कहा जाता है कि इस काल में कुछ रचनाकारों ने खड़ीबोली में भी अपनी कलम चलाई लेकिन कला एवं भाव की दृष्टि से ये कविताएँ उतनी प्रभावपूर्ण नहीं रहीं। भारतेंदु युग में समसामयिक विषयों पर भी कविताएँ लिखी गई थीं। कुछ रचनाएँ मात्र तुकबंदीयाँ प्रतीत होती थीं।

भारतेंदु युग के कवियों ने कविता को रीतिकाल के माहौल से निकालकर सामयिक समस्याओं से जोड़ दिया क्योंकि विदेशी शासकों के अत्याचारों का वर्णन भी उन्होंने किया। भारतेंदु के रूप में एक सबल साहित्यकार हिंदी साहित्य को प्राप्त हुआ। वे सच्चे अर्थों में आधुनिक काल के जनक कहे जा सकते हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से राष्ट्र और समाज को चेताया तथा अपने कर्तव्य को बखूबी अंजाम तक पहुँचाया।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु युग के कवियों ने कविता को किस माहौल से मुक्त किया?

2.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! अब तक आप समझ ही चुके होंगे कि भारतेंदुयुगीन काव्य की यह उपलब्धि रही कि वह दरबारीपन से निकल कर समाज और राष्ट्र को उद्बोधन देने वाली लोकहितकारी रही। इसकी पूर्ण परिणति आगे चल कर द्विवेदी युग में परिलक्षित हुई। भारतेंदुयुगीन कविता एक तरफ मध्यकालीन कविता से प्रभावित रही, तो दूसरी तरफ आधुनिक कविता के रूप में उसका बीजारोपण हो रहा था।

भारतेंदु युग में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक समस्याएँ अधिक थीं, क्योंकि यह समय युद्धों का समय था। अंग्रजों की दमनकारी नीतियों ने भारतीयों को अधीन कर रखा था। जब साहित्यिक भाषा का स्वरूप बदला तो जन-जन में आक्रोश और चेतना का भाव उत्पन्न हुआ। राष्ट्रीयता की भावना भी प्रबल होती गई।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. हिंदी साहित्य में आधुनिक काल के प्रथम उत्थान को भारतेंदु युग कहते हैं।
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र इस युग के जनक कहे जाते हैं।
3. इस युग के साहित्य में कुछ सीमा तक राजभक्ति और राष्ट्र भक्ति का द्वंद्व दिखाई देता है।
4. भारतेंदु युग में काव्य रीतिकालीन परिपाटी से मुक्त होकर आम जनता के सुख-दुख से जुड़ा।
5. भारतेंदु ने गद्य के लिए खड़ी बोली के बावजूद पद्य के लिए ब्रज भाषा को ही उपयुक्त माना।
6. इस काल के कवियों में सामाजिक चेतना एवं समाज सुधार की भावना प्रबल थी।

2.8 शब्द संपदा

1. अच्छर = अक्षर, वर्ण
2. अफलातून = प्राचीन यूनानी दार्शनिक प्लेटो
3. करेजो = साहस, निर्भयता
4. ख्वारी = दुर्गत, दुर्दशा, बेईज़्ज़ती
5. चुरूट = तंबाकू के चूरे से बनाई गई बत्ती, सिगार
6. धाय = दूध पिलाने वाली दाई
7. नेह = स्नेह, प्रीति, प्यार
8. बिदा = रवानगी, रुखसती, गौना
9. सज्जन = भला आदमी
10. सुखारी = सुखी, आनंदित

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु युगीन परिस्थितियों पर विचार कीजिए।
2. भारतेंदु युगीन मुख्य प्रवृत्तियों की चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु युगीन कविता में किस प्रकार की भक्ति भावना को देखा जा सकता है? उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
2. भारतेन्दु युगीन कविता में ब्रजभाषा प्रयोग पर प्रकाश डालिए।
3. 'भारतेंदु युग में व्यंग्यात्मक कविताओं को प्रचुर मात्रा में लिखा गया।' इस उक्ति को निरूपित कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. भारतेंदु का जन्म कब हुआ था? ( )

(अ) 1855 (आ) 1857 (इ) 1850 (ई) 1858

2. ब्रह्मसमाज के संस्थापक कौन थे? ( )

(अ) केशवचंद्र सेन (आ) राजा राममोहन राय (इ) विवेकानंद (ई) स्वामी दयानंद सरस्वती

3. 'उधारौ दीनबंधु महाराज' किसकी कविता है? ( )

(अ) प्रेमघन (आ) राधाकृष्णदास (इ) अम्बिकादत्त (ई) भारतेंदु हरिश्चंद्र

4. प्रतापनारायण मिश्र की रचना का नाम बताइए। ( )

(अ) भारत दुर्दशा (आ) हर गंगा (इ) वर्षा बिंदु (ई) प्रेम माधुरी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. उर्दू का स्यापा .... की दृष्टि से बहुत प्रसिद्ध हुई।
2. भारतेंदु .... संप्रदाय में आश्रित थे।
3. आर्य समाज के संस्थापक .... हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. भारतेंदु	(अ) आनंद अरुणोदय
2. अम्बिकादत्त	(आ) श्यामलता
3. प्रेमघन	(इ) हो हो होरी
4. प्रतापनारायण मिश्र	(ई) वर्षा विनोद
5. जगमोहन सिंह	(उ) मन की लहर

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : नगेंद्र
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल
3. हिंदी साहित्य का सरल इतिहास : विश्वनाथ त्रिपाठी
4. आधुनिक कवि : विश्वंभर मानव

इकाई 3 : द्विवेदीयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 मूल पाठ: द्विवेदीयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

3.3.1 द्विवेदी युग का आविर्भाव

3.3.2 द्विवेदी युग : नामकरण और समय सीमा

3.3.3 द्विवेदीयुगीन काव्य की प्रमुख परिस्थितियाँ

3.3.4 द्विवेदीयुगीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

3.3.5 द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय

3.4 पाठ सार

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

3.6 शब्द संपदा

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल एक तरह से जागरण का संदेश लेकर आया था। सन् 1857 ई. में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने नवजागरण का बिगुल बजा दिया। भारतीयों में देशभक्ति, स्वतंत्रता एवं राष्ट्रीय उत्थान की भावनाएँ जागृत होने लगीं। भारतेंदु युग के काव्य में इन प्रवृत्तियों का सूत्रपात हुआ। आगे चलकर द्विवेदी युग में इन्हें विकसित होने का मौका मिला। इस नवजागरण को जन-जन तक पहुँचाने में 'सरस्वती' पत्रिका का बहुत योगदान रहा। 'सरस्वती' का प्रकाशन 1900 ई. से प्रारंभ हुआ तथा 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इसका

संपादन भार संभाला। इस पत्रिका ने भाषा और साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में परिष्कार किया। द्विवेदी जी के 'सरस्वती' के संपादन का कार्य संभालने से लेकर अर्थात 1903 से लेकर 1918 तक के समय को 'द्विवेदी युग' की संज्ञा दी जाती है। द्विवेदी युग का यह नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के गरिमा मंडित व्यक्तित्व को केंद्र में रखकर किया गया है।

3.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- द्विवेदी युग के उद्भव और विकास से परिचित हो सकेंगे।
- द्विवेदी युगीन प्रमुख परिस्थितियों से अवगत हो सकेंगे।
- द्विवेदी युगीन काव्यधारा की प्रमुख प्रवृत्तियों को जान सकेंगे।
- द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- द्विवेदी युग के कवियों के वर्ण्य विषयों के बारे में जान सकेंगे।
- खड़ी बोली कविता के विकास में द्विवेदी युग के महत्व को समझ सकेंगे।

3.3 मूल पाठ : द्विवेदीयुगीन कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

3.3.1 द्विवेदी युग का आविर्भाव

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में साहित्य की प्रवृत्तियाँ भी बदलने लगीं। भक्ति और शृंगार प्रधान कविताओं, समस्यापूर्ति एवं नीरस तुकबंदियों से जनता का हृदय ऊब चुका था। काव्य की भाषा के रूप में ब्रजभाषा का आकर्षण भी खत्म होने लगा था। धीरे-धीरे ब्रजभाषा का स्थान खड़ीबोली हिंदी ने ले लिया।

प्रिय छात्रो! हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल एक तरह से जागरण का संदेश लेकर आया था। सन 1857 ई. में हुए प्रथम स्वतंत्रता संग्राम ने नवजागरण का ऐलान कर दिया था। परिणामस्वरूप भारतीय जनता में देशभक्ति, स्वतंत्रता, राष्ट्र का उत्थान, स्वदेशाभिमान की भावनाएँ जागृत होने लगीं। जहाँ भारतेंदु युग में जहाँ इन प्रवृत्तियों का सूत्रपात हुआ, वहीं द्विवेदी युग में ये पल्लवित एवं विकसित हुईं। नवजागरण की लहर को जन-जन तक पहुँचाने में 'सरस्वती' पत्रिका का अविस्मरणीय योगदान रहा।

आप जानते ही हैं कि ‘सरस्वती’ पत्रिका का प्रकाशन 1900 ई. से प्रारंभ हुआ। सन् 1903 ई. में महावीर प्रसाद द्विवेदी इस पत्रिका के संपादक बने। द्विवेदी जी ने इस पत्रिका के माध्यम से ऐसे साहित्य को प्रकाशित किया जिसने नवजागरण की लहर को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। द्विवेदी युग का नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व को केंद्र में रखकर किया गया है।

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने ‘सरस्वती’ पत्रिका के माध्यम से कवियों को पुराने विषयों जैसे नायिका भेद, शृंगार वर्णन आदि को छोड़कर नए विषयों पर कविता लिखने को प्रेरित किया। काव्य-भाषा के रूप में ब्रजभाषा को छोड़कर उन्होंने खड़ी बोली का प्रयोग करने का सुझाव दिया। इसके पीछे कारण यह था कि गद्य और पद्य दोनों की भाषा एक हो। द्विवेदी जी ने कवियों को उनके कर्तव्य का बोध कराया तथा यह बताने की कोशिश की कि काव्य में विषय-वस्तु, भाषा-शैली तथा छंद योजना आदि के द्वारा नवीनता लाई जा सकती है। उन्होंने भाषा संस्कार, व्याकरण की शुद्धि तथा हिंदी में विराम चिह्नों के प्रयोग पर भी बल दिया।

महावीर प्रसाद द्विवेदी का हिंदी साहित्य में बहुत ही अतुलनीय योगदान रहा। एक विचारक, दिशा निर्देशक तथा चिंतक के रूप में उन्होंने अतुलनीय भूमिका निभाई। उनकी प्रेरणा से हिंदी के अनेक कवि सामने आए जो उनके आदर्शों को लेकर आगे बढ़े। उन्होंने एक ओर तो भारतेंदुकालीन समस्यापूर्ति, रीति निरूपण तथा शृंगारिकता से हिंदी कविता को मुक्त किया, तथा दूसरी ओर खड़ीबोली को कविता की भाषा बना दिया।

द्विवेदी युग में भाषा के साथ-साथ छंदों में भी परिवर्तन देखा गया। अब कवि संस्कृत के वर्ण वृत्तों का प्रयोग करने लगे। ‘सरस्वती’ पत्रिका ने भाषा और साहित्य दोनों में अपना योगदान दिया। खड़ी बोली का विकास तो इस युग की सबसे महत्वपूर्ण देन है। खड़ी बोली को परिमार्जित करने तथा उसे व्याकरणिक शुद्धता प्रदान करने में ‘सरस्वती’ पत्रिका का बहुत अधिक योगदान रहा है। द्विवेदी जी के भाषा विषयक योगदान पर टिप्पणी करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है कि “खड़ी बोली के पद्य विधान पर द्विवेदी जी का पूरा-पूरा असर पड़ा। बहुत से कवियों की भाषा शिथिल और अव्यवस्थित होती थी। द्विवेदी जी ऐसे कवियों की भेजी हुई कविताओं की भाषा दुरुस्त करके ‘सरस्वती’ में छापा करते थे। इस प्रकार कवियों की भाषा साफ होती गई और द्विवेदी जी के अनुकरण में अन्य लेखक भी शुद्ध भाषा लिखने लगे।”

द्विवेदी जी की प्रेरणा से अनेक कवियों ने नए-नए विषयों पर कविताएँ लिखीं, जिनका प्रभाव समाज पर भी पड़ा।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से प्रेरणा लेकर आगे बढ़ने वाले अनेक कवि इस युग में हुए। जैसे मैथिलीशरण गुप्त, गोपालशरण सिंह, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' तथा लोचनप्रसाद पांडेय आदि। इनके अलावा कुछ कवि ऐसे भी इस युग में हुए जो पहले ब्रजभाषा में कविता कर रहे थे तथा उनकी कविता का विषय भी प्राचीन हुआ करता था। ऐसे कवियों ने भी 'सरस्वती' पत्रिका और द्विवेदी जी के नवीन विचारों से प्रभावित होकर अपनी कविता में नवीनता का समावेश किया। इससे खड़ी बोली में कविता लिखने को प्रोत्साहन मिला। ऐसे कवियों में मुख्य हैं अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', श्रीधर पाठक, नाथूराम शर्मा 'शंकर' आदि। इन कवियों की कविताओं में नवजागरण, राष्ट्रीयता और स्वदेशानुराग जैसे गुण पाए जाते हैं।

बोध प्रश्न

- महावीर प्रसाद द्विवेदी काव्य-भाषा के रूप में खड़ी बोली का प्रयोग क्यों करना चाहते थे?

3.2.2 द्विवेदी युग : नामकरण और समय सीमा

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इसे युग को द्वितीय उत्थान कहा है। वे लिखते हैं कि "इस द्वितीय उत्थान के आरंभ काल में हम पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी को ही पद्य रचना की एक प्रणाली के प्रवर्तक के रूप में पाते हैं। गद्य पर जो शुभ प्रभाव द्विवेदी जी का पड़ा है उसका उल्लेख गद्य के प्रकरण में हो चुका है।" इससे स्पष्ट हो जाता है कि इस युग के गद्य-पद्य दोनों विधाओं में द्विवेदी जी का प्रमुख स्थान था। वस्तुतः शुक्ल जी आधुनिक काल का विभाजन प्रकरण तथा उत्थानों के आधार पर किया है। डॉ. नगेंद्र ने इस काल खंड का नया नाम 'जागरण-सुधार' देना चाहकर भी 'द्वितीय युग' कहना यही उचित माना। नगेंद्र द्वारा संपादित पुस्तक 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में भी द्विवेदी युग के नीचे लघु कोष्ठक के मध्य (जागरण सुधार काल) भी लिखा हुआ है। अतः इस काल खंड के पथ-प्रदर्शक, विचारक और सर्वस्वीकृत साहित्यकार आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर इसका नाम 'द्विवेदी युग' रखा गया है। अतः इस काल खंड का सर्वमान्य नाम 'द्विवेदी युग' है।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी युग के पथ-प्रदर्शक कौन हैं?

3.2.3 द्विवेदी युगीन काव्य की प्रमुख परिस्थितियाँ

पहले के तीनों युगों की अपेक्षा आधुनिक युग कई कारणों से भिन्न है। हम देखते हैं कि आधुनिक काल में आकर कविता की भाषा खड़ी बोली बन गई। आधुनिक काल में आकर पद्य के साथ-साथ गद्य के विभिन्न रूपों का भी विकास हुआ। द्विवेदी युग तक आते-आते भिन्न-भिन्न विषयों पर कविताएँ लिखी जाने लगीं। जनता में देशव्यापी जागरण का संदेश फैलाना इस समय के साहित्यकारों का लक्ष्य रहा। इस समय के साहित्य पर स्वाभाविक तौर पर तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा साहित्यिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा। अन्य विधाओं के समान हिंदी कविता का भी विकास इन बदली हुई परिस्थितियों के आलोक में हुआ। द्विवेदी युग की कविता उस समय की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं साहित्यिक परिस्थितियों से प्रभावित है।

राजनीतिक परिस्थितियाँ

भारतेंदु युग में ही राष्ट्रीय चेतना का विकास हो चुका था, लेकिन उस चेतना में वह उमंग नहीं थी जो द्विवेदी युग में आरंभ हुई। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने पर लोगों को पश्चिम की विचारधारा का पता चला। इससे नवजागरण की लहर शुरू हुई। परिणाम स्वरूप राजनैतिक क्षेत्र में क्रांति फाइल गई। 1899 से 1900 के बीच अकाल पड़ने के कारण देश की परिस्थितियाँ बदलने लगीं। 1905 में घटित बंग भंग के कारण जन आंदोलन का मार्ग प्रशस्त हुआ। इतना ही नहीं प्रवास संबंधी बिल (1907), सभा बंदी कानून (1908) और प्रेस एक्ट (1908) के कारण जनता का आक्रोश बढ़ने लगा। 'युगांतर' और 'संध्या' पत्रिकाओं के माध्यम से जागरण को विस्तार दिया जा रहा था और 'वंदेमातरम' के नारे द्वारा जनता के अंदर जोश तथा उमंग को बुलंद किया जा रहा था। 'वंदेमातरम' शब्द पर नियंत्रण लगाकर जनता की आवाज को बंद करने का भी षड्यंत्र रचा गया था। 1914-1918 के बीच प्रथम विश्व युद्ध हुआ। इसका प्रभाव भी जनता पर पड़ा। होमरूल लीग की स्थापना, रौलट एक्ट के विरुद्ध गांधी जी सत्याग्रह, जलियाँवाला बाग नरसंहार आदि का प्रभाव जनता पर पड़ा। कहने का आशय है कि 1900-1918 के बीच घटित राजनैतिक घटनाओं का प्रभाव साहित्य पर भी पड़ा।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी युग में किस तरह की राजनैतिक परिस्थितियाँ थीं?

सामाजिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ

द्विवेदी युग में सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में भी परिवर्तन हुआ। यह उस समय के समाज सुधार आंदोलनों के कारण हुआ। इस समय कई सुधारवादी आंदोलन हुए जो समाज में व्याप्त बुराइयों और अंधविश्वासों को दूर करके जनता में सांस्कृतिक जागरण पैदा करने के लक्ष्य में हुए थै। ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन, थियोसफिकल सोसाइटी आदि के द्वारा नए भारतीय समाज के निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई। जाति प्रथा, सती प्रथा, पर्दा प्रथा जैसी कुप्रथाओं का विरोध हुआ तथा विधवा विवाह, स्त्री शिक्षा, स्त्री को पुरुष के बराबर का अधिकार आदि विषयों पर इस संस्थाओं ने बहुत जोर दिया। अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली के प्रसार में भी इन संस्थाओं ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया। इन संस्थाओं ने धार्मिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में बहुत अधिक प्रगति की।

आर्थिक परिस्थितियाँ

अंग्रेजों ने भारत को अपना बाज़ार बनाने के लिए यहाँ के कुटीर धंधों को समाप्त किया। जमींदारी प्रथा लागू कर दी गई थी। खेत को व्यक्तिगत संपत्ति बना दिया गया। कृषि का उत्पाध जो पहले केवल गाँवों तक सीमित था, बाज़ारों में जाने लगा। महँगाई, अकाल, टैक्स आदि से गरीबी बढ़ती गई। परिणाम स्वरूप उस समय के साहित्य में गरीबी की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी थी।

साहित्यिक परिस्थितियाँ

आधुनिक काल में साहित्य जनसाधारण के लिए लिखा जाने लगा। इस युग में घटित राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक नवजागरण से प्रेरणा पाकर भारतेंदु हरिश्चंद्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त आदि साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से लोगों में नई चेतना जगाने की कोशिश की। गद्य और पद्य दोनों के लिए खड़ी बोली का प्रयोग इस युग की

साहित्यिक विशेषता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि आधुनिक कविता इन बदली हुई परिस्थितियों की उपज है।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी युग में कौन कौन से सुधारवादी आंदोलन चलाए गए?

3.2.4 द्विवेदी युगीन काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

द्विवेदी युगीन साहित्य समाजोन्मुखी साहित्य है, किंतु व्यक्ति की भी पूर्णतः उपेक्षा नहीं करता। इस युग के सभी साहित्यकारों को आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली में काव्य रचना करने के लिए प्रेरित किया। इस काल की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रभाव युगीन साहित्य पर भी पड़ा। इस युग की कुछ प्रमुख प्रवृत्तियाँ निम्न प्रकार से हैं-

देशप्रेम की भावना

द्विवेदी युग के कवियों ने आम जनता के हृदय में राष्ट्रप्रेम को जगाया। कवियों ने स्वतंत्रता के प्रति जनमानस को जागरूक किया। इस युग के रचनाकारों का राष्ट्रप्रेम समस्याओं के कारणों पर विचार करने के साथ-साथ उनके समाधान ढूँढने का भी प्रयास करता है। मैथिलीशरण गुप्त की रचना 'भारत भारती' को राष्ट्रप्रेम का उत्कृष्ट उदाहरण कहा जा सकता है। 'भारत भारती' के कारण ही मैथिलीशरण गुप्त को 'राष्ट्रकवि' कहा गया। प्रभात फेरियों, राष्ट्रीय आंदोलनों, शिक्षा संस्थानों, प्रातःकालीन प्रार्थनाओं में 'भारत भारती' के पद गाँवों-नगरों में गाए जाने लगे।

सामाजिक समस्याओं का चित्रण

द्विवेदी युग के कवियों ने सामाजिक समस्याओं, जैसे दहेज प्रथा, नारी उत्पीड़न, छुआछूत, बाल विवाह आदि को कविता का विषय बनाया। इस काव्यधारा में उपेक्षित नारियों को कविता में स्थान दिया गया। मैथिलीशरण गुप्त ने 'यशोधरा' में गौतम बुद्ध की पत्नी, 'साकेत' में उर्मिला, 'विष्णुप्रिया' में चैतन्य महाप्रभु की पत्नी के दुख-दर्द को अभिव्यक्त किया है। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने 'वैदेही वनवास' और 'प्रियप्रवास' के माध्यम से सीता और राधा के चरित्रों को आधुनिक संदर्भ में नया रूप प्रदान किया। यह युग इसी कारण से सुधारवादी युग कहालाता है।

द्विवेदी युग में सामान्यतः मानव-मात्र के सुख-दुःख का बहुत ही सहज एवं सजीव चित्रण किया गया है। पहले के काव्य में ईश्वर, अवतार, राजा, सामंत, योद्धा तथा नायिकाओं को केंद्रीय स्थान मिलता था। द्विवेदी युग में सामान्य मानव को यह स्थान मिला। इस काल की कविताओं में दीन हीन कृषक तथा विधवा के दुख का चित्रण किया गया है। अशिक्षित नारियों की दशा का भी वर्णन इस युग के काव्य में मिलता है। साथ ही, उच्च जातियों द्वारा निम्न जातियों के प्रति किए गए अन्याय को कविताओं का विषय बनाया गया।

नैतिकता एवं आदर्शवाद

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी नैतिकता एवं आदर्श के पुजारी माने जाते हैं। द्विवेदी युगीन काव्य आदर्शवादी एवं नीति पर आधारित काव्य है। इस युग के साहित्य में शृंगारिकता दिखाई नहीं पड़ती। हरिऔध कृत 'प्रियप्रवास', मैथिलीशरण गुप्त कृत 'साकेत', 'रंग में भंग', 'जयद्रथ वध' आदि आदर्शवादी कृतियाँ हैं। रीतिकाल में राधा-कृष्ण शृंगार के आलंबन हैं, जबकि द्विवेदी युग की राधा जगत में सरोकार रखने वाली तथा समाज सेविका के रूप में दिखाई देती है।

वर्ण्य विषय का विस्तार

द्विवेदी युग में वर्ण्य विषय का बहुत अधिक विस्तार देखा गया। इसमें जीवन तथा जगत के सभी दृश्य और पदार्थ कविता के विषय बनाए गए। छोटे-छोटे विषयों पर कविता लिखी जाने लगी। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'कवि कर्तव्य' निबंध में लिखा था- "चींटी से लेकर हाथी पर्यंत पशु, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यंत, बिंदु से लेकर समुद्र पर्यंत जल, अनंत आकाश, अनंत पर्वत - सभी पर कविता हो सकती है।" इस युग के विषय वैविध्य का अनुमान कुछ तत्कालीन कविताओं के शीर्षकों से सहज ही लगाया जा सकता है। जैसे परोपकार, मुरली, कृषक, सत्य, लड़कपन, ग्रंथ-गुण-गान, ईर्ष्या, निद्रा, कलियुगी साधु, पुस्तकें, प्रेम, ब्रह्मचर्य, हिंदी की अपील, बालक, हिंदी-साहित्य सम्मेलन, मूढ़ मानव, मेंहदी, नेकटाई, मनोव्यथा, कामना, विद्या, कुलीनता, पौरुष, शिशु-स्नेह, सुखमय जीवन, भारतीय छात्रों से नम्र निवेदन, लक्ष्मी-लीला, सपूत, ग्राम गौरव, सज्जनों का स्वभाव, समालोचक-लक्षण, दरिद्र विद्यार्थी। इस विषय विस्तार का एक परिणाम यह हुआ कि कविता अभिधा प्रधान वर्णनों से बाधित और इतिवृत्तात्मक बनने लगी। यही इतिवृत्तात्मकता ही द्विवेदी युग की बड़ी सीमा है।

हास्य-व्यंग्य

द्विवेदी युग में हास्य-व्यंग्य से परिपूर्ण काव्य बहुत कम लिखे गए। भारतेंदु युग जैसी ज़िंदादिली, चुहलबाजी और फक्कड़पन इस युग के कविता में नहीं पाई जाती। इस युग के साहित्य में सामाजिक कुरीतियाँ, धर्माडंबर, राजनीतिक गिरावट तथा व्यभिचार आदि को हास्य-व्यंग्य का लक्ष्य बनाया गया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरगौ नरक ठेकाना नाहिं' में गाँव को छोड़कर शहर जाने वाले और विदेशी सभ्यता का आँख मूँदकर अनुकरण करने वाले लोगों पर व्यंग्य किया। इस युग के सबसे सशक्त व्यंग्यकार बालमुकुंद गुप्त माने जाते हैं। इन्होंने लार्ड कर्ज़न को आलंबन बनाकर हास्य-व्यंग्य कविताएँ रचीं। नाथूराम शर्मा शंकर, ईश्वरी प्रसाद शर्मा तथा जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी की कविताओं में भी हास्य-व्यंग्य दिखाई देता है।

बोध प्रश्न

- द्विवेदी युग 'सुधारवादी युग' क्यों कहलाता है?
- द्विवेदी युग की कविताओं की कुछ प्रवृत्तियों के नाम बताइए।

3.2.5 द्विवेदी युग के प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय

द्विवेदी मंडल के कवियों में मैथिलीशरण गुप्त, गयाप्रसाद शुक्ल 'स्नेही', गोपालशरण सिंह, लोचन प्रसाद पांडेय और महावीर प्रसाद द्विवेदी आते हैं। उस समय बहुत सारे ऐसे कवि जो ब्रजभाषा में कविता लिख रहे थे तथा उनकी विषय वस्तु एवं शैली भी परंपरागत थी, वैसे कवियों ने भी द्विवेदी जी एवं 'सरस्वती' पत्रिका से प्रभावित होकर खड़ी बोली तथा नवीन विषयों पर कविता लिखने लगे। इन कवियों में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', श्रीधर पाठक, नाथूराम शर्मा 'शंकर' और राय देवी प्रसाद पूर्ण आदि प्रमुख हैं।

श्रीधर पाठक (1857 ई.-1928 ई.)

श्रीधर पाठक खड़ीबोली के प्रथम कवि हैं। पहले वे ब्रजभाषा में कविता करते थे। लेकिन महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा 'सरस्वती' का संपादन संभालने से पूर्व ही इन्होंने खड़ीबोली में कविता लिखकर अपनी स्वच्छंद वृत्ति का परिचय दे दिया था। इनकी कविताओं का मुख्य विषय

देशप्रेम, समाज सुधार तथा प्रकृति चित्रण है। एक तरफ इन्होंने 'भारतोत्थान', 'भारत प्रशंसा' आदि देशभक्तिपूर्ण कविताएँ लिखी तो दूसरी ओर उनकी 'जार्ज वंदना' जैसी कविताओं में राजभक्ति भी दिखाई देती है। जैसे 'बाल विधवा' में विधवाओं की दशा का वर्णन किया गया है। इन्हें प्रकृति चित्रण वाली कविताओं में अधिक सफता प्राप्त हुई। 1900 में उन्होंने 'गुणवंत हेमंत' नाम की कविता लिखी। इसमें प्रकृति का बहुत ही वास्तविक रूप से वर्णन किया गया है। इसमें ज्वार, बाजरा, खरीफ, रबी, सौंफ, पालक आदि का वर्णन किया गया है। उन्हें हिंदी कविता में स्वच्छंदतावादी धारा के प्रथम उत्थान का कवि माना जाता है।

पाठक जी कुशल अनुवादक भी थे। उन्होंने गोल्डस्मिथ की तीन रचनाओं का अनुवाद किया है - जैसे 'हरमिट' का 'एकांतवासी योगी' नाम से तथा 'डेजर्टेड विलेज' का 'ऊजड़ ग्राम' नाम से तथा 'ट्रेवलर' का 'श्रांत पथिक' नाम से। इनकी मौलिक कृतियों में 'वनाष्टक', 'कश्मीर सुषमा' (1904) और 'भारतगीत' (1928) आदि विशेष उल्लेखनीय है। 'आराध्य शोकांजलि' नामक शोक गीत उन्होंने 1906 ई. में अपने पिता की मृत्यु पर लिखा था।

श्रीधर पाठक ने छंदों को नए ढाँचे में ढाला। 'एकांतवासी योगी' की रचना खड़ीबोली में लावणी या ख्याल के ढंग पर की गई है। इसमें खड़ीबोली कविता के लिए रोला छंद की उपयुक्तता दिखाई गई है। यही नहीं उन्होंने सवैया छंद में भी खड़ी बोली का मधुरता के साथ प्रयोग करके दिखाया।

बोध प्रश्न

- श्रीधर पाठक की कविताओं का मुख्य विषय क्या था?

महावीर प्रसाद द्विवेदी (1864 ई.-1903 ई.)

द्विवेदी युग के प्रवर्तक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का जन्म रायबरेली के दौलतपुर नामक गाँव में 1864 ई. में हुआ। 1903 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक बने तथा 1920 तक इसी पद पर रहे। उन्होंने गद्य तथा पद्य दोनों तरह की रचनाएँ की हैं। इनकी दोनों तरह की रचनाओं की कुल संख्या लगभग 80 हैं। भारतेंदु युग में गद्य की भाषा के रूप में खड़ी बोली को अपनाया जा चुका था, लेकिन उसे काव्यभाषा के रूप में द्विवेदीजी ने ही स्वीकृति दिलाई। 'सरस्वती' के संपादक के रूप में इन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के उत्थान के लिए जो कार्य किया, उसे कभी भूला नहीं जा सकता। इनके प्रोत्साहन और प्रयास से कवियों और लेखकों की

एक पीढ़ी का निर्माण हुआ। खड़ी बोली को परिष्कार तथा स्थिरता प्रदान करने वालों में द्विवेदी जी का नाम अग्रगण्य है। ये कवि, आलोचक, निबंधकार, अनुवादक तथा संपादकाचार्य थे। काव्यमंजूषा, सुमन, कान्यकुब्ज, अबला विलाप, गंगालहरी, ऋतु तरंगिणी, कुमारसंभवसार (अनूदित) आदि द्विवेदी जी की मुख्य रचनाएँ हैं। इनकी कविता की भाषा सहज, सरल तथा प्रायः उपदेशपूर्ण होती थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने भाषा के प्रति समन्वयकारी दृष्टि अपनाई, जिससे खड़ी बोली समृद्ध हो सकी। उन्होंने आगरा सम्मेलन में साहित्यकारों को संबोधित करते हुए कहा था कि "जो अपने आपको ब्रज क्षेत्र का मानते हों, वे ब्रज भाषा का प्रयोग कर सकते हैं; परंतु जो अपना जुड़ाव अखंड भारत से मानते हों, उनकी भाषा निश्चिततः खड़ी बोली होनी चाहिए।" उन्होंने रीतिकाल के गिने चुने विषयों के बंधन से कविता को मुक्त करते हुए कहा कि "चींटी से लेकर हाथी पर्यंत जीव, रंक से लेकर राजा पर्यंत, बिंदु से लेकर सिंधु पर्यंत जल, अनंत आकाश, अनंत पृथ्वी, अनंत पर्वत सभी काव्य के विषय हो सकते है।"

यद्यपि द्विवेदी जी ने अनेक स्थानों पर तत्सम प्रधान भाषा का प्रयोग किया है, लेकिन वे आम एवं सरल शब्दावली के प्रयोग में भी सिद्धहस्त थे। जैसे-

तुम्हीं अन्नदाता भारत के सचमुच बैलराज महाराज।
बिना तुम्हारे हो जाते हम दाना-दाना को मोहताज।।
तुम्हें षंड कर देते हैं जो महा निर्दयी जन सिरताज
धिक उनको, उन पर हँसता है, बुरी तरह, यह सकल समाज

वस्तुतः आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का हिंदी साहित्य में योगदान एक विचारक तथा दिशा निर्देशक के रूप में जाना जाता है। उनकी विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए इस युग के कवियों ने एक नवीन काव्यधारा का श्रीगणेश किया तथा खड़ी बोली को काव्य की भाषा बनाया। भाषा के इस नए रूप के प्रयोग के लिए द्विवेदी जी का नाम हमेशा हिंदी साहित्य में याद किया जाएगा।

बोध प्रश्न

- कविता की भाषा के बारे में महावीर प्रसाद द्विवेदी की क्या धारणा थी?
- कविता की विषयवस्तु के बारे में महावीर प्रसाद द्विवेदी ने क्या कहा?

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (1865 ई. - 1947 ई.)

हरिऔध जी द्विवेदी युग के प्रख्यात कवि होने के साथ-साथ उपन्यासकार, आलोचक एवं इतिहासकार भी थे। उन्हें 'खड़ी बोली के प्रथम महाकवि' होने का गौरव प्राप्त है। श्रीधर पाठक के बाद हरिऔध जी ही हैं जिन्होंने खड़ी बोली में सरस व मधुर रचनाएँ कीं। उनका जन्म निजामाबाद, जिला आजमगढ़, में सन् 1865 ई. में हुआ। हरिऔध जी ने ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों ही रचनाएँ की। इन्हें उर्दू, फारसी एवं संस्कृत तीनों भाषाओं का ज्ञान था। उनकी मुख्य रचनाएँ हैं - प्रियप्रवास (1914), पद्मप्रसून (1925), चुभते चैपदे, चैखे चैपदे (1932), बोलचाल, रसकलश तथा वैदेही वनवास (1940)।

हरिऔध जी ने ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों में रचनाएँ की हैं। उन्होंने 'रसकलश' की रचना ब्रजभाषा में की, जबकि उनके द्वारा रचित 'प्रियप्रवास' खड़ी बोली का 'पहला महाकाव्य' है। यह उनकी स्वायत्त रचना है। 'प्रियप्रवास' में राधा और कृष्ण को सामान्य नायक-नायिका के स्तर से ऊपर उठाकर विश्वसेवी तथा विश्वप्रेमी के रूप में चित्रित किया है। हरिऔध जी ने इसमें अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। 'प्रियप्रवास' की राधा को केवल एक विरहिणी के जैसा ही नहीं दिखाया गया है बल्कि वह लोक व समाज सेविका की भूमिका भी निभाती है। इसमें कृष्ण को जननायक के रूप में दिखाया गया है। 'वैदेही वनवास' भी उनका एक श्रेष्ठ महाकाव्य है। इसका कथानक अपेक्षाकृत छोटा है, इस कारण इसमें राम का शक्ति, सौंदर्य और शील समन्वित चरित्र नहीं उभर सका है, फिर भी इसका ऐतिहासिक महत्व है।

हरिऔध के काव्य में एक ओर सरल तथा प्रांजल हिंदी का अलंकार रहित सौंदर्य है, तो दूसरी ओर संस्कृत के अलंकारों से युक्त पदावली भी पाई जाती है। इनकी रचनाओं में कहीं-कहीं मुहावरों और बोलचाल के शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग हुआ है, तो दूसरी जगह वैसे शब्दों को छोड़ दिया गया है। द्विवेदी युग की भाषा में जो कर्कशता थी, उसमें हरिऔध जी ने सरसता दिखाई। अतः कहा जा सकता है कि खड़ी बोली को काव्य के उपयुक्त बनाने में हरिऔध जी का मुख्य हाथ है। इन्होंने दोहा, कवित्त, सवैया आदि के साथ ही संस्कृत के वर्णवृत्तों में काव्य रचना की है और इनको सभी में समान रूप से सफलता मिली है। इन्हें 'कवि सम्राट' के रूप में भी

जाना जाता है। 'प्रियाप्रवास' पर इन्हें हिंदी का उस काल का सर्वोत्तम पुरस्कार 'मंगलप्रसाद पारितोषिक' प्रदान किया गया था। इनकी काव्यशैली बड़ी ही भावपूर्ण है। जैसे-

प्रिय पति, वह मेरा प्राणप्यारा कहाँ है?
दुख-जलनिधि डूबी का सहारा कहाँ है?
लख मुख जिसका मैं आज लौ जो सकी हूँ,
वह हृदय हमारा नैन-तारा कहाँ है?
पल-पल जिसके मैं पंथ को देखती थी,
निशिदिन जिसके ही ध्यान में भी बिताती,
उर पर जिसके है सोहती मुक्तमाला,
वह नवनलिनी से नैनवाला कहाँ है?

बोध प्रश्न

- अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' की सर्वोत्तम रचना कौन सी है?
- 'प्रियप्रवास' की क्या विशेषताएँ हैं?

मैथिलीशरण गुप्त (1886 ई. - 1964 ई.)

मैथिलीशरण गुप्त, द्विवेदी युग के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इनका जन्म चिरगाँव, झांसी में सन् 1886 ई. में हुआ था। प्रारंभ में इनकी रचनाएँ कलकत्ता से निकलने वाले पत्र 'वैश्योपकारक' में छपती थीं। बाद में इनका परिचय महावीर प्रसाद द्विवेदी से हुआ और इनकी रचनाएँ 'सरस्वती' में प्रकाशित होने लगीं। द्विवेदी जी गुप्त जी के गुरु के समान थे। भारतीय संस्कृति के प्रवक्ता होने के साथ-साथ गुप्त जी आधुनिक भारत के राष्ट्रीय कवि भी थे। इनकी प्रायः सभी रचनाएँ राष्ट्रीयता से ओतप्रोत हैं। इनकी प्रथम पुस्तक ' रंग में भंग' 1909 ई. प्रकाशित हुई किंतु इन्हें प्रसिद्धि 'भारत भारती' से मिली जिसका प्रकाशन 1912 ई. में हुआ। 'भारत भारती' ने जनता में देश के प्रति गर्व और गौरवपूर्ण भावनाएँ जागृत कीं। इसी से यह 'राष्ट्रकवि' के रूप में प्रसिद्ध हुए। यह उपाधि इन्हें राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने प्रदान की थी। देश

के स्वतंत्र होने पर गुप्त जी को राज्यसभा का सदस्य भी नियुक्त किया गया था। गुप्त जी मातृभूमि को केवल भूमिखंड नहीं, अपितु 'सगुण मूर्ति सर्वेश की' मानते हैं-

नीलांबर परिधान हरित पट पर सुंदर है।

सूर्य चंद्र युग मुकुट-मेखला रत्नाकर है।।

नदियाँ प्रेम प्रवाह फूल-तारे मंडल है।

बंदीजन खगवृंद शेष-फन सिंहासन है।।

हे मातृभूमि! तु सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की।।

मैथिलीशरण गुप्त रामभक्त कवि थे। मैथिलीशरण गुप्त कृत 'साकेत' को 'मानस' के पश्चात हिंदी में रामकाव्य का दूसरा स्तंभ माना जाता है। आधुनिक युग में प्रबंध काव्य की परंपरा को कायम रखने वालों में मैथिलीशरण गुप्त का नाम लिया जाता है। इन्होंने दो महाकाव्यों और उन्नीस खंडकाव्यों की रचना की। कविता और निजी जीवन में उन्होंने अंग्रेजी और संस्कृत को कभी अपने ऊपर हावी होने नहीं दिया और न हीं उसका कभी विरोध किया। साधारण बोलचाल की खड़ी बोली का इन्होंने प्रयोग किया। गुप्त जी ने 'तिलोत्तमा', 'चंद्रहास' और 'अनध' नामक तीन नाटक, प्रायः सभी प्रकार के प्रगीत और मुक्तक भी लिखे हैं। किंतु नाटकों, प्रगीतों और मुक्तकों में ये वैसी भाव सृष्टि नहीं कर पाए जैसे कि प्रबंधकाव्यों में। अतः कहा जा सकता है कि गुप्त जी मूलतः प्रबंधकार थे, अन्य साहित्य रूपों में इनकी पकड़ नहीं थी।

गुप्तजी के प्रमुख काव्यग्रंथ हैं - जयद्रथ वध (1910), भारत भारती (1912), पंचवटी (1925), झंकार (1929), साकेत (1931), यशोधरा (1932), द्वापर (1936), जयभारत (1952), विष्णुप्रिया (1957) आदि।

गुप्त जी के काव्य के संबंध में यह स्मरणीय है कि उन्होंने अपने सभी काव्यों में मानवतावाद को दर्शाया है। वे निष्काम कर्म, विश्वबंधुत्व, सामाजिक समता, राष्ट्रीय चेतना एवं हिंदू-मुस्लिम एकता पर विशेष बल देते थे। उनकी कविता अपने युग का स्वच्छ दर्पण है।

बोध प्रश्न

- 'भारत भारती' का प्रकाशन कब हुआ था?

- मैथिलीशरण गुप्त की कविता अपने युग का स्वच्छ दर्पण क्यों है?

रामनरेश त्रिपाठी (1889 ई. - 1962 ई.)

रामनरेश त्रिपाठी का जन्म जिला जौनपुर के कोइरीपुर ग्राम में हुआ था। इन्होंने प्रारंभिक शिक्षा गाँव की पाठशाला में ही पाई। रामनरेश त्रिपाठी के काव्य में श्रीधर पाठक की तरह स्वच्छंदता की प्रवृत्ति मिलती है। इन्होंने बहुत सारे प्रबंध काव्य लिखे हैं। विशेष बात यह है कि इनके प्रबंध काव्य पौराणिक या ऐतिहासिक आख्यानों पर आधारित नहीं है। इन्होंने भी, 'सरस्वती' पत्रिका के प्रभाव से खड़ी बोली को कविता के भाषा के रूप में अपनाया। त्रिपाठी जी के चार काव्यग्रंथ प्रसिद्ध हैं - मिलन (1977), पथिक (1920), मानसी (1927) और स्वप्न (1929)। इनमें से मानसी इनकी फुटकर कविताओं का संग्रह है, जिसमें मुख्यतः देशभक्ति, प्रकृति और नीति का चित्रण है। मिलन, पथिक तथा स्वप्न काल्पनिक कथा पर आधारित प्रेमाख्यानक खंड काव्य हैं। इन तीनों में व्यक्तिगत सुख और स्वार्थ को छोड़कर देश के लिए सब कुछ न्यौछावर करने की प्रेरणा दी गई है। त्रिपाठी जी ने अपनी कथावस्तु की कल्पना देश के राजनैतिक वातावरण के अनुसार की है। इस तरह की कथा की कल्पना स्वच्छंदता को दर्शाती है। इन काव्यों में नर-नारी का मनोविज्ञान, उस युग का भावबोध एवं प्रकृति की सुंदरता का वर्णन प्रभावशाली वर्णन मिलता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में ''देशभक्ति को रसात्मक रूप त्रिपाठी जी द्वारा प्राप्त हुआ।'' वस्तुतः वे एक साहित्यकार के साथ-साथ स्वतंत्रता सेनानी भी थे। उन्होंने देश के प्रायः सभी भागों में भ्रमण किया था। वे ग्राम गीतों (लोक गीतों) का संकलन करने वाले हिंदी के प्रथम कवि थे। उनकी रचनाओं में भी इसका प्रभाव देखा जा सकता है। उनके काव्य 'पथिक' और 'स्वप्न' में दक्षिण एवं उत्तर भारत की प्रकृति का सुंदर वर्णन मिलता है। साथ ही वहाँ की स्थानीय विशेषताओं को भी उभारा गया है। इनके तीनों प्रबंध काव्य भारतीयों की नैतिकता, त्याग एवं बलिदान भावना को प्रदर्शित करने वाले काव्य हैं।

रामनरेश त्रिपाठी ने सरल सुबोध खड़ी बोली में काव्यरचना की। इससे उन्हें अपार लोकप्रियता मिली। उनकी एक प्रसिद्ध रचना का अंश देखिए-

हे प्रभों! आनंददाता! ज्ञान हमको दीजिए।

शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिए।।

लीजिए हमको शरण में, हम सदाचारी बने।

ब्रह्मचारी, धर्मरक्षक वीर व्रतधारी बने।।

बोध प्रश्न

- रामनरेश त्रिपाठी के खंड काव्यों की क्या विशेषता है?

नाथूराम शर्मा शंकर (1959 ई. - 1932 ई.)

नाथूराम शर्मा शंकर का जन्म अलीगढ़ जिले के हरदुआगंज नामक स्थान पर सन् 1859 ई. में हुआ। ये हिंदी उर्दू तथा अंग्रेज़ी भाषाओं के अच्छे जानकार हैं। ये बचपन से ही कविता लिखा करते थे। आरंभ में इनकी रचनाएँ भारतेन्दु युग की 'ब्राह्मण पत्रिका' में छपती थी, फिर 'सरस्वती पत्रिका' में छपने लगी। प्रारम्भ में ये ब्रजभाषा के कवि थे, किन्तु बाद में खड़ी बोली में लिखने लगे। शंकर जी ने देशप्रेम स्वदेशी प्रयोग, समाज सुधार, हिंदी अनुराग, विधवाओं तथा अछूतों को अपने काव्य का विषय बनाया इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं - अनुरागरत्न, 'शंकर-सरोज' 'गर्भखडा रहस्य' तथा शंकर सर्वस्व,। उन्हें 'भारतेन्दु प्रज्ञेन्दु' 'साहित्य सुधाकर' आदि उपाधियों से विभूषित किया गया।

बोध प्रश्न

- नाथूराम शर्मा शंकर की रचनाएँ आरंभ में किस पत्रिका में छपती थी?

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' (1868 ई. - 1915 ई.)

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' का जन्म जबलपूर में सन् 1868 ई. में हुआ। वे संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे तथा वेदान्त में उनकी विशेष रूचि थे। वे साहित्य के अध्ययन में दत्ताचित रहे। उनकी कविताएँ बड़ी सरस एवं भावपूर्ण है। उपका ब्रजभाषा और खड़ी बोली दोनों पर समान अधिकार था। उन्होंने शृंगार आदि परम्परागत विषयों पर ब्रजभाषा में तथा देशभक्ति आदि नवीन विषयों पर खड़ी बोली में काव्य रचना की है। उन्होंने प्रकृति सौन्दर्य का वर्णन भी किया है। उनके प्रकृति चित्रण भी सरल और स्वाभाविक है। उन्होंने कालिदास के 'मेघदूत' का अनुवाद 'धारा धरधावन' नाम से (1902 ई.) में किया है। उनकी अन्य काव्य कृतियाँ है। 'स्वदेशी कुण्डल' (1910 ई.), मृत्युंजन (1904 ई.), रामरावण विरोध (1906 ई.) तथा वसन्त-वियोग (1912 ई.) आदि।

रामचरित उपाध्याय

रामचरित उपाध्याय गाज़ीपुर के रहने वाले थे। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत में हुई, बाद में उन्होंने ब्रजभाषा और खड़ी बोली पर भी अधिकार प्राप्त कर लिया उन्होंने पहले प्राचीन विषयों पर ही कविताएँ लिखी, किन्तु आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सम्पर्क में आने पर खड़ी बोली तथा नवीर विषयों पर कविताएँ लिखनी आरंभ की। उनकी प्रमुख कृतियों में - 'राष्ट्रभारती', 'देवदूत' देवसमा, तथा 'विचित्र विवाद' आदि है। इसके अतिरिक्त उपाध्याय जी ने 'रामचरित चिन्तामणि' नामक प्रबन्धकाव्य की भी रचना की।

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' (1883 ई. - 1972 ई.)

गयाप्रसाद शुक्ल 'स्नेही' का जनम उन्नाव जिले के हड़हा ग्राम में सन् 1883 में हुआ। वे उर्दू के विद्वान थे। अतः हिंदी के साथ-साथ उर्दू में भी अच्छी कविता लिखा करते थे। हिंदी में उन्होंने प्राचीन और नवीन शैलियों की कविता लिखी है।

शृंगार आदि परंपरागत विषयों पर वे 'सनेही' उपनाम से तथा राष्ट्रीय भावनाओं की कविता को 'त्रिशूल' उपनाम से लिखते थे। उनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं:- 'कृषक-क्रंदन', 'प्रेम पचीसी', 'राष्ट्रीय वीणा', 'त्रिशूल' आदि।

माखनलाल चतुर्वेदी (1889 ई. - 1968 ई.)

माखनलाल चतुर्वेदी का नाम राष्ट्रीय काव्य धारा के प्रमुख कवियों में लिखा जाता है। राष्ट्रीय धारा के कवियों ने जनमानस में देश के प्रति प्रेम आत्मविशस व स्वतन्त्रता की चेतना को जगाने का कार्य किया। माखनलाल चतुर्वेदी की रचनाओं 'हिमकिरीटनी', 'हिमतरंगिनी', 'माता', 'युगचरण', 'समर्पण', आदि काव्य कृतियों के माध्यम से उनकी राष्ट्रीय भाव धारा से अवगत हो सकते हैं।

माखनलाल चतुर्वेदी ने अपनी प्रसिद्ध कविता 'पुष्प की अभिलाषा' में पुष्प को अपना बलिदान उनके लिए देने को कहा है जो पथ बलिदान के लिए जा रहे वीरों का है। पुष्प् उस मार्ग में बलिदानी वीरों के चरणों के नीचे आना चाहता है।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (1897 ई. - 1960 ई.)

बालककृष्ण शर्मा नवीन अपनी कविताओं में भारत की यथार्थ स्थिति का चित्रण करते हुए भारतवासियों को जागृत होने के लिए प्रेरित करते हैं। इनकी कविताओं में राष्ट्रीयता, शृंगारिकता एवं रहस्यात्मकता तीनों प्रवृत्तियाँ मिलती हैं।

ओ भिखमंगे, ओ पराजित, ओ मज़लुम, अरे चिरदोहिता।

तु अखण्ड भण्डार शक्ति का, जाग अरे निद्रा सम्मोहित।।

सियाराम शरण गुप्त (1895 ई. - 1963 ई.)

सियाराम शरण गुप्त मैथिलीशरण गुप्त के छोटे भाई थे। गाँधीवाद में उनकी अटूट आस्था थी। उनकी सभी रचनाओं पर अहिंसा, सत्य, करुणा, विश्वबन्धुत्व शान्ति आदि गांधीवादी मूल्यों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं - 'नौर्याविजय', 'अनाथ', 'पूर्वादल', 'विषाद' आदि।

सोहनलाल द्विवेदी (1906 ई. - 1988 ई.)

मोहनलाल द्विवेदी ने राष्ट्रप्रेम की भावनाओं से अभिभूत कई काव्य संग्रह लिखे हैं जिनमें 'भैरवी', 'पूजागीत', 'वासवदता', 'विषपान' आदि प्रमुख हैं। इनपर गांधीवादी विचारधारा का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है।

सुभद्राकुमारी चैहान (1905 ई.-1948 ई.)

राष्ट्रीय काव्यधारा से युक्त कविताएँ लिखने में सुभद्राकुमारी चैहान का महत्वपूर्ण योगदान है। उनकी 'झाँसी की रानी' कविता बहुत ही प्रसिद्ध है। 'त्रिधारा', 'मुकुल', 'वीरो का कैसा हो वसन्त' आदि कविताओं में तीखे भावों की पूर्ण भावना मुखरित है। उन्होंने असहयोग आंदोलन में बहुत ही सक्रिय भूमिका निभाई। 'जलियाँवाला बाग में वसन्त' कविता में इस नृशंस हत्याकाण्ड पर कवयित्री के करूण क्रन्दन से उसकी मूक वेदना मूर्तिमान हो उठी है।

रामधारी सिंह दिनकर (1908 ई.-1974 ई.)

रामधारी सिंह दिनकर ने अपनी काव्य कृतियों 'हुँकार', 'रेणुका', 'विपथगा' में साम्राज्यवादी सभ्यता और ब्रिटिश सरकार के प्रति अपनी प्रखर ध्वंसात्मक दृष्टि का परिचय देते

हुए क्रान्ति का आह्वान किया है। स्वतन्त्रता की प्रथम शर्त कुर्बानी तथा समर्पण को काव्य का विषय बनाकर क्रान्ति व ध्वंस के स्वर से मुखरित उनकी कविताएँ नौजवानों के शरीर में उत्साह का संचार करती है।

श्यामनारायण पांडेय (1907 ई.-1991 ई.)

श्यामनाराययण पांडेय जी ने 'हल्दीघाटी' तथा 'जौहर' जैसे प्रबन्ध काव्यों की रचना की। 'हल्दीघाटी' महाराणा प्रताप के जीवन पर तथा जौहर रानी पद्मिनी की जौहर कथा पर आधारित काव्य है। इन काव्यों में अद्भुत प्रवाह, ओज और सादगी है।

बोध प्रश्न

- जौहर किस कथा पर आधारित काव्य है?

3.4 पाठ सार

आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के नाम पर इस युग का नाम द्विवेदी युग पड़ा। हिंदी नवजागरण को तीन चरणों में बाँटा गया है - (1) 1857 का स्वतंत्रता संग्राम, (2) हिंदी साहित्य में भारतेंदु का आगमन और (3) महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा हिंदी भाषा के लिए किया गया कार्य। कहा जा सकता है कि हिंदी नवजागरण की जो परंपरा भारतेंदु युग से प्रारंभ हुई। उसे आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने दृढ़ता प्रदान की। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वत' पत्रिका के माध्यम से हिंदी भाषा के विकास के लिए बहुत अधिक कार्य किया। उन्होंने कवियों को भिन्न-भिन्न विषयों पर लिखने की प्रेरणा दी और लेखकों को उनकी कमियों से अवगत कराया। उन्होंने भाषा की व्याकरणिक भूलों पर ध्यान दिया तथा उसमें सुधार किया। काव्यभाषा में ब्रजभाषा के स्थान पर खड़ी बोली को अपनाने का सुझाव दिया जिससे गद्य और पद्य की भाषा एक हो। द्विवेदी युग का नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के व्यक्तित्व को केंद्र में रखकर किया गया। इन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक के रूप में हिंदी जगत की महान सेवा की। उनसे प्रेरणा लेकर तथा उनके आदर्शों को लेकर आगे बढ़ने वाले अनेक कवि सामने आए। बहुत से ऐसे कवि भी हुए जो पहले ब्रजभाषा में कविता लिख रहे थे, वे द्विवेदी जी तथा 'सरस्वती' पत्रिका से प्रेरित होकर नए विषयों पर खड़ी बोली में कविता लिखने लगे। ऐसे कवियों में अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', श्रीधर पाठक और रामनरेश त्रिपाठी प्रमुख हैं। इन

कवियों की कविताएँ नवजागरण, राष्ट्रीयता, स्वदेशानुराग एवं स्वदेशी भावना से परिपूर्ण हैं। आगे चलकर द्विवेदी जी के प्रभाव से मैथिलीशरण गुप्त ने 'भारत भारती' तथा 'साकेत' जैसी उत्कृष्ट रचनाओं का प्रणयन किया।

इस प्रकार द्विवेदी युग में भाषा और साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में बहुत उन्नति हुई। बहुत से नए कवि प्रकाश में आए। कविताओं के माध्यम से समाज सुधार, देशप्रेम, चरित्र निर्माण आदि भावनाओं का प्रचार-प्रसार हुआ।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. द्विवेदी युग के कवियों को मुख्य रूप से 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से काव्य प्रेरणा प्राप्त हुई।
2. इस युग की कविता मुख्य रूप से समाज सुधार, राष्ट्रीय चेतना और नैतिक मूल्यों की स्थापना करने वाली कविता है।
3. इस की कविता में साधारण मनुष्य को केंद्रीय महत्व मिला जिससे मानवतावाद पुष्ट हुआ।
4. इस युग के कवियों ने स्त्री को काम भावना का आलंबन और भोग विलास की वस्तु मानने की परिपाटी को तोड़ा। इन्होंने स्त्री की वेदना और उसकी सामाजिक भूमिका को खास तौर से उभारा।
5. इस युग के कवियों ने इस धारणा का खंडन किया कि खड़ी बोली काव्य रचना के लिए उपयुक्त नहीं है।
6. इतिवृत्तात्मकता को द्विवेदी युगीन कविता की सीमा माना जा सकता है।

3.6 शब्द संपदा

1. उपेक्षित = जिसका समुचित आदर सम्मान न किया गया हो
2. गरिमा मंडित = गर्व, गुरुत्व
3. जागृत = जागा हुआ या जो जाग रहा है
4. पल्लवित = जो हरा भरा एवं लहराता हुआ हो या विकसित
5. प्रवृत्तियाँ = स्वभाव, आदत

6. प्रेरणा	=	मन में उत्पन्न होने वाला प्रोत्साहन परक भाव-विचार
7. योगदान	=	सहयोग देना
8. वर्ण्य विषय	=	जिस विषय का वर्णन हो रहा हो
9. सूत्रपात	=	किसी कार्य का आरंभ
10.स्वदेशानुराग	=	अपने देश से प्रेम करना

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'द्विवेदी युग खड़ी बोली के विकास का युग था।' स्पष्ट कीजिए।
2. द्विवेदी युग की कविता की मुख्य प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।
3. हिंदी भाषा और साहित्य को द्विवेदी जी की देन को रेखांकित कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के काव्य पर प्रकाश डालिए।
2. मैथिलीशरण गुप्त के काव्य की विशेषताएँ बताइए।
3. श्रीधर पाठक के कृतित्व की चर्चा कीजिए।
4. रामनरेश त्रिपाठी की साहित्यिक देन पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

।. सही विकल्प चुनिए -

1. हिंदी कविता में स्वच्छंदतावादी धारा के प्रथम उत्थान के कवि कौन हैं? ( )

(क) मैथिलीशरण गुप्त (ख) श्रीधर पाठक

(ग) हरिऔध (घ) रामनरेश त्रिपाठी

2. खड़ी बोली के प्रथम महाकवि कौन हैं? ( )

(क) मैथिलीशरण गुप्त (ख) श्रीधर पाठक

(ग)हरिऔध (घ) रामनरेश त्रिपाठी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. मैथिलीशरण गुप्त को .... कहा जाता है।

2. 'साकेत' में .... के दुख-दर्द को अभिव्यक्त किया गया ह।

3. खड़ीबोली हिंदी का पहला महाकाव्य .... है।

III. सुमेल कीजिए -

1. मैथिलीशरण गुप्त	(अ) पथिक
2. हरिऔध	(आ) आराध्य शोकांजलि
3. रामनरेश त्रिपाठी	(इ) भारत भारती
4. श्रीधर पाठक	(ई) प्रियप्रवास

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : (सं) नगेंद्र और हरदयाल
2. हिंदी का गद्य साहित्य : रामचंद्र तिवारी
3. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी
4. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास : बच्चन सिंह

इकाई 4 : छायावादी कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 मूल पाठ : छायावादी कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

4.3.1 छायावाद का आविर्भाव

4.3.2 छायावाद : नामकरण, समय सीमा, अर्थ और परिभाषा

4.3.3 छायावादी काव्य की प्रमुख परिस्थितियाँ

4.3.4 छायावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

4.3.5 छायावाद युग के प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय

4.4 पाठ सार

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

4.6 शब्द संपदा

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

छायावादी युग आधुनिक हिंदी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ युग माना जाता है। छायावादी युग में खड़ी बोली हिंदी कविता का पूर्ण विकास और कलात्मक उत्कर्ष दिखाई देता है। आधुनिक हिंदी कविता में छायावाद को एक ऐसे आंदोलन के रूप में जाना जाता है, जिसे आलोचना, प्रशंसा और निंदा सभी का शिकार होना पड़ा। अतः कहा जा सकता है कि छायावादी काव्य का जन्म द्विवेदी युगीन काव्य की इतिवृत्तात्मकता की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ, क्योंकि

द्विवेदीयुगीन कविता विषयनिष्ठ, वर्णन प्रधान और स्थूल थी, जबकि छायावादी कविता व्यक्तिनिष्ठ, कल्पना प्रधान एवं सूक्ष्म है।

4.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप-

- छायावाद के उद्भव और विकास के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- छायावाद के अर्थ के साथ-साथ उसकी परिस्थितियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- छायावादी काव्यांदोलन की पृष्ठभूमि से भली भाँति परिचित हो सकेंगे।
- छायावाद की प्रमुख प्रवृत्तियों से परिचित हो सकेंगे।
- छायावाद युग के प्रमुख कवियों के बारे में परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

4.3 मूल पाठ : छायावादी कविता : परिस्थितियाँ और प्रवृत्तियाँ

4.3.1 छायावाद का आविर्भाव

छायावादी काव्य के उदय को लेकर विद्वानों में काफी मदभेद है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने छायावाद के प्रवर्तक का श्रेय मैथिलीशरण गुप्त और मुकुटधर पांडेय को दिया है- "हिंदी कविता की नई धारा छायावाद का प्रवर्तक इन्हीं को विशेषतः मैथिलीशरण गुप्त और मुकुटधर पांडेय को समझना चाहिए।" प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार इलाचंद्र जोशी शुक्ल जी के इस मत से सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार जयशंकर प्रसाद 'इंदु' पत्रिका में प्रकाशित आरंभिक रचनाओं तथा 'झरना' काव्यसंग्रह के आधार पर छायावाद के प्रवर्तक हैं। रायकृष्णदास ने सुमित्रानंदन पंत को छायावाद का प्रवर्तक घोषित किया है। लेकिन मुकुटधर पांडेय को छायावाद के प्रवर्तन का श्रेय जाता है।

मैथिलीशरण गुप्त, मुकुटधर पांडेय एवं जयशंकर प्रसाद आदि की कविताओं में छायावादी काव्य का जन्म हुआ। माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्णशर्मा नवीन आदि की कविताओं में वह आगे बढ़ी तथा प्रसाद, निराला, पंत, महादेवी वर्मा आदि की कविताओं में उसका पूर्ण विकास हुआ।

जहाँ तक छायावादी काव्य पर प्रभाव और उसके प्रेरक तत्व का प्रश्न है, तो हम पाते हैं कि घनानन्द की आत्मपरक काव्यभिव्यक्ति, भारतेन्दु की प्रेमपरकता, जगमोहन सिंह और श्रीधर

पाठक के प्रकृति चित्रण रामनरेश त्रिपाठी और मुकुटधर पांडेय की स्वछंदता और कल्पना-प्रवणता, हरिऔध तथा मैथिलीशरण गुप्त की नारी संवेदना और करुणा इत्यादि को छायावादी काव्य के प्रत्यक्ष और परोक्ष तत्वों के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। छायावादी काव्य पर अंग्रेजी साहित्य का भी प्रभाव देखा जा सकता है। इस पर रवींद्रनाथ टैगोर की रहस्यपरकता की झलक भी पाई जाती है। अतः कहा जा सकता है कि छायावादी कविता का विकास पूर्ववर्ती विविध प्रेरक तत्वों से हुआ है।

बोध प्रश्न

- छायावाद के प्रवर्तन का श्रेय किसको जाता है?

4.3.2 छायावाद नामकरण : नामकरण, समय सीमा, अर्थ और परिभाषा

छायावाद का विकास द्विवेदीयुगीन कविता के बाद हुआ। सामान्य तौर पर छायावादी काव्य की सीमा 1918 से 1936 ई. तक मानी जाती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी छायावाद का प्रारंभ 1918 ई. से माना है। 1918 ई. में जयशंकर प्रसाद की कृति 'झरना' तथा निराला की कविता 'जूही की कली' 1916 ई. में प्रकाशित हो चुकी थी। प्रसाद की 'कामायनी' 1936 में प्रकाशित हुई तथा इसी वर्ष में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। अतः इन सभी बातों को ध्यान में रखा जाए तो छायावाद की अंतिम सीमा 1936 मानना उपयुक्त है।

छायावाद शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग मुकुटधर पांडेय के निबन्ध 'हिंदी में छायावाद' में किया गया था। मुकुटधर पांडेय ने छायावादी शब्द का प्रयोग उन कविताओं के लिए किया था, जिनमें उन्हें अस्पष्टता और भावों का धुँधलापन दिखाई पड़ा। 'सरस्वती' पत्रिका में 1920 में सुशील कुमार का एक लेख भी इसी नाम से प्रकाशित हुआ था। उसके बाद छायावाद नाम चल पड़ा और यही नाम चर्चित भी हो गया। अतः छायावाद शब्द उस विशिष्ट काव्यधारा के लिए चल पड़ा और रूढ़ हो गया, जिसकी अधिकांश कविताएँ रोमेन्टिक प्रवृत्तियों से ओतप्रोत थी।

विभिन्न विद्वानों ने छायावाद को परिभाषित करने का प्रयास किया। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ इस प्रकार हैं -

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार "छायावाद शब्द का प्रयोग दो अर्थों से समझना चाहिए - एक तो रहस्यवाद के अर्थ में जहाँ उसका संबंध काव्यवस्तु से होता है अर्थात जहाँ कवि

उस अनन्त और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन बनाकर अत्यन्त चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है - छायावाद का दूसरा प्रयोग काव्य शैली या पद्धति विशेष के व्यापक अर्थ में है।" शुक्ल जी ने छायावाद को "स्थूल के विरुद्ध सूक्ष्म की प्रतिक्रिया" माना है।

डॉ. नगेंद्र के अनुसार - "छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है। यह एक विशेष प्रकार की भाव पद्धति है, जीवन के प्रति विशेष भावात्मक दृष्टिकोण है।"

डॉ. रामकुमार वर्मा के अनुसार - "परमात्मा की छाया आत्मा में, आत्मा की छाया परमात्मा में पड़ने लगती है, तब छायावाद की सृष्टि होती है।"

जयशंकर प्रसाद के अनुसार - "कविता के क्षेत्र में पौराणिक युग की किसी घटना अथवा देश-विदेश की सुन्दरता के बाह्य वर्णन से भिन्न वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी, तब हिंदी में उसे छायावाद के नाम से अमिहित किया गया। ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौंदर्यमय प्रतीक विधान तथा उपचार के साथ स्वानुभूति की विवृत्ति छायावाद की विशेषताएँ है।"

इन सभी विद्वानों की परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि-

1. छायावाद में स्थूलता के स्थान पर सूक्ष्मता दिखाई देती है।
2. छायावादी काव्य में रहस्यवादी प्रवृत्ति पाई जाती है।
3. छायावाद प्रेम, प्रकृति और सौंदर्य का काव्य है।
4. छायावाद में स्वानुभूति की प्रधानता है।
5. छायावादी कविता अंग्रेजी रोमाण्टिक काव्यधारा से प्रभावित है।

बोध प्रश्न

- मुकुटधर पांडेय ने छायावाद का प्रयोग किस प्रकार की कविताओं के लिए किया है?
- छायावाद क्या है?

4.3.3 छायावादी काव्य की प्रमुख परिस्थितियाँ

छायावादी काव्य पर उस समय की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और साहित्यिक परिस्थितियों का स्पष्ट प्रभाव दिखायी पड़ता है।

राजनीतिक परिस्थिति

छायावादी कविता दो विश्वयुद्धों के बीच की कविता है। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन में कई महत्वपूर्ण मोड़ आये। इस समय गांधी जी द्वारा सत्य, अहिंसा और असहयोग से युक्त कई प्रयोग चल रहे थे। छायावादी कवि इस समय की राजनीतिक गतिविधियों से उदासीन पड़ते हैं। अतः इस समय की राजनीतिक घटनाओं का उल्लेख छायावादी काव्यधारा में बहुत कम दिखायी पड़ता है।

सामाजिक परिस्थिति

भारतीय समाज के सभी क्षेत्रों पर पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति में कुछ नए परिवर्तन आए। इससे स्वच्छन्दवादी प्रवृत्ति को बढ़ावा मिला। कुछ स्वतंत्र चिन्तनवाले शिक्षित लोग समाज से पुरानी धार्मिक रूढ़ियों को समाप्त करना चाहते थे। लेकिन रूढ़िग्रस्त समाज उसे मानने को तैयार नहीं था। अतः इसी कारण युवाओं में असन्तोष और निराशा की भावना व्याप्त होने लगी। समाज में फैली इस प्रकार की भावना की झलक छायावादी कविता में दिखाई पड़ने लगी।

धार्मिक परिस्थिति

इस युग में धर्म और आध्यात्म के क्षेत्र में रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, गांधी जी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, अरविन्द जैसे महान व्यक्तियों के दर्शनों का प्रभाव था। जिस कारण धार्मिक संकीर्णता के स्थान पर व्यापक विश्वधर्म की प्रतिष्ठा हुई। विश्व कल्याण और विश्वशान्ति के संदेशों से छायावादी कवि बहुत प्रभावित हुए और उनके काव्यों में इसका प्रभाव देखा भी गया।

साहित्यिक परिस्थिति

छायावादी कवियों की कविता में अंग्रेजी स्वच्छन्दतावादी कविता की प्रवृत्तियों का गहरा देखा जा सकता है। रूढ़ियों के प्रति विरोध, स्वच्छन्द प्रेम दृष्टि, व्यापक मानवता की प्रविष्ठा, सूक्ष्म वैयक्तिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति आदि प्रवृत्तियाँ अंग्रेज़ी रोमांटिक कविता के

समान की छायावादी कविता में भी दिखाई पड़ती है। किन्तु फिर भी हिंदी के छायावाद को अंग्रेज़ी रोमांटिक काव्यधारा का अनुकरण मानना समीचीन नहीं है।

उक्त विवेचन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि छायावादी कविता तत्कालीन युग की परिस्थितियों से उद्भूत है। द्विवेदी युग की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप जहां उसमें स्थूलता, अतिशय नैतिकता एवं इतिवृत्तात्मकता का विरोध हुआ, वहीं तत्कालीन पराधीनता ने राष्ट्रीयता, आत्म गौरव, मानववाद जैसे मूल्यों का समावेश करा दिया।

बोध प्रश्न

- छायावाद युग में धर्म और आध्यात्म के क्षेत्र में किन-किन महान व्यक्तियों के दर्शन का प्रभाव देखा गया?

4.3.4 छायावादी काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

छायावादी काव्य में मिलनेवाली प्रवृत्तियों को हम मुख्यतः दो भागों में विभाजित कर सकते हैं- (क) भावगत, (ख) शैलीगत

(क) भावगत

आत्म अभिव्यक्ति

छायावादी कवियों ने अपनी कविता में अपने व्यक्तिगत जीवन के निजी प्रसंगों को खोजने का प्रयास किया है। इन सभी प्रमुख कवियों ने अपनी व्यक्तिक गहन अनुभूतियों को आत्मपरक शैली में व्यक्त किया है। उन कवियों ने सुखः दुःख से परिपूर्ण कविताएँ खूब लिखी है। जयशंकर प्रसाद कृत 'आँसू' और पंत कृत 'उच्छवास' इसका उदाहरण है।

पंत जी अपनी प्रियता को पूजने की बात करते हैं और कहते हैं-

विधुर उर के मृदु भावों से तुम्हारा कर नित नव शृंगार।
पूजता हूँ मैं तुम्हें कुमारि, मूँद दुहरे दृग द्वार॥

सौंदर्य चित्रण

सौंदर्य के स्वच्छन्द चित्रण में छायावादी कविता का स्वरूप भव्य और व्यापक है। छायावादी कवि मूल रूप से प्रेम व सौंदर्य के कवि हैं। छायावादी कवियों ने नारी को उसकी

प्रेमिका के रूप में ग्रहण किया जो हृदय व यौवन की सम्पूर्ण विभूतियों से परिपूर्ण है। जयशंकर प्रसाद 'कामायनी' की श्रद्धा का सौंदर्य चित्रण करते हैं। छायावादी कवियों ने सौंदर्य के स्थुल चित्रण की अपेक्षा उसके सूक्ष्म प्रभाव का ही चित्रण किया है।

नारी का उदात्त रूप में चित्रण

छायावादी कवियों ने नारी को उदात्त रूप प्रदान करते हुए उसे पुरूष की प्रेरक शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है। नारी को दया, क्षमा, साहस, प्रेम, करुणा की भूर्ति के रूप में देखा गया है। वह श्रद्धा की पात्र है। प्रसाद जी लिखते हैं-

नारी तूम केवल श्रद्धा ही, विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन से सुन्दर समतल में।।

नारी यहाँ सहचरी सखी तथा प्रेयसी बनकर आई। वह भी सामन्ती बन्धनों में जकड़ी हुई थी। चारदीवारी में कैद तथा भोग की वस्तु के रूप में नारी यातना ग्रस्त थी। छायावादी रचनाकारों ने नारी के प्रेम की पवित्र गंगा की तरह माना। उनका यह मानना है कि नारी के उस प्रेम से पुरूष हृदय में पड़ी हुई ग्रन्थियों को भी खोला जा सकता है।

प्रकृति चित्रण

छायावादी काव्य में प्राकृतिक सौंदर्य को विशेष महत्व मिला है। पन्त जी ने यह माना कि प्रकृति जीवन के सर्वाधिक निकट है। मानव को प्रकृति ने सिर्फ दिया ही है बदले में वह कोई अपेक्षा नहीं करती। यही कारण है कि उन्होंने प्रकृति प्रेम के आगे नारी प्रेम को भी त्याज्य माना है।

प्रसाद जी ने माना कि यदि मनुष्य प्रकृति का संरक्षण करे तो वह प्रकृति भी जीवन का रक्षक बनकर उभरती है। इस वैज्ञानिक छेड़छाड़ से प्राकृतिक शक्तियों ने ताण्डव मचाना शुरू किया है। कामायनी में जल प्रलय की समस्या का चित्रण इसी सन्दर्भ में किया गया है।

दुःख और वेदना की अभिव्यक्ति

छायावादी काव्य में दुःख और वेदना की अभिव्यक्ति बहुत प्रमुखता से देखी गई है। महादेवी वर्मा को तो वेदना की कवयित्री के नाम से ही जाना जाता है। वे अपने जीवन की

तुलना नीर भरी बदली से करती है। प्रसाद का आँसू काव्य भी कवि की पीड़ा को अभिव्यक्ति करता है -

जो धनीभूत पीड़ा थी मस्तक में स्मृति जी छाई।

दुर्दिन में आँसू बनक रवह आज बरसने आई॥

इसी प्रकार पन्त के परिवर्तन कविता में भी जगत के दुःख और सुरत का वर्णन किया गया है।

रहस्यवाद

छायावाद की एक प्रमुख प्रवृति रहस्यवाद है। अपने मन के गहन अन्तर्भाव को व्यक्त करते समय छायावादी कवि असीम निराकार अज्ञात सत्ता के प्रति रहस्य भावना से मर जाते हैं। पन्त की 'मौन निमन्त्रण' कविता में रहस्यवाद को बहुत अच्छे से दर्शाया गया है। जहाँ कवि को प्रकृति के उपादानों में उस अज्ञात सत्ता के 'मौन निमन्त्रण' का आभास होता है।

न जाने कौन आये धुतिमान, जान मुझको अबोध अनजान।

सुझाते हो तुम पथ अनजान कूक देते छिद्रो में गान॥

निराला की 'तुम और मैं' कविता तथा महादेवी वर्मा जी का सम्पूर्ण काव्य रहस्यवाद से ओत-प्रोत है।

कल्पनाशीलता

छायावादी कवियों ने काव्य में कल्पनाशीलता को बहुत ही महत्वपूर्ण माना है। प्रसिद्ध स्वच्छन्दतावादी आलोचक आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने साहित्य और कल्पना के अटूट रिश्ते की चर्चा की है। निराला जी ने भी कविता में कल्पनाशीलता को बहुत अधिक प्रमुखता दी है। उनका कहना है कि कविता कल्पना कानन (जंगल) की देवी है। कवि पंत ने भी कल्पना के महत्व पर बल देते हुए कहते हैं कि कोई भी गंभीर अथवा व्यापक अनुभूति काल्पनिक ही होती है। छायावादी कवियों के लिए कल्पनाशीलता आवश्यक तथा मजबूरी दोनों का रूप लेकर आई है। जैसे-

आह! कल्पना का सुन्दर यह मधुर जगत कितना होता।

मानवतावाद

विशद मानवीय दृष्टि छायावादी कविता की महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। इसके अन्तर्गत छायावादी कवि विश्वमानव कल्याण की कामना करते हैं। ऐसा लगता है कि इस क्रम में उन्होंने रवीन्द्र और अरविन्द के मानवतावादी दृष्टिकोण से प्रेरणा ग्रहण किया हो। प्रसाद के 'विजयिनी मानवता हो जाए' से लेकर निराला की बादलराग, भिक्षुक, तोड़ती पत्थर, विधवा आदि कविताओं में छायावादी कवियों की मानवतावादी भावनाएँ अभिव्यक्त हुई है।

शिल्पगत विशेषताएँ

छायावादी कविता में लाक्षणिकता का बहुत अधिक प्रयोग देखा जाता है। काव्य में लाक्षणिकता के कारण ही इन कविताओं की भाषा अत्यन्त सशक्त एवं प्रभावमयी बन गई है। जैसे -

नीरव सन्ध्या में प्रशान्त।

डूबा है सारा ग्राम प्रान्त॥

यहाँ कवि शान्ति की अधिकता को बताता है। सारा ग्राम प्रान्त शब्द रहित सन्ध्या में डूबा हुआ था। यहाँ 'डूबा' शब्द में लक्षणा शब्दशक्ति है। छायावादी कवि अपने काव्य में अलंकार का प्रयोग भी किया है।

बिंब योजना

छायावादी कवियों ने अपने काव्य में बिम्ब का प्रयोग अत्यन्त सफलतापूर्वक किया है। कवि शब्दों द्वारा ऐसा चित्र उपस्थित करता है, जिससे आँखों के सामने वर्व्य-विषय का एक चित्र उभर जाते हैं, इसे वह पाठक के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहता है। कहीं पर यह श्रव्य बिम्ब होता है और कहीं पर स्पर्श बिम्ब होता है।

प्रतीक योजना

छायावादी कवि अपने काव्य में प्रतोकों के द्वारा अपनी बात कहते हैं। इसमें कथन में वक्रता आ जाती है। इसे हम एक उदाहरण से समझ सकते हैं -

निशा को धो देता राकेश

चाँदनी में जब अलकें खोल

कली से कहता था मधुमास

बता दे मधु मदिरा का मोल

यहाँ पर निशा, राकेश, कली, मधुमास आदि के माध्यम से नायक-नायिका के प्रेम की अभिव्यक्ति मिलती है ये उपमान नहीं है प्रतीक है।

बोध प्रश्न

- छायावादी कवि अपने काव्य में नारी को किस रूप में देखा है?

4.3.5 छायावाद युग के प्रमुख कवियों का संक्षिप्त परिचय

जयशंकर प्रसाद (1890-1937 ई.)

जयशंकर प्रसाद 'छायावाद' युग के प्रवर्तक के नाम से जाने जाते हैं। 'कामायनी' इनकी अमर कृति है। इनकी प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं- 'उर्वशी', 'वनमिलन', 'अयोध्या का उद्धार', 'करुणालय', 'कामायनी', 'आँसू', 'झरना', 'लहर' आदि।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' (1897-1962 ई.)

निराला को ओज और औदात्य का कवि कहा जाता है। इनकी मुख्य कृत्तियाँ हैं- 'तुलसीदास', 'सरोज स्मृति', 'राम की शक्तिपूजा', 'अनामिका' (1923), 'परिमल' (1930), 'गीतिका' (1936), 'कुकुरमुत्ता', 'अणिमा' आदि।

सुमित्रानंदन पंत (1900-1977 ई.)

पंत को प्रकृति का सुकुमार कवि कहा जाता है। पंत जी की प्रथम कविता 'गिरजे का घण्टा' है। उनकी प्रमुख कृत्तियाँ हैं- 'वीणा', 'ग्रंथि', 'पल्ल्व' और 'गुंजन', 'युगान्त', 'युगवाणी', 'ग्राम्या', 'उत्तरा', 'लोकायतन'।

महादेवी वर्मा (1907-1987 ई.)

महादेवी को आधुनिक युग की मीराँ कहा जाता है। इनके मुख्य काव्य संग्रह हैं - 'निहार', 'रश्मि', 'नीरजा', 'सांध्यगीत', 'यामा' और 'दीपशिखा'।

बोध प्रश्न

- प्रकृति का सुकुमार कवि कौन हैं?
- ओज और औदात्य का कवि किसे कहा जाता है?

4.4 पाठ सार

छायावाद आधुनिक हिंदी कविता का सबसे उल्लेखनीय और प्रमुख काव्य आन्दोलन कहा जा सकता है। यह तत्कालीन युग की परिस्थितियों की उपज है। छायावाद को हिंदी साहित्य के इतिहास में खड़ी बोली हिंदी का स्वर्णकाल कहा जाता है। इस समय द्विवेदी युगीन साहित्य की इतिवृत्तात्मकता को छोड़कर लाक्षणिकता प्रधान कविता की रचना हुई। छायावादी कवि तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए अपनी कविताओं में राष्ट्रीयता, मानववाद, आत्मगौरव जैसे मूल्यों का समावेश किया है। इस काल की समय सीमा लगभग 1918 ई. 1936 ई. तक मानी जाती है। छायावाद के मुख्य कवियों में प्रसाद, निराला, पंत और महादेवी वर्मा आते हैं। इन कवियों के काव्य में छायावाद की समस्त प्रवृत्तियाँ दिखाई पड़ती है। इसके अतिरिक्त पाश्चात्य साहित्य का प्रभाव भी विशेष रहा। स्वच्छदतावाद रहस्यवाद का भी प्रभाव इनकी काव्य सृजना में आती है। इस तरह छायावादी काव्य में अपने युग के जनजीवन की समग्रता की अभिव्यक्ति मिलती है।

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित बिंदु निष्कर्ष के रूप में प्राप्त हुए हैं-

1. छायावाद युग आधुनिक हिंदी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ युग है।
2. छायावाद का जन्म द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मकता की प्रतिक्रिया में हुआ, इसलिए यह कविता व्यक्तिनिष्ठ, कल्पना प्रधान एवं सूक्ष्म है।
3. मुकुटधर पांडेय को छायावाद का प्रवर्तक माना जाता है।
4. मुक्ति चेतना छायावादी काव्य का मूल है।
5. प्रसाद, पंत, निराला, और महादेवी वर्मा छायावाद के मुख्य कवि हैं, जिन्हें छायावाद चतुष्ट्य कहा जाता है।
6. छायावादी काव्य में अपने युग के जन-जीवन की समग्रता की अभिव्यक्ति मिलती है।

4.6 शब्द संपदा

1. कल्पना	=	सोचना
2. परिवेश	=	वातावरण, माहौल
3. पूनर्जागरण	=	फिर से जागना
4. प्रतीक	=	लक्षण
5. मौलिक	=	असली, वास्तविक
6. रहस्यवाद	=	चिंतन मनन के द्वारा ईश्वर से सम्पर्क स्थापित करने की प्रवृति
7. वेदना	=	मानसिक दुःख, व्यथा
8. सूक्ष्मता	=	बारीकी
9. स्वच्छंद वृत्ति	=	मनमौजी, मनमाना
10. स्वानुभूति	=	ऐसी अनुभूति जो अपने को हुई हो

4.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. छायावाद के उद्भव के लिए कारणभूत परिस्थितियों पर प्रकाश डालिए।

2. छायावादी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।

3. छायावाद युग का परिचय दीजिए।

4. 'छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है।' इस कथं की पुष्टि कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. छायावादी कविता का नामकरण कैसे संपन्न हुआ।

2. छायावाद की विभिन्न परिभाषाओं की चर्चा कीजिए।

3. छायावाद के संबंध में प्रचलित विभिन्न मत क्या-क्या हैं।

खंड (स)

।. सही विकल्प चुनिए -

1. छायावादी काव्य की प्रवृत्ति नहीं है? ( )

(अ) प्रेम का उदात्त चित्रण (आ) प्रकृति का सामान्य चित्रण

(इ) वेदना और दुःख की अभिव्यक्ति (ई) आत्माभिव्यक्ति की प्रधानता

2. इनमें से कौन छायवादी काव्य चतुष्ट्य नहीं है? ( )

(अ) प्रसाद (आ) पंत (इ) निराला (ई) माखनलाल चतुर्वेदी

3. जयशंकर प्रसाद का काव्य संग्रह नहीं है? ( )

(अ) झरना (आ) लहर (इ) अतिमा (ई) कामायनी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'आँसू' के रचनाकार .... हैं।
2. पंत की प्रथम रचना .... है।
3. छायावाद का प्रवर्तक .... हैं।
4. छायावाद का जन्म द्विवेदी युगीन .... की प्रतिक्रिया में हुआ।
5. छायावादी काव्य का मूल .... चेतना है।
6. प्रकृति का सुकुमार कवि …….. को कहा जाता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. कामायनी	(अ) महादेवी वर्मा
2. कुकुरमुत्ता	(आ) सुमित्रानंदन पंत
3. ग्राम्या	(इ) सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'
4. निहार	(ई) जयशंकर प्रसाद

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : (सं) नगेंद्र, हरदयाल
3. हिंदी साहित्य का सरल इतिहास : विश्वनाथ त्रिपाठी
4. हिंदी साहित्य का नवीन इतिहास : लाल साहब सिंह
5. हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (द्वितीय खंड) : गणपतिचंद्र शुक्ल

इकाई 5 : भारतेंदु हरिश्चंद्र : एक परिचय

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 मूल पाठ : भारतेंदु हरिश्चंद्र : एक परिचय

5.3.1 जीवन परिचय

5.3.1.1 भारतेंदु की उपाधि

5.3.1.2 भारतेंदु मंडल

5.3.1.3 विभिन्न सभाओं, संस्थाओं की स्थापना

5.3.2 रचना यात्रा

5.3.3 रचनाओं का परिचय

5.3.3.1 नाटक

5.3.3.2 कविता

5.3.3.3 उपन्यास

5.3.3.4 कहानी

5.3.3.5 यात्रावृत्त

5.3.3.6 आलोचना

5.3.3.7 पत्रकारिता

5.3.3.8 अनुवाद

5.3.3.9 उर्दू रचनाएँ

5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

5.4 पाठ सार

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

5.6 शब्द संपदा

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक परिस्थितियाँ साहित्य को भी प्रभावित करती हैं। किसी देश की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों ने अवश्य ही वहाँ के साहित्य को प्रभावित किया है। इसी तरह इस भारत भूमि ने अवश्य ही हिंदी साहित्य को प्रभावित किया है। इस भारत भूमि ने ऐसे-ऐसे वीर सपूतों को जन्म दिया है जिन्होंने इसकी सेवा में अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। भारतभूमि और हिंदी के विभिन्न सेवकों में 'लल्लू लाल', 'सदल मिश्र', 'इंशा अल्लाह खाँ', सदासुख लाल, भारतेंदु हरिश्चंद्र, आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि हैं। इनमें भारतेंदु हरिश्चंद्र का अपना विशिष्ट महत्व है। इन्हीं के नाम पर हिंदी साहित्य में एक काल (युग) 'भारतेंदु युग' के नाम से जाना जाता है।

5.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में हम आधुनिक काल के प्रणेता भारतेंदु हरिश्श्चंद्र पर विचार करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- भारतेंदु के व्यक्तित्व से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु के कृतित्व से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु मंडल के विषय में जान सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में भारतेंदु के स्थान एवं महत्व को जान सकेंगे।
- भारतेंदु की भाषा-शैली की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।

5.3 मूल पाठ : भारतेंदु हरिश्चंद्र : एक परिचय

भारतेंदु हरिश्चंद्र के व्यक्तित्व और कृतित्व को हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर समझने का प्रयास करेंगे-

5.3.1 जीवन परिचय

भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म वाराणसी के एक संपन्न अग्रवाल परिवार में हुआ था। उस ज़माने में उनके परिवार की तूती बोलती थी। उनके परिवार का बड़ा मान-सम्मान था। इनके परिवार के कद का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि महाराज बनारस (काशीराज) के यहाँ इनके परिवार का उठना-बैठना था।

भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म 9 सितंबर, 1850 ई. (भाद्रपद शुक्ल 5 ऋर्षि पंचमी, सोमवार सं. 1907) को प्रात:काल, शिवाला, वाराणसी में हुआ था। दरअसल, भारतेंदु से पूर्व के पुत्रों के न बचने के कारण गर्भावस्था के समय उनकी माता शिवाले (भारतेंदु का ननिहाल) चली गईं। भारतेंदु जब पाँच वर्ष के थे तब उनकी माता का देहांत हो गया। नौ वर्ष की अवस्था में पिता की भी मृत्यु हो गई। इनकी पढ़ाई-लिखाई के संबंध में ओमप्रकाश सिंह ने श्रीब्रजरत्न दास के कथन को उद्धृत किया है। श्री ब्रजरत्नदास लिखते हैं- 'पं. ईश्वरीदत्त ही शुरू में इन्हें पढ़ाते थे। मौलवी ताज अली से कुछ उर्दू पढ़ी थी और अंगरेजी की प्रारम्भिक शिक्षा इन्हें पं. नन्दकिशोरजी से मिली थी। कुछ दिन इन्होंने ठठेरी बाजार वाले स्कूल में तथा कुछ दिन राजा शिवप्रसाद जी से शिक्षा प्राप्त की थी।' लगभग चौदह वर्ष की अवस्था में सन् 1863 में अगहन माह में इनका विवाह मन्नो देवी के साथ हुआ।

बोध प्रश्न

- श्री ब्रजरत्नदास के कथनानुसार भारतेंदु के बारे में बताइए।

भारतेंदु के व्यक्तित्व का एक पहलू यह भी है कि वे अपनी पत्नी से प्रेम नहीं करते थे। बहुत ही खर्चीले स्वभाव के थे। लंबी-लंबी यात्राएँ भी किया करते थे। वे वैष्णव भक्त थे [परंतु कट्टर न थे। उन्होंने रसखान आदि मुस्लिम कवियों की प्रशंसा करते हुए लिखा है-

इन मुसलमान हरि जनन पै कोटिन हिन्दुन वारियै।

अलीखान पाठान सुता यह ब्रज रखवारे।

सेख नबी रसखान मीर अहमद हरि प्यारे।।

निरमलदास कबीर ताजखां बेगम बारी।

तानसेन कृष्णदास बिजापुर नृपति दुलारी ।।

पिरजादी बीबी रास्ती पद रज नित सिर धारिये।

इन मुसलमान हरिजन पै कोटिन हिन्दू वारिये।।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु ने किन-किन मुसलमान कवियों की प्रशंसा की है?

उन्होंने शिक्षा को बहुत महत्व दिया था। इन्होंने 'चौखम्भा विद्यालय' की स्थापना की थी। पहले यह प्राइमरी स्कूल था, फिर मिडिल स्कूल हुआ, फिर हरिश्चंद्र इण्टरमीडिएट कॉलेज कहलाया। वर्तमान में इसे हरिश्चंद्र पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज के नाम से जाना जाता है। उनकी कद काठी का वर्णन करते हुए श्रीब्रजरत्नदास ने लिखा है- भारतेंदु जी कद के कुछ लम्बे और शरीर से एकहरे थे, न अतयंत कृश और न मोटे ही। आंखें कुछ छोटी और धंसी हुई सी थीं तथा नाक बहुत सुडौल थी। कान कुछ बड़े थे, जिन पर घुंघराले बालों की लटें लटकती रहती थीं। ऊंचा ललाट इनके भाग्य का द्योतक था। इनका रंग सांवलापन लिए हुए था। शरीर की कुल बनावट सुडौल थी।' भारतेंदु जी बनारस के रहने वाले थे, इसलिए उनमें बनारसीपन का होना स्वाभाविक था। उनके विषय में ओमप्रकाश सिंह ने बड़ी ही मज़ेदार बात बताई है। वे लिखते हैं- 'छोटी अवस्था में ही भारतेंदु बनारसी रंग में रंग गए थे। 'बुढ़वा मंगल' के अवसर पर गंगा में बजरे पर बाईजी को देखकर भारतेंदु के मन में जो विचार उठे थे, सुंदरता का उन पर जो प्रभाव पड़ा था, उससे संकेत मिल जाता है कि आगे चलकर बालक का स्वभाव कैसा होगा। इसी तरह जल से तर्पण करते हुए पिता से भारतेंदु का यह पूछना कि "जल में जल मिलाने से क्या होता है?" उनकी मानसिकता को स्पष्ट कर देता है। अनायास नहीं है कि आगे चलकर यही हरिश्चंद्र तर्पण के लिए जल्दी करने और माधो जी द्वारा पुकारे जाने पर लघुशंका करने बैठ जाता है और पुकारने वाले के पुरखों का नाम ले-लेकर 'तृप्यंताम' जोड़ता जाता है। लावनी बाजों के दल में शामिल होकर लावनी गाने या काशिराज की सभा में व्याकरणाचार्य को चुनौती देते हुए

'झंपोका' शब्द का अर्थ पूछना भारतेंदु के बनारसी फक्कड़पन को स्पष्ट करता है। इसी तरह यूरोपीय विद्वान द्वारा पृथ्वी पर सूर्य और चंद्र को उतारे जाने या मेम द्वारा खड़ाऊं पर गंगा पार करने की घोषणा करके भीड़ इकट्ठा कर देना और बाद में पहली अप्रैल की तरफ लोगों का ध्यान आकर्षित करा देना, भारतेंदु की बनारसी मस्ती के अंदाज थे।' इस तरह की घटनाओं को देखकर यह बात तो साफ है कि वे हृदय से प्रेमी, मस्तिष्क से तार्किक थे। कभी-कभी जी में आया तो हुल्लड़बाजी भी कर लिया करते थे।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु जी के बनारसीपन और फक्कडपन की चर्चा कीजिए।

5.3.1.1 'भारतेंदु' की उपाधि

उनके स्वभाव में तीखापन, तार्किकता तो पहले से विद्यमान थी। इसके साथ-साथ साहित्यिक स्तर पर उनका अपना एक गुट था। भारतेंदु जी ने राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' से अंग्रेजी सीखी थी यह सच है लेकिन यह भी सच है कि कई सारे मुद्दों पर विशेष रूप से भाषा के मुद्दे पर उनमें मतभिन्नता थी। इस विषय में दो बातें आती हैं कि इनके द्वारा कई बार काशी के ब्राह्मणों पर तल्ख टिप्पणी की गई।। इससे नाराज़ ब्राह्मणों ने एक बैठक बुलाई उसमें ये स्वयं उपस्थित हुए। उसमें इनसे कहा गया कि आप तो सज्जन पुरुष हैं फिर आप हमारे विषय में इतने बुरे विचार क्यों रखते हैं? सारे ब्राह्मण बुरे नहीं हैं। उस बैठक में किसी बुजुर्ग ब्राह्मण ने इन्हें भारतेंदु कहकर संबोधित किया। सबने इस नाम पर सहमति दी। स्वयं भारतेंदु ने भी अपनी सहमति दे दी।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु को 'भारतेंदु' नाम मिलने की पहली घटना बताइए।

दूसरी बात यह पता चलती है कि इन्हें भारतेंदु की उपाधि राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के विरोध स्वरूप मिली। राजा शिव प्रसाद को अंग्रेजों द्वारा 'सितारे हिन्द' (हिन्द का सितारा) कहा तो जनता ने इन्हें 'भारतेंदु' (भारत का चाँद) कहा। इस विषय में राधाकृष्ण दास लिखते हैं- 'सन् 1880 ई. के 'सारसुधानिधि' में एक लेख छपा कि इन्हें 'भारतेंदु' की पदवी देनी चाहिए, इसको एक स्वर से सारे देश ने स्वीकार कर लिया और सब लोग इन्हें भारतेंदु लिखने लगे, यहाँ

तक कि भारतेंदु जी इनका उपनाम ही हो गया । इस पदवी को न केवल इस देश के लोगों ने स्वीकार किया, वरन् युरोप के लोग भी बराबर इन्हें भारतेंदु लिखने लगे। विलायत के विद्वान इन्हें मुक्तकंठ से Poet Laureate of Northern India (उत्तरीय भारत के राजकवि) मानते और लिखते थे। एज्यूकेशन कमीशन के साक्षी नियुक्त हुए। लार्ड रिपन के समय में राजा शिवप्रसाद से बिगड़ने पर हजारों हस्ताक्षर से गवर्नमेंट की सेवा में मेमोरियल गया था कि इनको लेजिस्लेटिव काउंसिल का मेम्बर चुनना चाहिए।' भारतेंदु हरिश्चंद्र ग्रंथावली के संपादक ओमप्रकाश सिंह ने बताया है कि 'पं. सुधाकर जी द्विवेदी अपनी राम कहानी की भूमिका में लिखते हैं कि "यह मेरे सामने की बात है कि लाहौर के जटला पंडित के वंश के पंडित रघुनाथ जंबू के महाराज श्री रणबीर सिंह की नाराज़ी से जंबू छोड़कर बनारस चले आए थे। उनसे और बाबू हरिश्चंद्र जी से बहुत मेल था। बनारस के अति प्रसिद्ध विद्वान पंडित बाल शास्त्री ने जब अपनी व्यवस्था से कायस्थों को क्षत्री बनाया, उस समय बाबू साहब ने अपनी मैगजीन में 'सबै जाति गोपाल की' इस सिरनामे से काशी के पंडितों की बड़ी धूल उड़ाई। इस पर पंडित रघुनाथ जी बहुत नाराज होकर बाबू साहब से बोले कि "आप को कुछ ध्यान नहीं रहता कि कौन आदमी कैसा है, सभी का अपमान किया करते हो। जैसे आप अपने सुयश से जाहिर हो उसी तरह भोगविलास और बड़ों के असम्मान करने से आप कलंकी भी हो, इसलिए आज से मैं आपको भारतेंदु नाम से पुकारा करूंगा।" उस समय मैं और भरतपुर के राव श्रीकृष्ण, देशवरण सिंह मौजूद थे। हम लोग भी हँसी से कहने लगे कि बस बाबू साहब सचमुच भारतेंदु हैं। बाबू साहब ने भी हँसकर कहा कि "मैं नाराज़ नहीं हूँ आप लोग खुशी से मुझे भारतेंदु कहिए।" मैंने कहा कि "पूरे चांद में कलंक देख पड़ता है आप दूइज के चांद हैं जिसके दर्शन से लोग पुण्य समझते हैं।" यह उपाधि आज भी प्रयोग में लाई जाती है और इसी उपाधि को आधार बनाकर 'भारतेंदु युग' नामक एक समयावधि निर्धारित की गई है। भारत का यह चाँद (भारतेंदु) सन् 1885 ई. में हमेशा-हमेशा के लिए अस्त हो गया।

बोध प्रश्न

- पंडित सुधाकर जी द्विव्दि ने भारतेंदु नाम दिए जाने की क्या घटना बताई है?

5.3.1.2 भारतेंदु मंडल

पूर्व में ही विदित है कि भारतेंदु हरिश्चंद्र की विचारधारा एक नवीन विचारधारा रही है। इस विचारधारा में प्रेम, व्यंग्य, देशभक्ति, राजभक्ति आदि दृष्टिगोचर होते हैं। भारतेंदु की विचारधारा से सहमत लोगों का अपना एक समूह बन गया जो भारतेंदु की विचारधारा को दृष्टिगत रखते हुए अपना लेखन करता था। इस समूह को हिंदी साहित्य में 'भारतेंदु मंडल' के नाम से जाना जाता है। भारतेंदु मंडल के कवियों-साहित्यकारों पर टिप्पणी करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी लिखते हैं- 'सहज-चटुल शैली के पुरस्कर्ता पं. प्रतापनारायण मिश्र (1856-1894 ई.), तीखी और झनझना देने वाली भाषा में खरी-खरी सुना देने वाले पं. बालकृष्ण भट्ट (1844-1914 ई.) अनुप्रास युक्त शैली की कविजनोचित भाषा लिखने वाले ठाकुर जगमोहन सिंह (1857-1899 ई.) और बद्रीनारायण चौधरी (1855-1922 ई.), नाटकों और उपन्यासों के क्षेत्र में नए मार्ग का प्रदर्शन करने वाले लाला श्रीनिवास दास (1851-1887 ई.) शास्त्रीय विचार-परंपरा के धनी संस्कृत के उत्कृष्ट विद्वान और लेखक पंडित अंबिका दत्त व्यास (1858-1900 ई.) अपने अगाध पांडित्य की छाया में सहज ठेठ शैली के पुरस्कर्ता महामहोपाध्याय पं. सुधाकर द्विवेदी (1850-1911 ई.), संस्कृत के विद्वान और भक्त साहित्यिक पं. राधाचरण गोस्वामी (1808-1925 ई.) तथा सुप्रसिद्ध नाटककार और प्राचीन साहित्योद्धारक बाबू राधाकृष्णदास (1865-1907 ई.) आदि अनेक सुलेखक उनसे प्रेरणा ग्रहण करके हिंदी साहित्य की श्रीवृद्धि करने लगे।' इनके अतिरिक्त अन्य विद्वान बाबू तोताराम, पं. मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या, पं. भीमसेन शर्मा, बालमुकुन्द गुप्त आदि प्रमुख हैं जिन्होंने भारतेंदु से प्रेरणा लेकर भारतेंदु युग के अंतर्गत लेखन किया। आगे चलकर इसी पैटर्न पर 'द्विवेदी मंडल' भी बना जिसमें आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी से प्रेरणा लेकर लेखन किया गया।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु मंडल में शामिल प्रमुख साहित्यकारों के नाम बताइए।

5.3.1.3 विभिन्न सभाओं, संस्थाओं की स्थापना

भारतेंदु हरिश्चंद्र का जीवन काल बहुत ही कम था [परंतु उन्होंने बहुत कुछ किया। कई सारे ऐसे कार्य थे जो उन्होंने शुरू किए [परंतु पूरे न कर सके। ओमप्रकाश सिंह लिखते हैं- 'हरिश्चंद्र अपने जीवन में बहुत कुछ करना चाहते थे। वे कार्य आरंभ कर देते पर पूरा न कर पाते।

यह अनायास नहीं है कि 'चन्द्रावली नाटिका' में उन्होंने अपने को 'आरम्भशूर' कहलवाया है।' उन्होंने काशी में 'पेनीरीडिंग क्लब', 'तदीय समाज', 'वैश्यहितैषिणी सभा' की स्थापना की थी। वे समस्यापूर्ति भी करवाया करते थे।

पेनीरीडिंग क्लब में लेखकों को आमंत्रित किया जाता था। वे अपने लेख पढ़ते इनमें से अच्छे लेखों को 'हरिश्चंद्र मैगजीन' में छापा जाता। इस क्लब में गाने बजाने का भी कार्यक्रम होता था। सन् 1873 ई. में काशी में 'तदीय समाज' नामक संस्था की स्थापना की गई। इस संस्था द्वारा धर्म तथा ईश्वर भक्ति के साथ समाज सुधार का कार्य भी किया जाता था। हरिश्चंद्र को 'तदीय नामांकित अनन्य वीरवैष्णव' की पदवी मिली थी। गोरक्षा प्रयास के तहत इसी संस्था के बैनर तले 1877 ई. में दिल्ली दरबार के अवसर पर गोरक्षा के संदर्भ में 60000 लोगों द्वारा हस्ताक्षरित पत्र भेजा गया था।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु को आरंभशूर क्यों माना जाना चाहिए?

बनारस में ही 'वैश्यहितैषिणी सभा' की स्थापना वैश्य समुदाय को दृष्टिगत रखते हुए की गई थी। होमियोपैथिक चिकित्सा का आरंभ होने पर भारतेंदु ने सन् 1868 ई. में 'होमियोपैथिक दातव्य चिकित्सालय' भी शुरू करवाया। वे लड़कियाँ जो परीक्षा में सफल होती थीं वे उन्हें पुरस्कार देते थे। बम्बई, मद्रास, बंगाल आदि विश्वविद्यालयों से जो लड़कियाँ परीक्षा में सफल होतीं वे उनके लिए बनारसी साड़ी भेजते थे।

उन्होंने अपने पुश्तैनी व्यवसाय यानी व्यापार में भी प्रयास किया था। उन्होंने व्यापार के लिए 'हरिश्चंद्र ऐंड ब्रदर्स' नाम से एक फर्म (प्रतिष्ठान) बनाया था। इसका उद्देश्य वास्तविक दाम पर तमाम वस्तुएँ उपलब्ध करवाना था। इस फर्म के विज्ञापन 'कविवचन सुधा' और हरिश्चंद्र चंद्रिका आदि पत्रिकाओं में निकलते थे। उनका यह प्रयास सफल नहीं हुआ।

5.3.2 रचना यात्रा

भारतेंदु हरिश्चंद्र को एक नाटककार के रूप में विशेष रूप से प्रसिद्धि मिली है। इनके नाटकों में देश प्रेम, राज प्रेम, स्त्री शिक्षा, व्यंग्य, सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार, धार्मिकता आदि के दर्शन होते हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने कविताएँ भी खूब लिखी हैं। इनकी कविताओं से इनके

प्रकृति प्रेमी होने का पता चलता है। इनकी कई रचनाओं के नाम में ‘प्रेम’ शब्द मिलता है। इनकी कविताओं से ही देश प्रेम, राजभक्ति, प्रेमी हृदय की अनुभूति आदि का पता चलता है। भारतेंदु हरिश्चंद्र उपन्यास के प्रति भी बहुत उत्सुकता का भाव रखते थे।

वर्तमान में कहानियाँ जिस रूप में मिलती हैं उस रूप में तो उन्होंने कोई कहानी नहीं लिखी हालांकि उनकी कुछ रचनाओं में कहानी के तत्व अवश्य ही विद्यमान हैं। उन्होंने कई जगहों की यात्रा की थी और उसे यात्रा वृतांत के रूप में लिखा भी था। उनका ‘नाटक’ नामक निबंध भले ही निबंध के रूप में है लेकिन उससे उनकी आलोचनात्मक दृष्टि का पता चलता है। उन्होंने कविवाचन सुधा और बालाबोधिनी जैसी पत्रिकाओं का प्रकाशन भी किया था। उन्होंने अनुवाद का भी प्रयास किया था। कुछ आर्थिक मजबूरियों के कारण वे अनुवाद करके उसका प्रकाशन नहीं करवा पाए। बहुत कम लोग जानते हैं कि वे उर्दू में भी रचनाएँ करते थे। उन्होने ग़ज़लें भी लिखी हैं। उन्होने इस्लाम व मुसलमानों से सबंधित रचनाएँ भी की हैं जैसे- ‘पंच पवित्रात्मा’। इसके अंतर्गत इस्लाम के 5 महानुभावों पर हरिश्चंद्र ने अपने विचार प्रकट किए हैं। इनमें ये शीर्षक हैं- ‘मुसलमानी मत के मूलाचार्य्य अर्थात महात्मा मुहम्मद, आदरणीय अली, बीबी फातिमा, इमाम हसन और इमाम हुसैन की संक्षिप्त जीवनी।’ इसके अलावा ‘बादशाह दर्पण अर्थात् हिन्दुस्तान के मुसलमान बादशाहों के समय और जन्म आदि के मुख्य बातों के वर्णन का चक्र’, ‘मुसलमान-राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास’ अकबर और औरंगजेब आदि पर लिखा गया है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु ने अपनी रचना ‘पंच पवित्रात्मा’ में किसके-किसके बारे में लिखा हैं?

5.3.3 रचनाओं का परिचय

भारतेंदु हरिश्चंद्र की रचनाएँ विभिना विधाओं में हैं। उन्हें हम अलग-अलग शीर्षकों में बांटकर देख सकते हैं।

5.3.3.1 नाटक

उनके द्वारा कई नाटक लिखे गए जैसे- वैदिकी हिंसा हिंसा न भवित, पांचवें पैगंबर, प्रेमजोगिनी, भारत दुर्दशा, श्री चन्द्रावली (नाटिका), विषस्यविषमौषधम्, सत्यहरिश्चंद्र, अंधेर

नगरी चौपट्ट राजा, नील देवी, सती प्रताप। इनके दस मौलिक नाटक हैं। 'भारत जननी' भारतेंदु का नाटक नहीं है। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपनी जीवनकाल में कुछ नाटकों का संशोधन-परिवर्द्धन भी किया था। नाटक किसी और ने लिखा था उसमें कुछ जोड़-घटाव भारतेंदु हरिश्चंद्र ने किया था। ऐसे नाटक भी भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाम से ही छप गए। 'भारत जननी' ऐसा ही नाटक है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाटकों के नाम बताइए।

5.3.3.2 कविता

इनकी कविताओं को भारतेंदु हरिश्चंद्र ग्रंथावली – 3 तथा 4 (सं. ओमप्रकाश सिंह) में स्थान मिला है। ओमप्रकाश सिंह लिखते हैं 'उनकी कविताओं का विश्लेषण कथ्य के आधार पर करें तो उसमें सबसे अधिक ईश्वर और धर्म संबंधी कविताएँ होंगी। भारतेंदु के काव्य साहित्य का लगभग दो तिहाई स्थान ऐसी ही कविताएँ घेरती हैं। .... भारतेंदु की ऐसी कविताओं की एक और विशेषता है - प्रेम के महत्व की स्वीकृति। इसीलिए अपने अधिकांश संकलनों के नाम में उन्होंने इस शब्द (प्रेम) को स्थान दिया है। .... आप देखेंगे, इस खण्ड (खण्ड-3) में जितनी कविताएँ दी गई हैं, लगभग सबके शीर्षक में प्रेम शब्द विद्यमान है। यदि किसी शीर्षक में प्रेम शब्द नहीं है तो कविता के केंद्रीय भाव में प्रेम की मजबूत सत्ता अवश्य है। इसीलिए इस खण्ड का नामकरण 'प्रेम अर्पण की कविताएँ' किया गया है।' इनके नाम इस प्रकार हैं- प्रेम मालिका, प्रेमाश्रु वर्षण, प्रेम सरोवर, प्रेम तरंग, सतसई सिंगार, प्रेम प्रलाप, होली, राग संग्रह, वर्षा विनोद, प्रेम माधुरी, मधु मुकुल, फूलों का गुच्छा, प्रेम पुलवारी, कृष्ण चरित्र। इनकी राजभक्तिपरक कविताएं भी इसी खण्ड में दी गई हैं। इस खण्ड का नाम प्रेम अर्पण की कविताएँ, राजभक्ति की कविताएँ, अन्य कविताएँ, भारतीय भाषा की अन्य कविताएँ रखा गया है। 'प्रेम अर्पण की कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत वैशाख माहात्म्य, दानलीला, प्रबोधिनी, उत्तरार्द्ध भक्तमाल आदि है। 'राजभक्तिपरक कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत श्री राजकुमार सुस्वागत, भारत भिक्षा, भारत वीरत्व, विजय वल्लरी, विजयिनी विजय पताका या वैजयंती, रिपनाष्टक आदि। 'अन्य कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत बकरी विलाप, बन्दर सभा, दशरथ विलाप आदि हैं। 'भारतीय भाषा की अन्य कविताएँ' शीर्षक के अंतर्गत गुजराती भाषा की कविता, पंजाबी भाषा की कविता, मारवाड़ी भाषा की कविता – धमार देश और बंगभाषा की कविता संकलित है।

बोध प्रश्न

- भरेन्दु की कविताओं पर अपने विचार लिखिए।

5.3.3.3 उपन्यास

एक पत्र में वे लिखते हैं- 'जैसे भाषा में अब कुछ नाटक बन गए हैं, अब तक उपन्यास नहीं बने हैं। आप या हमारे पत्र के योग्य सहकारी सम्पादक जैसे बाबू काशीनाथ व गोस्वामी राधाचरण जी कोई भी उपन्यास लिखें तो उत्तम हैं। यदि ऐसी इच्छा हो तो 'दीपनिर्वाण' नामक उपन्यास का अनुवाद हो। यह उपन्यास केवल उपन्यास ही नहीं है। भारतवर्ष से इससे एक बड़ा संबंध है।' उन्होंने अपने सहयोगियों को उपन्यासों के अनुवाद के लिए भी प्रेरित किया। वे स्वयं बंकिमचंद्र चटर्जी के उपन्यास 'राजसिंह' का अनुवाद करने लगे थे [परंतु उसे पूरा न कर सके।

5.3.3.4 कहानी

आज कहानी का जो रूप दिखता है वैसी कहानी तो उन्होने नहीं लिखी। रामविलास शर्मा ने लिखा है- ' 'कलिराज की सभा', 'एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न', 'राजा भोज का सपना', स्वर्ग में विचार सभा का अधिवेशन', 'यमलोक की यात्रा' आदि रचनाओं में कहानी के अनेक तत्व विद्यमान हैं।' कहानी के संदर्भ में भी उन्हें याद किया जाना चाहिए।

5.3.3.5 यात्रावृत्त

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने जीवन में कई यात्राएँ की थीं। उनकी प्रमुख यात्राओं में हरिद्वार, लखनऊ, जबलपुर, सरयूपार की यात्रा, वैद्यनाथ की यात्रा, जनकपुर की यात्रा शामिल है। उनकी यात्रा के संबंध में रामविलास शर्मा लिखते हैं- 'बीस साल की अवस्था में उन्होंने कानपुर, लखनऊ, सहारनपुर, मसूरी, लाहौर, अमृतसर, दिल्ली, आगरा आदि स्थानों की यात्रा की जिसमें तैंतीस दिन लगे। छ: साल बाद वह अजमेर गए और इसके दो साल बाद अयोध्या आए। अयोध्या से उन्होंने बस्ती और गोरखपुर का भ्रमण किया ..... सन् 1884 में उन्हें व्याख्यान देने के लिए बुलाया गया। इसके सिवा उन्होंने कलकत्ता की यात्रा भी की थी।' वर्तमान में यात्रा करना एक शौक समझा जाता है। जहाँ इंसान सुकून और सुख-सुविधा की आकांक्षा रखता है [परंतु भारतेंदु हरिश्चंद्र के लिए ऐसा नहीं था। रामविलास शर्मा लिखते हैं- 'भारतेंदु की यात्रा सिर्फ शौकीनों की यात्रा न थी। यह उनकी शिक्षा का आवश्यक अंग था। यात्रा

में उन्हें काफी कष्ट उठाने पड़ते थ।' भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपनी यात्राओं से भी काफी कुछ सीखा था। बीस वर्ष की अवस्था में वे तैंतीस दिनों की लम्बी यात्रा पर गए। उन तैंतीस दिनों में उन्होंने जो यात्रा की उसकी सूची इस प्रकार है-

प्रथम गए चरणाद्रि कान्हपुर को पग धारे।

बहुरि लखनऊ होइ सहारनपुर सिधारे।।

तहं मन्सूरी होइ जाइ हरिद्वार नहाए।

फेर गए लाहौर सुपुनि बरसर आए।।

दिल्ली दै ब्रज बसि आगरा देखत पहुंचे आप घर।

तैंतीस दिवस में यातरा यह कीन्हीं हरिचन्द्र बर।।

5.3.3.6 आलोचना

जहाँ तक आलोचना का प्रश्न है तो उन्होंने 'नाटक' शीर्षक रचना को भले ही निबंध कहा है [परंतु इसमें उनकी आलोचनात्मक दृष्टि साफ तौर पर दिखती है। उन्होंने नाटकों को समझने के लिए ही नाटक (निबंध) लिखा था। 'नाटक' तथा 'संगीतसार' भले ही निबंध हैं [परंतु इससे हमें उनकी आलोचनात्मक दृष्टि का पता चलता है। उनके नाटक (निबंध) से ही हिंदी साहित्य में तुलनात्मक और ऐतिहासिक समालोचना की नींव पड़ी।

5.3.3.7 पत्रकारिता

भारतेंदु हरिश्चंद्र ने अपने छोटे से जीवनकाल में पत्रकारिता का भी काम किया। उन्होंने कई पत्रिकाओं को प्रकाशित कराया। उन्होंने कविवचन सुधा, हरिश्चंद्र मैगजीन, बालाबोधिनी, हरिश्चंद्र चन्द्रिका जैसी पत्रिकाओं का संपादन किया। उन्होंने 'भगवद्भक्तितोषिणी' जैसे धार्मिक पत्रिका के एक-दो अंक निकाले थे। 'कविवचन सुधा' पहले पद्य में छपती थी बाद में इसमें गद्य भी छापा जाने लगा। यह मासिक से पाक्षिक और फिर पाक्षिक से साप्ताहिक हो गई। 'कविवचन सुधा' के पाँच साल बाद 'हरिश्चंद्र मैगजीन' का प्रकाशन हुआ। बाद में इसी का नाम बदलकर 'हरिश्चंद्र चन्द्रिका' रखा गया। उन्होंने स्त्रियों के लिए 'बालाबोधिनी' नामक पत्रिका भी चार साल तक निकाली। 'हरिश्चंद्र चन्द्रिका' छ: साल तक निकली।

5.3.3.8 अनुवाद

उन्होंने अनुवाद के क्षेत्र भी प्रयास किया। कुरआन शरीफ का हिंदी में अनुवाद करना प्रारंभ किया [परंतु पूरा नहीं कर पाए। इसी तरह वे बंकिमचन्द्र चटर्जी के उपन्यास ‘राज सिंह’ का अनुवाद स्वयं करना चाहते थे। वह काम अधूरा ही रह गया। उनकी मृत्यु के बाद राधाकृष्णदास ने इस अधूरे कार्य को पूरा किया। उन्होने कुरान शरीफ के कुछ पारह (अध्याय) का अनुवाद भी किया है।

5.3.3.9 उर्दू रचनाएँ

भारतेंदु हरिश्चंद्र की निगाह में उर्दू किसी धर्म विशेष के लोगों की भाषा नहीं थी। उन्होंने उर्दू में भी लेखन किया है। वे ‘कासिद’ नाम से एक उर्दू साप्ताहिक पत्र निकालना चाहते थे लेकिन आर्थिक कारणों से नहीं निकाल पाए। भारतेंदु ने उर्दू पद्य तथा गद्य दोनों में लिखा है। वे गज़लें भी पढ़ते थे। उनकी कई ग़ज़लें हैं। इन्होंने गजलों में अपना तखल्लुस (उपनाम) ‘रसा’ (पहुँचा हुआ) रखा है। उन्होंने उर्दू ग़ज़लों का संग्रह करके ‘गुलजारे पुरबहार’ नामक पुस्तक (ग़ज़ल संग्रह) छपवाई। इनकी ग़ज़लें कानपुर से प्रकाशित ‘बहार गुलशन’ नामक संग्रह में भी पाई जाती हैं। उन्होंने ‘खुशी’ शीर्षक निबंध तथा ‘कानूनताज़ीरात’ शीर्षक से व्यंग्य रचना उर्दू में लिखी। उनकी ग़ज़ल के कुछ शे’र द्रष्टव्य हैं-

1. बाद मुर्दन कौन आता है खबर को ऐ ‘रसा’।

   खत्म बस कुंजे लहद तक दोस्ताना हो गया।।

2. कब्र में सोए हैं महशर का नहीं खटका ‘रसा’।

   चौंकने वाले हैं कब हम सूर की आवाज़ से।।

यहाँ ‘लहद’ का अर्थ कब्र तथा ‘सूर’ का अर्थ प्रलय (क़यामत) के समय बजने वाला ‘नरसिंहा बाजा’ है।

5.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

हिंदी के आधुनिक काल का काल विभाजन करने पर पहला काल 'भारतेंदु युग' आता है। यह नाम हिंदी साहित्य की एक महान् शख्सियत भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाम पर पड़ा है। हिंदी साहित्य में भारतेंदु युग के प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र हैं। इसे ही नवीन प्रवत्तियों आदि के आधार पर 'नवजागरण काल' या 'जागरण काल' भी कहा जाता है।

भारतेंदु हरिश्चंद्र के काव्य की महत्ता को स्पष्ट करते हुए आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है 'भारतेंदु का पूर्ववर्ती काव्य-साहित्य संतों की कुटिया से निकलकर राजाओं और रईसों के दरबार में पहुँच गया था, उसमें मनुष्य को प्रत्याहिक सुख-सुविधाओं के जंगल से मुक्त करके शाश्वत देवत्व के पवित्र लोक में ले जाने की महत्वाकांक्षा लुप्त हो चुकी थी। वह मनुष्य को देवता बनाने के पवित्र आसन से च्युत होकर मनोविनोद का साधन हो गया था। ऐसा होना वांछनीय नहीं था। जिन संतों और महात्माओं ने काव्य में मनुष्य को देवता बनाने की शक्ति संचारित की थी, उनके चेलों ने उनके नाम पर संप्रदाय स्थापित किए, काव्य को देवता बनाने की शक्ति लुप्त हो गई, उसकी सांप्रदायिक अद्‌भुत व्याख्याएँ शुरू हो गईं और दूसरी ओर कवियों की दुनिया राजदरबारों की ओर खिंच गई। भारतेंदु ने कविता को इन दोनों ही प्रकार की अधोगतियों के पंथ से उबारा। उन्होंने एक तरफ तो काव्य को फिर से भक्ति की मंदाकिनी में स्नान कराया और दूसरी तरफ उसे दरबारीपन से निकालकर लोक जीवन के आमने-सामने खड़ा कर दिया।' आचार्य द्विवेदी के इस कथन से ही भारतेंदु के काव्य की महत्ता स्पष्ट हो जाती है।

भाषा के संदर्भ में भारतेंदु हरिश्चंद्र का कहना था 'जिन भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल'। भारतेंदु जी का प्रादुर्भाव जिस काल में हुआ था वह काल हिंदी साहित्य में ब्रजभाषा का काल था। उनकी भाषा के संदर्भ में भारतेंदु हरिश्चंद्र ग्रंथावली के संपादक ओमप्रकाश सिंह लिखते हैं- 'उनकी ज्यादातर कविताएँ ब्रजभाषा में हैं। कुछ कविताएँ उर्दू और खड़ी बोली में हैं। एक-दो कविताएँ अन्य भारतीय भाषाओं में भी हैं।' वह शुरूआती काल था जब खड़ी बोली में कविताएँ लिखने का प्रयास हो रहा था, साथ ही साथ गद्य में भी लेखन के प्रयास जारी थे। हिंदी गद्य के प्रारंभिक लेखकों में लल्लू लाल, सदासुख लाल, सदल मिश्र, मुंशी इंशा अल्लाह खाँ आदि थे [परंतु उनकी भी अपनी सीमाएँ थीं। भारतेंदु हरिश्चंद्र की भाषा पर टिप्पणी करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है- 'उनकी भाषा में न तो लल्लू लाल का ब्रजभाषापन आने पाया, न

मुंशी सदासुख का पंडिताऊपन, न सदल मिश्र का पूरबीपन, न राजा शिवप्रसाद का उर्दूपन और न राजा लक्ष्मण सिंह का खालिसपन और आगरापन। इतने 'पनों' से एक साथ पीछा छुड़ाना भाषा के संबंध में बहुत ही परिष्कृत रुचि का परिचय देता है। संस्कृत शब्दों के रहने पर भी भाषा का सुबोध बना रहना, फारसी-अरबी के शब्द आने पर भी साथ-साथ उर्दूपन न आना, हिंदी के स्वतंत्र सत्ता का प्रमाण था। उनका भाषा संस्कार शब्दों की काट-छाँट तक ही नहीं रहा। वाक्य-विन्यास में भी वे सफाई लाए। उनकी लिखावट में एक साथ न जुड़ सकने वाले वाक्य एक में गुँथे हुए प्राय: नहीं पाए जाते।' भाषा के संदर्भ में सन् 1873 ई. में उन्होंने अवश्य ही 'हिंदी नए चाल में ढली' की घोषणा कर दी।

उन्होंने मुख्यत: मुक्तक एवं गीति-शैली का प्रयोग किया है। इन मुक्तकों में भावात्मकता के साथ मार्मिकता विद्यमान है। व्यंग्यात्मक शैली भी विद्यमान है। उनके काव्य में विविध रस यथा- श्रृंगार रस, करुण रस, भक्ति रस, रौद्र रस, वीर रस आदि। इन्होंने कवित्त, सवैया एवं दोहा छंद का प्रयोग किया है। अलंकार में इन्होंने अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा आदि का प्रयोग किया है। इनके यहाँ प्रसाद, ओज, माधुर्य गुण का प्रयोग है। भारतेंदु हरिश्चंद्र का भाषा संबंधी दृष्टिकोण सुधारात्मक था।

5.4 पाठ सार

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतेंदु के व्यक्तित्व में बनारसी फक्कड़पन है। वे ख़र्चीले स्वभाव के थे। उनकी रचनाएँ तत्कालीन परिस्थितियों का पूरा आभास दिलाती है। उनमें भक्ति के साथ तत्कालीन समाज व देश कि राजनीतिक स्थिति को भी देखा जा सकता है।

इन्होंने अपनी रचनाओं में यदि एक तरफ राधा- कृष्ण की भक्ति ई है तो दूसरी तरफ मुहम्मद साहब आदि मुस्लिम महानुभावों पर भी लिखा है। एक तरफ वे देशभक्तिपरक कवितायें लिखते हैं तो दूसरी तरफ राजभक्ति फरक कवितायें भी लिखते है। ये उनके व्यक्तित्व की विशेषता है।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. भारतेंदु के व्यक्तित्व में देशभक्ति के साथ राजभक्ति और बनारसी फक्कड़पन का विशेष स्थान है।
2. भारतेंदु बराबर हिन्दू-मुस्लिम एकता के पक्षधर बने रहे। इसका प्रमाण उनका साहित्य है।
3. भारतेंदु की कविता में प्रेम, भक्ति, व्यंग्य प्रमुख हैं। उन्होंने 'रसा' उपनाम से गजलें भी रचीं।
4. भारतेंदु ने कई पत्रिकाओं का प्रकाशन और संपादन किया, कई संस्थाएँ बनाईं, विद्यालय स्थापित किया, पढ़ने-लिखने का माहौल बनाने का प्रयास किया।
5. भारतेंदु हरिश्चंद्र की काव्य-भाषा मुख्यत: ब्रज है [परंतु उन्होंने खड़ी बोली में भी कुछ कविताएँ लिखी। वे मातृभाषा के प्रबल पक्षधर थे।

5.6 शब्द संपदा

1. उर्दूपन = उर्दू से युक्त
2. तखल्लुस = उपनाम
3. फक्कडपन = निश्चिंत रहने वाला
4. भारतेंदु = भारत का चाँद
5. सितारेहिंद = हिन्द या भारत का सितारा

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु मंडल पर अपने विचार लिखिए।
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र के कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
3. हिंदी साहित्य में भारतेंदु हरिश्चंद्र के महत्व पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु हरिश्चंद्र को 'भारतेंदु' की उपाधि कैसे मिली?
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविताओं के विषय में लिखिए।
3. भारतेंदु हरिश्चंद्र की उर्दू रचनाओं की चर्चा कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'भारतेंदु युग' के प्रवर्तक कौन हैं? ( )

(अ) भारतेंदु हरिश्चंद्र (आ) प्रतापनारायण मिश्र

(इ) महावीर प्रसाद द्विवेदी (ई) सुधाकर द्विवेदी

2. 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' किसका नाटक है? ( )

(अ) लाला लक्ष्मीनारायण लाल (आ) उपेन्द्रनाथ अश्क

(इ) जगदीशचंद्र माथुर (ई) भारतेंदु हरिश्चंद्र

3. भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म वर्ष है? ( )

(अ) 1885 ई. (आ) 1857 ई. (इ) 1850 ई. (ई) 1843 ई.

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'बालाबोधिनी' पत्रिका का प्रकाशन ....करते थे।
2. 'हिंदी नए चाल में ढली' की घोषणा वर्ष ....में भारतेंदु ने की।
3. भारतेंदु अपनी ग़ज़लों में अपना तखल्लुस या उपनाम ....रखते थे।

III. सुमेल कीजिए -

1. अग्रवाल परिवार (अ) पंचपवित्रात्मा
2. सरयूपार की यात्रा (आ) सबै जाति गोपाल की
3. मुहम्मद साहब आदि (इ) यात्रा वृतांत
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र (ई) भारतेंदु हरिश्चंद्र

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास : सत्यदेव मिश्र
2. चिंतामणि भाग-1 : रामचंद्र शुक्ल
3. भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र का जीवन चरित्र : राधाकृष्ण दास
4. भारतेंदु हरिश्चंद्र ग्रंथावली – 1-6 : सं. ओमप्रकाश सिंह
5. भारतेंदु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएँ : रामविलास शर्मा
6. भारतेंदु युग और हिंदी भाषा की विकास परंपरा : रामविलस शर्मा
7. हिंदी साहित्य : उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 6 : ‘कहाँ करुणानिधि केशव सोए’ और ‘मातृभाषा प्रेम’

रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना

6.2 उद्देश्य

6.3 मूल पाठ : ‘कहाँ करुणानिधि केशव सोए’ और ‘मातृभाषा प्रेम’

6.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

6.3.2 अध्येय कविता

6.3.3 विस्तृत व्याख्या

6.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

6.4 पाठ सार

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

6.6 शब्द संपदा

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! हिंदी साहित्य की महान विभूतियों में भारतेंदु हरिश्चंद्र का विशेष महत्व है। वे ‘भारतेंदु युग’ के प्रवर्तक थे। उनके नाटक, कविताएँ, यात्रावृत्त आदि तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों का प्रतिबिंब हैं। उन रचनाओं से यह भी पता चलता है कि वे बहुत ही सजग साहित्यकार थे। इस इकाई में आप उनकी दो कविताएँ ‘कहाँ करुणानिधि केशव सोए’ और ‘मातृभाषा प्रेम’ का अध्ययन करेंगे। इन्हें पढ़कर आप तत्कालीन परिस्थितियों को भलीभाँति समझ सकते हैं।

6.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'कहाँ करुणानिधि केशव सोए' की विषय वस्तु को समझ सकेंगे।
- भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' की विषय वस्तु को समझ सकेंगे।
- इन कविताओं की साहित्यिक व्याख्या कर सकेंगे।
- भारतेंदु की भक्ति-भावना से अवगत हो सकेंगे।
- भारतेंदु के भाषा चिंतन से परिचित हो सकेंगे।
- पराधीन भारत की परिस्थितियों से अवगत हो सकेंगे।

6.3 मूल पाठ : 'कहाँ करुणानिधि केशव सोए' और 'मातृभाषा प्रेम'

6.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

1. 'कहाँ करुणानिधि केशव सोए'

यह भारतेंदु हरिश्चंद्र की एक प्रसिद्ध कविता है। इस कविता में तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखते हुए केशव से प्रार्थना की गई है। उनका आह्वान करते हुए उनके द्वारा किए गए कार्यों का स्मरण किया गया है। भारतवासियों की दुखद स्थिति की तरफ उनका ध्यान आकर्षित कराने का प्रयास है। ऐसा इसलिए किया गया है क्योंकि तत्कालीन भारत पर अंग्रेजों का राज था। वे भारतवासियों को विभिन्न प्रकार से कष्ट पहुँचा रहे थे। उन दुष्ट अंग्रेजों से भारतवासियों की रक्षा हेतु केशव (श्रीकृष्ण) से प्रार्थना की गई है।

2. 'मातृभाषा प्रेम'

भारतेंदु का मातृभाषा प्रेम जगजाहिर है। वे इस संदर्भ में बराबर प्रयासरत रहे कि हिंदी का प्रचार-प्रसार बढ़े। हिंदी की भी कई शैलियाँ हैं। रामविलास शर्मा लिखते हैं कि 'हिंदी भाषा' वाले निबंध में भारतेंदु ने हिंदी की पाँच शैलियों का उल्लेख किया है। पहली में संस्कृत के शब्द बहुत हैं, दूसरी में संस्कृत के शब्द थोड़े हैं, तीसरी में शुद्ध हिंदी, चौथी में किसी भाषा के शब्द मिलने का नाम नहीं है और पाँचवीं में फारसी शब्द विशेष हैं।' इन पर अपना मत प्रकट करते

हुए उन्होंने लिखा है कि 'नंबर 2 और 3 लिखने के योग्य हैं।' ध्यान रहे उन्होंने संस्कृतनिष्ठ हिंदी के लेखन की बात नहीं की है। भारतेंदु की हिंदी को भी संस्कृतनिष्ठ हिंदी नहीं कहा जा सकता।

भारतेंदु ने यह कविता जून 1877 ई. की हिंदी वर्द्धिनी सभा में पढ़ा था जो हिंदी प्रदीप खंड-1, संख्या 1-2 में प्रकाशित हुई थी। चूँकि यह कविता सभा में पढ़ी गई थी, इसलिए इसे व्याख्यान नाम दिया गया है। यह सत्य है कि ये दोहे एक व्याख्यान में पढ़े गए थे परंतु, व्याख्यान से अलग रखकर इन दोहों को देखने से ज्ञात होता है कि इनका मूल विषय 'मातृभाषा प्रेम' ही है। इन्हीं बिंदुओं को दृष्टिगत रखते हुए हमने इनमें से प्रमुख दस दोहों को 'मातृभाषा प्रेम पर दोहे' शीर्षक से अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया है।

ये दोहे ब्रजभाषा में रचित हैं- हालांकि भारतेंदु ने खड़ीबोली में भी रचनाएँ (कविता) की है- एक तो उनकी संख्या कम है, दूसरी वे कविताएँ ब्रजभाषा के मुकाबले उस उच्च स्तर को प्राप्त नहीं कर पाई हैं। डॉ. सत्यदेव मिश्र का कथन है 'परंपरा से भारतेंदु हरिश्चंद्र का नाम खड़ीबोली काव्य रचना के संदर्भ में लिया जाता है। इनकी खड़ीबोली से संबंधित रचनाओं की संख्या 6-7 से अधिक नहीं होगी और वे स्फुट रूप से यत्र-तत्र प्रकाशित मिलती हैं। भारतेंदु हरिश्चंद्र परंपरागत रसात्मकता को काव्य का लक्ष्य मानते थे और रससिद्ध ब्रजभाषा उसके लिए उन्हें पूर्ण उपयुक्त प्रतीत होती थी। खड़ीबोली के संदर्भ में प्राप्त उनकी कविताएँ निश्चित रूप से उस स्तर की नहीं हो पायी है जो स्तर उनकी ब्रजभाषा रचनाओं का है।' यह पूर्णरूपेण सत्य है कि भारतेंदु के समय में काव्य के क्षेत्र में 'ब्रजभाषा' का बोलबाला था इसका कारण उसकी रसात्मकता है जबकि खड़ी बोली में वह मिठास नहीं दिखती अपितु कर्कशता दृष्टिगोचर होती हे। जो भी हो उन्होंने प्रयास अवश्य किया था। यह सच है कि उनका अधिकांश काव्य ब्रजभाषा में रचित है।

6.3.2 अध्येय कविता

[1]

कहाँ करुणानिधि केशव सोए

कहाँ करुणानिधि केशव सोए।

जागत नेक न जदपि बहु बिधी भारतवासी रोए॥

इक दिन व हो जब तुम छिन नहिं भारतहि बिसराए।

इत के पशु गज को आरत लखि आतुर प्यादे धाए॥

इक इक दिन हीन नर के हित तुम दुख सुनी अकुलाई।

अपनी संपति जानि इनहिं तुम रछयौ तुरतही धाई॥

प्रलयकाल सन जौन सुदरसन असुर प्राण संहार।

ताकी धार भई अब कुंठित हमरी बेर मुरारी॥

दुष्ट जवन बरबर तुव संतति घास साग सम काटै।

एक-एक दिन सहस-सहस नर-सीस काटि भुव पाटै॥

ह्वै अनाथ आरज-कुल विधवा बिलपहिं दिन-दुखारी।

बल करि दासी तिनहीं बनावहिं तुम नहीं लजात खरारी॥

कहाँ गए सब शास्त्र कही जिन भारी महिमा गाई।

भक्त बछ्छल करुणानिधि तुम कहं गायो बहुत बनाई॥

हाय सुनत नहिं निठुर भए क्यों परम दयाल कहाई।

सब बिधि बुदत लखि निज देसहि लेहु न अबहूँ बचाई॥

[2]

मातृभाषा प्रेम

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।

बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल॥

अंग्रेजी पढ़ि के जदपि सब गुन होत प्रवीन।

पै निज भाषा ज्ञान के रहत हीन के हीन॥

उन्नति पूरी है तबहि जब घर उन्नति होय।

निज सरीर उन्नति किए रहत मूढ़ सब लोय॥

निज भाषा उन्नति बिना कबहुं न ह्वैहै सोय।

लाख अनेक उपाय यों भले करो किन कोय॥

इक भाषा, इक जीव इक मति सब घर के लोग।

तबै बनत है सबन सों मिटत मूढ़ता सोग॥

और एक अति लाभ यह यामें प्रगट लखात।

निज भाषा में कीजिये जो विद्या की बात॥

तेहि सुनि पावैं लाभ सब बात सुनै जो कोय।

यह गुन भाषा और महं कबहूं नाहीं होय॥

बिबिध कला शिक्षा अमित ज्ञान अनेक प्रकार।

सब देसन से लै करहु भाषा मांहिं प्रचार॥

भारत में सब भिन्न अति ताही सों उत्पात।

बिविध देस मतहू बिबिध भाषा बिबिध लखात॥

तासों सब मिलि छांडि कै दूजे और उपाय।

उन्नति भाषा की करहु अहो भ्रात गन आय॥

निर्देश : 1. इन कविताओं का सस्वर वाचन कीजिए।

2. इन कविताओं का मौन वाचन कीजिए।

6.3.3 विस्तृत व्याख्या

कहाँ करुणानिधि केशव सोए....

शब्दार्थ : करुणानिधि = करुणा के सागर। केशव = श्रीकृष्ण। जागत = जागना। जदपि = यद्यपि। बहु = बहुत। विधि = प्रकार। बिसराए = भुलाना। गज = हाथी। आरत = प्रार्थना करना। लखि= देखना। प्यादे = पैदल। धाए = दौड़ना। अकुलाई = व्याकुल होना। रछ्यौ = रक्षा करना, हिफ़ाज़त करना। तुरतहि = तुरंत। सुदरसन = सुदर्शन चक्र। असुर = राक्षस। ताकी = उसकी।

कुंठित = धार का काम हो जाना। मुरारी = श्रीकृष्ण। संतति = संतान। सम = समान या तरह। भुव = पृथ्वी। पाटै = पाटना या भर देना। अनाथ = जिसका कोई मालिक नहीं हो। बिलपहि = विलाप करना, रोना। बलकरि = जबरदस्ती। दासी = सेविका। लजत = लज्जा आना। शास्त्र = शास्त्रीय या धार्मिक पुस्तकें। निठुर = निष्ठुर, जिसके अंदर दया न हो। परमदयाल = अत्यधिक दयालु। बूडत = डुबना या नष्ट होना। देसहि = देश, यहाँ भारतवर्ष के संदर्भ में है। लेहु = लो, ले लो। अबहुँ = अब भी। बचाई = बच लेना।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्यांश भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'कहाँ करुणानिधि केशव सोए' से अवतरित है।

प्रसंग : प्रस्तुत कविता में कवि ने भगवान श्रीकृष्ण से भारत की रक्षा करने की प्रार्थना की है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में भारतेंदु कहते हैं - हे! दया के सागर भगवान श्री कृष्ण आप कहाँ हैं? आप भारत की दुर्दशा देखकर कुछ कर क्यों नहीं रहे हैं? आप कहाँ पर सोए हुए हैं? हे! प्रभु आप अपनी निद्रा (नींद) से बाहर आइए। हे! प्रभु भारतवासी विविध प्रकार से कष्टों को झेल रहे हैं और विलाप कर रहे हैं। हे! केशव, इस भारत भूमि पर आपने स्वयं जन्म लेकर अपनी लीला की है आज ये भारत भूमि विलाप कर रही है।

हे! प्रभु, एक दिन ऐसा था कि आपने एक क्षण के लिए भी अपने भारत को नहीं बिसराया, नहीं भुलाया। एक हाथी जिसके करुण क्रंदन को सुनकर आप व्याकुल हो गए और पैदल दौड़ते चले आए। हे! प्रभु, एक-एक दिन-हीन जीव के हित के लिए आप तैयार रहते थे। उनके दुख को सुनकर व्याकुल हो जाते थे। इन्हें आपने पराया नहीं समझा प्रभु, पराया नहीं समझा। इनके कष्ट को देखकर उनकी रक्षा (हिफ़ाज़त) करने के लिए आप तुरंत दौड़ पड़े और आपने रक्षा की।

हे! मुरली के बजानेवाले अर्थात श्रीकृष्ण आपका वह सुदर्शन चक्र कहाँ चला गया? जिसने असुरों का नाश किया । वह सुदर्शन चक्र उनके लिए प्रलयकाल के समान बन गया। हे! प्रभु, आज जब मेरी बारी आई है। आज जब मेरा कल्याण करना है। आज जब भारतवासियों का कल्याण करना है तो क्या उस सुदर्शन चक्र की धार अब कुंठित हो गई है?

हे! प्रभु मैंने आपके रौद्र रूप के बारे में भी सुन है। आपने उन बर्बर व दुष्ट राक्षसों व उनकी संसतियों (संतानों) को घास और शाक (सब्जी) की तरह काट डाला। आपने एक-एक दिन में सैकड़ों दुष्ट राक्षसों के सिर काटकर इस पृथ्वी को पात दिया। हे! प्रभु, उस शक्ति का प्रदर्शन पुनः कीजिए, पुनः कीजिए प्रभु, पुनः कीजिए । हे! प्रभु आपके इसी प्रिय भारतवर्ष में उच्च कुल में जन्मी कई नवविवाहिता स्त्रियाँ विधवा हो गईं। वे विलाप करती हैं प्रभु। वे अत्यधिक दिन व दुखी भाव से जीवन यापन करती है। कई बालक अनाथ हो गए प्रभु। आप कुछ कीजिए प्रभु, आप कुछ कीजिए।

ये दुष्ट लोग जबरदस्ती उन बाल विधवाओं को अपनी दासी बना ले रहे हैं। उनका शारीरिक और मानसिक शोषण कर रहे हैं। हे! प्रभु, अर्थात भगवान विष्णु ये सब दरेखकर क्या आपको शर्म नहीं या रही है? क्या ये सब आपको दिख नहीं रहा है? आखिर आपको हो क्या गया है? प्रभु, अप कुछ कीजिए।

कहाँ गए वे सभी शास्त्र जिन्होंने तुम्हारी बड़ी महिमा बताई है? उनमें ये बताया गया है कि आप भक्तों पर कृपया करते हैं। आपको करुणा का सागर बताया गया है। आपके बारे में बहुत सारी बातें बताई गई हैं। कहाँ चले गए आप? कृपा करने की शक्ति कहाँ चली गई? आपकी करुणा का सागर क्यों नहीं फूट पा रहा है?

हे ! परमदयालु कहलाने वाले केशव आपको क्या हो गया है? हाय! आप हमारी करुण प्रार्थना सुन क्यों नहीं रहे हैं ? आप निष्ठुर क्यों बन गए हैं? आपसे पुनः प्रार्थना करता हूँ केशव! ये भारत सभी प्रकार से रसातल में चला जा रहा है। धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, सभी प्रकार से ये भारत डूबता जा रहा है। ये सब आप देख रहे है। आपका अपना देश जहां आपने जन्म लिया। उसे अब भी आप आकार बच लीजिए प्रभु, बचा लीजिए।

काव्यगत विशेषता

1. यहाँ खड़ीबोली का प्रयोग किया गया है।
2. यहाँ भावात्मक शैली और करूण रस का प्रयोग किया गया है।
3. 'प्रलयकाल सम जौन', 'घास साग सम काटै', में उपमा अलंकार का प्रयोग है। 'हाय सुनत नहिं निठुर भए क्यों परम दयाल कहाई' में विरोधाभास अलंकार का प्रयोग है।

4. यहाँ केशव पर रोष का भी भाव है क्योंकि वे कुछ सहायता नहीं कर रहे हैं।

बोध प्रश्न

- भगवान के लिए अपने-पराए का कोई महत्व क्यों नहीं होता?
- केशव के किन-किन कार्यों को याद कराया गया है?

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।

बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल॥

शब्दार्थ : निज भाषा = अपनी भाषा, मातृभाषा। मिटत = मिटना। उन्नति = प्रगति। हिय = हृदय। अहै = है। सूल = काँटा

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ मातृभाषा की उन्नति करने पर बल दिया गया है।

व्याख्या : भारतेंदु हरिश्चंद्र कहते हैं कि हे! मेरे प्रिय देशवासियों अपनी भाषा की उन्नति करो। अपनी भाषा की उन्नति ही सब प्रकार की उन्नति का मूल है। बिना अपनी भाषा में ज्ञान प्राप्त किए हृदय में जो काँटा चुभा हुआ है, उसकी जो पीड़ा है वह कभी भी समाप्त नहीं हो पाएगी। हम भले ही अन्य भाषाओं के बहुत बड़े विद्वान हों परन्तु हृदय की पीड़ा की पूर्ण अभिव्यक्ति अपनी भाषा में ही भली प्रकार से की जा सकती है। इससे हृदय के कष्ट दूर हो जाते हैं।

काव्यगत विशेषताएँ

1. यहाँ ब्रजभाषा का प्रयोग है ।

2. यहाँ भावात्मक शैली का प्रयोग है।

3. यहाँ शांत रस और करुण रस का प्रयोग है।

4. दोहा छंद का प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- भारतेंदु के अनुसार सभी उन्नतियों का मूल क्या है?

अंग्रेजी पढ़ि के जदपि सब गुन होत प्रवीन।

पै निज भाषा ज्ञान के रहत हीन के हीन॥

शब्दार्थ : होत = होना। जदपि = यद्यपि। प्रवीन = प्रवीण। गुन = गुण। हीन = अभाव।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ अंग्रेजी के समानांतर मातृभाषा (अपनी भाषा) के महत्व को बताया गया है।

व्याख्या : प्रस्तुत दोहे में भारतेंदु हरिश्चंद्र कहते हैं कि यद्यपि अंग्रेजी पढ़कर कोई व्यक्ति सब गुणों को प्राप्त कर लेता है। वह सब गुणों में प्रवीण हो जाता है परन्तु बिना अपनी भाषा के ज्ञान के विभिन्न विषयों में वह व्यक्ति हीन का हीन (अभाव) रह जाता है। हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि अंग्रेजी भाषा आपको प्रवीण बना सकती है परन्तु अपनत्व नहीं प्रदान कर सकती है। आपको अपनापन तो आपकी भाषा से ही प्राप्त होगा।

काव्यगत विशेषताएँ

1. यहाँ ब्रजभाषा का प्रयोग है।

2. यहाँ अपनी भाषा और अंग्रेजी भाषा के अंतर को बतलने का प्रयास किया गया है।

3. यहाँ अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है ।

4. यहाँ प्रसाद गुण और अभिधा शब्दशक्ति का प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- अंग्रेजी पढ़कर क्या लाभ होता है?
- मातृभाषा का ज्ञान नहीं होने से क्या नुकसान है?

उन्नति पूरी है तबहि जब घर उन्नति होय।

निज सरीर उन्नति किए रहत मूढ़ सब लोय॥

शब्दार्थ : तबहि = तब ही। रहत = रहना। होय = होगी। मूढ़ = मूर्ख। सरीर = शरीर।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ सबकी उन्नति पर बल दिया गया है।

व्याख्या : प्रस्तुत दोहे में भारतेंदु हरिश्चंद्र कहते हैं कि हमें केवल अपनी उन्नति पर ही बल नहीं देना चाहिए। संपूर्ण उन्नति तब ही होगी जब पूरे घर की उन्नति हो। केवल अपने शरीर की उन्नति कर लेने से, अपने शरीर पर बहुत अच्छे-अच्छे कपड़े, आभूषण धारण कर लेने से ही सब कुछ नहीं हो जाएगा। केवल एक व्यक्ति की उन्नति हो सकती है परन्तु अन्य सब लोग मूढ़ (अज्ञानी) के मूढ़ ही रह जाएँगे। इसलिए हमें अपने साथ-साथ सभी की उन्नति पर ध्यान देना चाहिए।

काव्यगत विशेषताएँ

1. यहाँ पूरे भारत वर्ष की उन्नति पर बल है।

2. सामुदायिक सहयोग की भावना है।

3. यहाँ शांत रस का प्रयोग है ।

4. अभिधा शब्द शक्ति का प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- इस दोहे में कौन सा रस है?

निज भाषा उन्नति बिना कबहुं न ह्वैहै सोय।

लाख अनेक उपाय यों भले करो किन कोय॥

शब्दार्थ : कबहुं = कभी भी। करो = करना। ह्वैहै = होगा। कोय = कोई। किन = किसी प्रकार का उपाय।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ अपनी भाषा (मातृभाषा) की उन्नति पर बल दिया गया है।

व्याख्या : प्रस्तुत दोहे में भारतेंदु हरिश्चंद्र ने बताया है कि बिना अपनी भाषा (मातृभाषा) की उन्नति किए कभी भी उचित प्रकार से भला इंसान नहीं बन पाएंगे। भले ही विविध प्रकार के लाख उपाय कर लिए जाएँ फिर भी हम अपनी उन्नति नहीं कर सकते। हमें अपनी भाषा (मातृभाषा) की उन्नति करनी चाहिए तभी हम उन्नति कर चुके व्यक्तियों के बराबर उन्नति कर सकते हैं।

काव्यगत विशेषताएँ

1. यहाँ ब्रजभाषा प्रयोग है।

2. शांत रस और दोहा छंद का प्रयोग है।

3. यहाँ अपनी भाषा की महत्ता और उसके लाभ के बारे में बताया गया है।

4. यहाँ भारतेंदु का भाषा प्रेम देखा जा सकता है।

इक भाषा, इक जीव इक मति सब घर के लोग।
तबै बनत है सबन सों मिटत मूढ़ता सोग॥

शब्दार्थ : इक = एक। सबन = सब लोग। मति = मत। मिटत = मिटना। तबै = तब ही। सोग = शोक ।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ सभी को एक मत होकर कार्य करने के लिए प्रेरित किया जा रहा है।

व्याख्या : भारतेंदु हरिश्चन्द्र कहते हैं हम सब लोग एक जीव हैं अर्थात् मनुष्य हैं, इसलिए हम सबकी एक भाषा और एक मति (बुद्धि या सोच) होनी चाहिए। पूरे घर के लोगों को एक मत, एक भाषा, एक जीव के सिद्धांत पर रहकर काम करना चाहिए। यदि हम ऐसा करेंगे तब ही सभी लोगों के साथ बात बनेगी और सारी अज्ञानता, सारा शोक दूर हो जाएगा।

काव्यगत विशेषताएँ

1. यहाँ ब्रजभाषा और भावात्मक शैली का प्रयोग है।

2. यहाँ शांत रस और करुण रस का प्रयोग है ।

3. यहाँ अनुप्रास अलंकार, प्रसाद गुण और अभिधा शब्दशक्ति का प्रयोग है ।

4. यह बहुत ही महत्वपूर्ण बिंदु है कि भारतेंदु पूरे भारत के लिए एक भाषा यानि की राष्ट्र भाषा की बात कर रहे थे।

बोध प्रश्न

- इस दोहे में भारतेंदु किस स्तर पर सोच रहे हैं?

और एक अति लाभ यह यामें प्रगट लखात।

निज भाषा में कीजिये जो विद्या की बात॥

शब्दार्थ : अति = अत्यधिक। लखात = दिखाई देना। लाभ = फायदा। विद्या = ज्ञान। यामें = इसमें। बात = बात। प्रगट = प्रकट, उपस्थित।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ अपनी भाषा (मातृभाषा) में विद्या की बात करने पर बल दिया जा रहा है।

व्याख्या : अपनी भाषा (निज भाषा - मातृभाषा) के प्रयोग में अन्य लाभप्रद बातें तो हैं ही, इसके साथ-साथ इसमें एक और बात प्रकट रूप में दिखाई देती है जो हमारे लिए अत्यधिक लाभप्रद है। वह यह कि यदि हम मातृभाषा में विद्या प्राप्त करें अर्थात् पढ़ाई-लिखाई करें तो यह और भी लाभप्रद होगा।

बोध प्रश्न

- मातृभाषा में बात करने से क्या फायदा होता है?

काव्यगत विशेषताएँ

1. यहाँ ब्रजभाषा, शांत रस का प्रयोग है।
2. यहाँ दोहा छंद, अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है।
3. यहाँ प्रसाद गुण और अभिधा शब्दशक्ति का प्रयोग है।
4. आज भाषा वैज्ञानिक और शिक्षा से जुड़े हुए लोग बताते हैं कि मातृभाषा में पढाने से बच्च के ज्ञान ग्रहण करने की क्षमता बढ़ जात है। भारतेंदु की नजर बहुत पहले हिमीस विषय पर पड़ चुकी थी।

तेहि सुनि पावैं लाभ सब बात सुनै जो कोय।

यह गुन भाषा और महं कबहूं नाहीं होय॥

शब्दार्थ : तेहि = वह, वही। महं = मध्य। सुनि = सुनना। कबहूँ = कभी भी। पावैं = पाना। नाहीं= नहीं।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ मातृभाषा के महत्व पर प्रकाश डाला गया है।

व्याख्या : मातृभाषा में बात करने के बहुत सारे लाभ हैं। वही संपूर्ण लाभ को सुन पाता है, समझ पाता है जो मातृभाषा में बातचीत करता है। मातृभाषा में बात करने से ही सारे लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। जो मातृभाषा में कही गई बात को ध्यानपूर्वक सुनते हैं वे अवश्य ही विविध प्रकार के लाभ प्राप्त करते हैं। यह हिंदी की विशेषता है अन्य भाषाओं में यह गुण कभी नहीं हो सकता।

काव्यगत विशेषताएँ

1. यहाँ ब्रज भाषा, छंद दोहा, शांत रस का प्रयोग है।

2. यहाँ अनुप्रास अलंकार, प्रसाद गुण और अभिधा शब्दशक्ति का प्रयोग है।

3. यहाँ अन्य किसी भाषा का तात्पर्य अंग्रेजी भाषा है।

बिबिध कला शिक्षा ज्ञान अनेक प्रकार।

सब देसन से लै करहु भाषा मांहिं प्रचार॥

शब्दार्थ : बिबिध = विविध। मांहिं = मध्य। में देसन = देशों में प्रचार = बढ़ावा देना । करहु = करो, करिए ।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : कवि ने यहाँ ज्ञान, कला आदि का अपनी भाषा (मातृभाषा) में प्रचार करने पर बल दिया गया है।

व्याख्या : प्रस्तुत दोहे में भारतेंदु हरिश्चंद्र कहते हैं कि हमें यह कदापि नहीं सोचना चाहिए कि हम सर्वश्रेष्ठ हैं। हमें विविध कलाओं, शिक्षा अथाह ज्ञान सबको विविध प्रकार से ग्रहण करना चाहिए। हमें सभी देशों से कला, शिक्षा और विविध प्रकार के ज्ञान को ग्रहण कर अपनी भाषा (मातृभाषा) में उसका प्रचार-प्रसार करना चाहिए। उस अथाह ज्ञान का प्रचार-प्रसार हमारी अपनी भाषा में होने से लोग लाभान्वित होंगे।

काव्यगत सौंदर्य:

1. यहाँ ब्रजभाषा और दोहा छंद का प्रयोग है।

2. यहाँ भारतेंदु के व्यापक दृष्टिकोण को देखा जा सकता है।

3. जहाँ से भी ज्ञान प्राप्त हो उसे लेकर अपनी भाषा में प्रचारित-प्रसारित करने पर बाल दिया गया है। इससे लो लाभान्वित होंगे।

4. यहाँ अप्रत्यक्ष रूप से अनुवाद करने पर बल दिया गया है।

बोध प्रश्न

- इस दोहे में ज्ञान का प्रचार-प्रसार अपनी भाषा में किस तरह से करने पर बल दिया गया है?

भारत में सब भिन्न अति ताही सों उत्पात।

बिविध देस मतहू बिबिध भाषा बिबिध लखात॥

शब्दार्थ : भिन्न = अलग। देस = देश। अति = अत्यधिक। मतहू = मत, विचार। ताही = उसी। लखात = दिखाई देना। उत्पात = शोर-गुल।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ भारत की विविधता पर चर्चा की गई है।

व्याख्या : प्रस्तुत दोहे में भारतेंदु हरिश्चंद्र की खीझ साफ तौर पर देखी जा सकती है। वे विविधता को समस्या के तौर पर स्वीकार करते हुए दिखाई पड़ते हैं। वे कहते हैं भारत में सब लोग भिन्न हैं। उनमें विविध प्रकार की विभिन्नता होने के कारण ही देश में उत्पात मचा हुआ है। इस भारत में विविध देश (राज्य-पहले भारत कई छोटी-छोटी रियासतों में विभक्त था), विविध मत तथा विविध प्रकार की भाषा दिखाई देती है। हम सबको एक होने की आवश्यकता है।

काव्यगत विशेषताएँ

1. ब्रजभाषा, भावात्मक शैली, दोहा छंद का प्रयोग है।

2. तत्कालीन भारत की स्थिति का प चलता है।

3. यहाँ भारतेंदु जी थोड़ा खीझे हुए से प्रतीत हो रहे हैं।

तासों सब मिलि छांडि कै दूजे और उपाय।

उन्नति भाषा की करहु अहो भ्रात गन आय॥

शब्दार्थ : तासों = तब, इसलिए। छांडि = छोड़कर। भ्रात गन = भाइयों। दूजे = दूसरे। आय = आकर।

संदर्भ : प्रस्तुत दोहा भारतेंदु हरिश्चंद्र की कविता 'मातृभाषा प्रेम' से उद्धृत है।

प्रसंग : यहाँ अपनी भाषा (मातृभाषा) की उन्नति करने का आह्वान किया गया है।

व्याख्या : भारतेंदु हरिश्चंद्र कहते हैं कि हे भाइयो! सारे भेद भुलाकर, सब कुछ छोड़कर, सब लोग मिलकर अन्य प्रकार के दूसरे उपाय को छोड़कर, आओ मातृभाषा की उन्नति में पूरी तल्लनीता से लग जाएँ। मातृभाषा की उन्नति में ही हमारी उन्नति है।

काव्यगत विशेषताएँ

1. ब्रजभाषा, भावात्मक शैली, शांत रस का प्रयोग किया गया है।

2. मिलजुलकर काम करने पर बाल दिया गया है।

बोध प्रश्न

- इस दोहे में भारतेंदु ने किस प्रकार का आह्वान किया है?

6.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

हिंदी साहित्य का इतिहास के अंतर्गत आधुनिक कल बहुत ही महत्वपूर्ण काल है। इसमें भारतेंदु युग अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतेंदु युग के प्रवर्तक भारतेंदु हरिश्चंद्र है। यहाँ पर उनकी कहाँ करुणानिधि केशव सोए और मातृभासह प्रेम पर दोहे को रखा गया है। कहाँ करुणानिधि केशव सोए में भारत की तात्कालिन खराब हो चुकी स्थिति से भारत को बचाने के लिए केशव का आह्वान किया गया है। इसमें भरेतन्दू केअंदार कुछ हद तक आक्रोश भी आ गया है।

मातृभाषा प्रेम पर तो भारतेंदु के 98 दोहे हैं। लेकिन यहाँ केवल 10 दोहों को लिया गए है। इन दस दोहों का मूल स्वर मातृभाषा प्रेम है । प्रत्येक दोहा अपने में पूर्ण और शिक्षाप्रद है।

यह मातृभाषा प्रेम केवल दिखने के लिए नहीं बल्कि उसे आत्मसात करने पर बाल देता है। इसके साथ ही मिलजुलकार रहने की भी प्रेरणा देता है।

6.4 पाठ सार

इस इकाई को पढ़ने के बाद सारांशत: हम कह सकते हैं कि भारतेंदु की 'कहाँ करुणानिधि केशव सोए' शीर्षक कविता में भारतेंदु ने तत्कालीन भारत की स्थिति से व्यथित होकर केशव को याद किया है। वे केशव को याद दिलाते हैं कि ये भारत आपकी लीलाभूमि भूमि रही है। आपने गज (हाथी) का कल्याण किया है। आज भारत वास्तव में बहुत दुखी हैं। हे प्रभु! आप आकर उनका कल्याण कीजिए।

इसी तरह भारतेंदु के 'मातृभाषा प्रेम पर दोहे' की बात करें तो न जून 1877 ई. में भारतेंदु ने हिंदीवर्द्धिनी सभा में व्याख्यान के दौरान इन कविताओं (दोहों) को पढ़ा था। इसमें मातृभाषा के प्रति प्रेम का प्रदर्शन किया गया है, इसलिए हमने अपने पाठ्यक्रम में इन दोहों को 'मातृभाषा प्रेम पर दोहे' शीर्षक से शामिल किया है। इसमें 98 दोहे हैं परंतु हमने इनमें से प्रमुख दस दोहों को सम्मिलित किया है। यह अवश्य है कि इनका नाम खड़ीबोली की कविताओं के साथ भी जुड़ा है परंतु, इन कविताओं की संख्या बहुत कम है। भारतेंदु जी मुख्यत: ब्रजभाषा में ही कविताओं की रचना करते थे। इन दोहों का मुख्य विषय मातृभाषा की उन्नति करना, मातृभाषा की विशेषता, मातृभाषा के लाभ, मातृभाषा में ही विविध प्रकार के ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार पर बल है। इन दोहों में ब्रजभाषा का प्रयोग है। शैली मुख्यतः भावात्मक है। इन दोहों में विभिन्न बोलियों के शब्द, उर्दू भाषा के शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। दोहा छंद तथा रस करुण रस, शांत रस है। अलंकार अधिकांशत: अनुप्रास ही है। गुण प्रसाद है, शब्दशक्ति अभिधा है। इन दोहों को पढ़ने के बाद हम निश्चित रूप से कह सकते हैं कि मातृभाषा के प्रति भारतेंदु के हृदय में अगाध प्रेम था। वे मातृभाषा की सेवा में आजीवन लगे रहे।

6.5 पाठ की उपब्धियाँ

भारतेंदु हरिश्चंद्र की दो प्रमुख रचनाओं पर केंद्रित इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. भारतेंदु आस्थिक और कृष्ण भक्त थे।

2. भारतेंदु अपने समय की राष्ट्रीय परिस्थितियों से अत्यधिक विचलित थे।
3. ब्रिटिश शासन के दमन चक्र से पिस रहे भारत की स्थिति इतनी कारुणिक थी कि भारतेंदु ने भारत की रक्षा करने के लिए ईश्वर के अवतार हेतु प्रार्थना की।
4. भारतेंदु भारतवासियों की गुलामी का एक बड़ा कारण आत्मगौरव के अभाव को मानते थे।
5. राष्ट्रीय आत्मगौरव की पुनः प्रतिष्ठा के लिए भारतेंदु ने निज-भाषा प्रेम को सर्वाधिक महत्व दिया।

6.6 शब्द संपदा

1. तल्लीनता = लगकर, डूबकर
2. पीड़ा = दुख, तकलीफ
3. पूर्णरूपेण = पूरी तरह से

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. पाठ्यक्रम में शामिल 'मातृभाषा प्रेम पर दोहे' पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
2. कहाँ करुणानिधि केशव सोए शीर्षक कविता का सारांश अपने शब्दों में लिखें।
3. 'अंग्रेजी पढ़ि के .... हीन के हीन।।' दोहे की संदर्भ सहित व्याख्या प्रस्तुत कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. भारतेंदु ने इतने करूण भाव से केशव को क्यों याद किया है?
2. भारतेंदु ने पाठ्यक्रम में शामिल किस दोहे में अनुवाद पर बाल दिया है? उस दोहे का सारांश अपने शब्दों में लिखें।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. भारत में सब भिन्न अति ताही सों .... । ( )

(अ) आपात (आ) उत्पात (इ) खपाट (ई) लखात

2. पै निज .... ज्ञान के रहत हीन के हीन। ( )

(अ) भाषा (आ) आशा (इ) देश (ई) राष्ट्र

3. 'कहाँ करुणानिधि केशव सोए' के रचनाकार कौन हैं? ( )

(अ) प्रतापनारायण मिश्र (आ) भारतेंदु हरिश्चंद्र (इ) हरिऔध (ई) केशवदास

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'कहाँ करुणानिधि केशव सोए' कविता में स्त्रियों की स्थिति बहुत ही .... है।
2. अपनी भाषा की उन्नति ही सभी .... का मूल हैं।
3. भारत में विविध .... विविध .... हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. मातृभाषा	(अ) मातृभाषा प्रेम पर दोहे
2. वाराणसी	(आ) विष्णु
3. कृष्ण अवतार	(इ) भारतेंदु का जन्मस्थान
4. भारतेंदु	(ई) मादरी ज़बान

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास : सत्यदेव मिश्र
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र ग्रंथावली - 4 (प्रेमअर्पण, राजभक्ति तथा अन्य विषयों की कविताएँ) : सं. ओमप्रकाश सिंह
3. भारतेंदु हरिश्चंद्र और हिंदी नवजागरण की समस्याएँ : रामविलास शर्मा
4. भारतेंदु युग और हिंदी भाषा की विकास-परमपरा : रामविलास शर्मा
5. हिंदी साहित्य का इतिहास : सं. नगेंद्र, हरदयाल
6. हिंदी साहित्य - उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी

इकाई 7 : मैथिलीशरण गुप्त : एक परिचय

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 मूल पाठ : मैथिलीशरण गुप्त : एक परिचय

7.3.1 जीवन परिचय

7.3.2 रचना यात्रा

7.3.3 रचनाओं का परिचय

7.3.4 हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त का स्थान एवं महत्व

7.4 पाठ सार

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

7.6 शब्द संपदा

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के इतिहास के आधुनिक काल में खड़ीबोली हिंदी के प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त साहित्यिक साधना की प्रतिमूर्ति के रूप में जाने जाते हैं। द्विवेदी युगीन हिंदी साहित्य के सभी मानकों पर खरे उतरने वाले कवि गुप्त जी पर उनके गुरु महावीर प्रसाद द्विवेदी का विशेष आशीष था, क्योंकि साहित्य में खड़ीबोली हिंदी के शुद्ध रूप, नैतिकता, देशप्रेम, परंपरागत मानवीय औदात्य की प्रतिष्ठा तथा भारतीय संस्कृति के महान धरोहर आदि को प्रतिष्ठित करने में गुप्त जी का विशेष योगदान है। हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के सुप्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त का लेखन संसार राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत है। लेखन प्रतिभा उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। राष्ट्रप्रेम से ओत-प्रोत कविता 'भारत भारती' की रचना के बाद महात्मा गांधी ने

उन्हें ‘राष्ट्रकवि’ की उपाधि दी। खड़ीबोली हिंदी को काव्य के क्षेत्र में अवधी तथा ब्रज भाषा के स्थान पर प्रतिष्ठापित करने में गुप्त जी का अनन्य स्थान है। हिंदी साहित्य के द्विवेदी युग के जनक महावीर प्रसाद द्विवेदी जी की प्रेरणा एवं कुशल मार्गदर्शन में मैथिलीशरण गुप्त ने काव्य में विषय एवं भाषा की शुद्धता, नैतिकता, परंपरागत मानवीय मूल्यों को स्थापित करने में महारत पाई। इस इकाई में आप मैथिलीशरण गुप्त के जीवन एवं साहित्यिक यात्रा का अध्ययन करेंगे।

.7.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- उनकी रचना यात्रा के विकास को जान सकेंगे।
- उनकी काव्यगत विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में उनके स्थान एवं महत्व से अवगत हो सकेंगे।

7.3 मूल पाठ : मैथिलीशरण गुप्त : एक परिचय

7.3.1 जीवन परिचय

साहित्य सामाजिक घटनाओं तथा परिस्थितियों की साक्षी बनकर युग-गत चेतना को जागृत करती है। भारत में स्वतंत्रता आंदोलन के समय जब देशवासी अपने स्तर पर देश के स्वतंत्रता अभियान में निमग्न थे, तब साहित्यकार अपनी लेखनी को हथियार बना कर जन जागृति का राग छेड़ रहे थे। उन्नीसवीं सदी के आरंभ में लोगों में विदेशी शासन द्वारा उत्पन्न हीन भावना को हटाने का प्रयत्न किया जा रहा था। खड़ीबोली हिंदी के ऐसे साहित्यकारों में प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त का नाम उल्लेखनीय है।

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त, 1886 में उत्तर प्रदेश में झाँसी के चिरगांव नामक स्थान पर हुआ। गुप्त जी के पिता सेठ रामचरण कनकने एवं माता काशीबाई थीं। वे बचपन में अत्यंत खिलंदड़े स्वभाव के थे। जिसके कारण वे शिक्षा की ओर अधिक ध्यान नहीं देते थे। उन्होंने स्वाध्याय से हिंदी, संस्कृत तथा बंगला भाषा सीखा। उन्होंने प्राथमिक शिक्षा चिरगांव से तथा माध्यमिक शिक्षा झाँसी से प्राप्त की। गुप्त जी का मूल नाम ‘मिथिलाधिप नंदिनीशरण’ था , जिसे

उनके अध्यापक ने मैथिलीशरण गुप्त कर दिया। इनका वैवाहिक जीवन अधिक सुखद न रहा। प्रथम पत्नी का देहावसान प्रसव के समय हुआ, तो परिजनों के आग्रह पर दूसरा विवाह किया। लेकिन उनकी भी अकाल मृत्यु हो गई। अंत में अपने छोटे काका के अत्यधिक आग्रह करने पर सरयू देवी से विवाह किया, जिनसे उन्हें नौ संतानें हुईं, किंतु अंततः एक पुत्र ही जीवित रहा। व्यक्तिगत जीवन के ऐसे उतार-चढ़ाव ने गुप्त जी को भारतीय जीवन परंपरा के गौरवपूर्ण विषयों की ओर उन्मुख किया। उन्होंने अपने देश की संस्कृति के व्यापक धरातल को जन-जन तक अपनी रचनाओं के माध्यम से पहुँचाया।

मानवीयता की भावना को मैथिलीशरण गुप्त की रचनाओं में सर्वत्र देखा जा सकता है। भारतीय जीवन दृष्टि में आमूलचूल परिवर्तन का श्रेय गुप्त जी को दिया जा सकता है। उन्होंने आम जनता की धारणाओं में व्यापक परिवर्तन लाने के क्रम में कैकेयी, यशोधरा, उर्मिला आदि उपेक्षित स्त्रियों के उज्ज्वल पक्ष से लोगों को अवगत कराया। हिंदी साहित्य की स्वर्णिम धारा के प्रवाह में आपका अन्यतम योगदान है।

7.3.2 रचना यात्रा

खड़ीबोली हिंदी के प्रसिद्ध कवि मैथिलीशरण गुप्त साहित्यिक क्षेत्र में दद्दा के नाम से जाने जाते हैं। रामस्वरूप शास्त्री, दुर्गादास पंत तथा मुंशी अजमेरी जैसे विद्वतजनों के सान्निध्य में रहकर 12 वर्ष की अल्पायु से ही वे ब्रजभाषा में रचनाएँ करने लगे थे। आरंभ में वे 'रसिकेंद्र' के नाम से दोहा, चौपाई आदि लिखते थे। इनकी ब्रज तथा खड़ीबोली में अनुदित रचनाएँ कलकत्ता से प्रकाशित पत्रिका 'वैश्योपकारक', बंबई से प्रकाशित पत्रिका 'वेंकटेश्वर', कन्नौज से प्रकाशित पत्रिका 'मोहिनी' आदि में प्रकाशित होती थीं। जबकि हिंदी की रचनाएँ 'इंदु', 'प्रताप', 'प्रभा' तथा 'सरस्वती' आदि में प्रकाशित होती थीं। वे 'प्रताप' पत्रिका में 'विदग्ध हृदय' के नाम से अपनी रचनाएँ प्रकाशित करवाते थे।

महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से गुप्त जी खड़ीबोली हिंदी में लिखने लगे। इसके बाद तो निरंतर इन्हें सरस्वती का प्रसाद मिलता रहा। गुप्त की रचना 'भारत भारती' ने जनता में देशप्रेम की ऐसी धारा बहाई कि महात्मा गांधी ने उन्हें 'राष्ट्रकवि' की उपाधि से अलंकृत किया। हिंदी साहित्य जगत में उनके जन्मदिवस 3 अगस्त को 'कवि दिवस' के रूप में मनाया जाता है। मैथिलीशरण गुप्त के साहित्यिक अवदान को देखते हुए भारत सरकार ने इन्हें 1954 ई. में

‘पद्मभूषण’ उपाधि से सम्मानित किया। ‘रंग में भंग’ (1909 ई.), ‘जयद्रथ वध’ (1910 ई.), ‘साकेत’ (1932 ई.), ‘भारत भारती’ (1912-13 ई.), ‘यशोधरा’ (1933 ई.) आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। उन्होंने बंगला भाषा के काव्यग्रंथ ‘मेघनाथ वध’, ‘ब्रजांगना’ तथा संस्कृत के ‘स्वप्नवासवदत्ता’ का अनुवाद हिंदी में किया। साहित्य सेवा को बढ़ावा देने के लिए उन्होंने चिरगाँव में 1911 ई. में ‘साहित्य सदन’ तथा 1954-55 ई. में ‘मानस मुद्रण’ प्रेस की स्थापना की। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान 1941 ई. में व्यक्तिगत सत्याग्रह करने के कारण इन्हें सात माह तक जेल में भी रहना पड़ा। आगरा विश्वविद्यालय तथा हिंदू विश्वविद्यालय द्वारा इन्हें मानद डी.लिट्. से सम्मानित किया गया। उनके साहित्यिक अवदानों को देखते हुए भारत सरकार ने 1952 ई. से 1964 ई. तक उन्हें राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया। 12 दिसंबर, 1964 ई. को 78 वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ।

बोध प्रश्न

- मैथिलीशरण गुप्त जी के जन्मस्थान का नाम क्या है ?
- मैथिलीशरण गुप्त को राष्ट्रकवि की उपाधि किसने प्रदान की ?

हिंदी साहित्य की रचना यात्रा में स्वर्णिम पड़ाव का आगमन राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त से होता है। साहित्यकार की अपने युग के प्रति प्रतिबद्धता एवं संवेदनशीलता जितनी ही अधिक होती है उनकी रचनाओं की उपादेयता भी उतनी ही अधिक बढ़ जाती है। गुप्त जी सदैव लोक-कल्याण के राहों का अन्वेषण साहित्य के माध्यम से करते रहते थे। कवि का काव्य संस्कार व्यक्तिगत जीवन में वैष्णव भाव से भरा हुआ था, जबकि युगगत परिवेश उन्हें राष्ट्रीय भावना की ओर ले जा रहा था। जिस काल में कवि गुप्त ने कलम पकड़ी थी, वह काल देश में व्यापक जागरण का काल था तथा सामाजिक विचारों के सुधार के लिए कई स्वनामधन्य, सजग वर्ग भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में शामिल थे। देशप्रेम की उद्दाम चेतना के वशीभूत होकर कवि ने क्रांति पथ का चयन किया, तो उनके विचार ‘जयद्रथ वध’ (1910 ई.) तथा ‘भारत भारती’ के रूप में प्रचंड अभिव्यक्ति पाकर जन-जन में प्रवाहमान हो उठे। किंतु शीघ्र ही उनकी विचार शृंखला को एक नया आयाम मिला। महात्मा गांधी, विनोबा भावे एवं राजेंद्र बाबू के सुधारवादी दृष्टिकोण को जीवन में गहरे उतारते हुए उन्होंने भारत के गौरवपूर्ण अतीत को निराश, हताश जनता के सामने अपनी कविता के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए मानववाद की भावना को

ओजस्वी स्वर प्रदान किया। उन्होंने समाज की सबके छोटी इकाई परिवार से लेकर इतिहास के उपेक्षित पात्रों तक को प्रतिष्ठित स्थान अपनी कविताओं के माध्यम से प्रदान किया। समाज का विकास स्त्री एवं पुरुष दोनों के सम्यक सहयोग एवं सहकारिता पर आधारित होता है। ऐसे में उनकी कविताओं में स्त्री के औदात्य पक्ष को वाणी दी गई है। स्त्री का यह रूप उनके महाकाव्य 'साकेत', यशोधरा के माध्यम से व्यक्त हुआ है। कवि का मानववादी दृष्टिकोण उनकी रचनाओं को शाश्वतता प्रदान करती है।

बोध प्रश्न

- कवि गुप्त के काव्य में साहित्य का कौन सा तत्व प्रमुख रूप से समाया हुआ था?
- कवि गुप्त की रचनाओं में स्त्री के किस पक्ष को सर्वाधिक चित्रित किया गया है?

खड़ीबोली के सौंदर्य को निखारने में कवि मैथिलीशरण गुप्त का अन्यतम स्थान है। काव्य के प्रबंध एवं मुक्तक दोनों ही रूप में उनकी रचनाओं की छटा निराली बन पड़ी है। उन्होंने महाकाव्यों में 'साकेत' तथा 'यशोधरा' एवं खंडकाव्य के रूप में दर्जनों काव्य रचनाएँ करते हुए हिंदी के साहित्य भंडार में अभिवृद्धि की। यथा - 'पंचवटी' (1931 ई.), 'द्वापर' (1936 ई.), 'सिद्धराज' (1931 ई.), 'अंजलि', 'नहुष', 'गुरु तेग बहादुर', 'गुरुकुल', 'जय भारत', 'झंकार', 'युद्ध', 'पृथ्वीपुत्र', 'वक संहार', 'शकुंतला', 'विश्व वेदना', 'राजा प्रजा', 'उर्मिला', 'लीला', 'विष्णुप्रिया', 'दिवोदास', 'प्रदक्षिणा', 'भूमिभाग' आदि। कवि मैथिलीशरण गुप्त के मौलिक नाटकों में 'रंग में भंग', 'वन-वैभव', 'विकट भट', 'विरहिणी', 'वैतालिक', 'शक्ति', 'सैरंध्री', 'हिडिम्बा', 'स्वदेश संगीत', 'चंद्रहास', 'हिंदू', 'अनघ', 'चरणदास', 'तिलोत्तमा' आदि है। कवि के आरंभिक नाटक 'मधुप' के नाम से प्राप्त होते हैं, जो संस्कृत, बंगला तथा फारसी भाषा से खड़ीबोली हिंदी में अनुदित किए गए हैं। संस्कृत के 'स्वप्नवासवदत्ता', 'प्रतिमा', 'अभिषेक', 'अविमारक', 'रत्नावली' तथा बंगाली नाटक 'मेघनाथ वध', 'व्रजांगना', 'विरहिणी', 'पलासी का युद्ध' आदि के साथ ही मैथिलीशरण गुप्त जी ने फारसी से उमर खय्याम की रूबाइयत का हिंदी में अनुवाद किया। कवि के बृहत रचना संसार में उनकी फुटकर रचनाएँ भी हैं, जैसे - 'केशों की कथा', 'स्वर्गारोहण' जो 'मंगल घट' में संग्रहित है। 'पत्रावली' उनके पत्रों का संग्रह है तथा 'उच्छ्वास' कवि की फुटकर कविताओं का संग्रह है।

बोध प्रश्न

- कवि मैथिलीशरण गुप्त के किसी एक महाकाव्य का नाम लिखिए।
- किस दृष्टिकोण को गुप्त जी की रचनाओं में प्रमुख रूप से देखा जा सकता है?

7.3.3 रचनाओं का परिचय

साहित्यकार से परिचित होने के लिए हमें उनके साहित्यिक धरातल की पड़ताल करनी ही होती है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की विविध रचनाओं का संक्षेप में परिचय प्राप्त करने हेतु उनकी कृतियों की विविध भावधारा को आधार बनाया जा सकता है। द्विवेदीयुगीन कवि मैथिलीशरण गुप्त की प्रतिभा महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे गुरु के सान्निध्य में रहकर निखर उठी थी। द्विवेदी जी ने उनकी पहली खड़ीबोली की कविता 1907 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका में 'हेमंत' नाम से प्रकाशित किया था। उनकी राष्ट्रप्रेम से आवेष्टित रचना 'भारत भारती' में भारत के गौरवपूर्ण अतीत, वर्त्तमान और भविष्य को केंद्र में रखते हुए तथा भारत की सांस्कृतिक संपन्नता को चित्रित करते हुए तद्युगीन भारतीयों के दीन-हीन विचार शैली पर क्षोभ व्यक्त किया है। भारत एक कृषक संस्कृति प्रधान देश है, अतः वे धरती पुत्रों से देश को विदेशी शासन की गुलामी को तोड़ने हेतु आंदोलन करने के लिए 'किसान' कविता में आह्वान करते हैं।

भारतीय संस्कृति में स्त्रियों को पूजनीय स्थान प्रदान किए जाने के उपरांत भी जब कवि समाज में स्त्रियों को द्वितीयक स्थान पर देखते हैं, तो उनका संवेदनशील हृदय इतिहास की उपेक्षित स्त्री पात्रों के माध्यम से उन्हें प्रतिष्ठित करने हेतु सन्नद्ध हो उठता है। चूँकि कवि की विचारधारा द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता से आबद्ध थी, इसलिए वे स्त्री के माँ, पत्नी, बहन आदि रूपों को अपने काव्य में प्रतिष्ठापित करते हैं, प्रेयसी रूप को नहीं। यशोधरा, उर्मिला, कैकेयी आदि की उदात्त छवि को गुप्त जी ने अपनी रचनाओं में चित्रित किया है। 'पंचवटी' नामक कृति में मानो प्रकृति साक्षात् पाठकों को अपने सम्मोहन में बाँध लेती है, उदाहरण स्वरूप निम्नलिखित पंक्तियों का अवलोकन किया जा सकता है -

> चारु चन्द्र की चंचल किरणें, खेल रही हैं जल-थल में।
>
> स्वच्छ चांदनी बिछी हुई है, अवनि और अंबर तल में॥

कवि के आध्यात्मिक स्वरूप का परिचय इस वाक्य से प्राप्त होता है -

> राम तुम्हारा चरित स्वयं ही काव्य है।

कोई कवि बन जाए सहज सम्भाव्य है॥

कवि मैथिलीशरण गुप्त 'श्री संप्रदाय' में दीक्षित होते हुए भी अपनी कविताओं के माध्यम से वे सदैव सभी धर्मों के प्रति सद्भाव स्थापना का प्रयत्न करते रहें। वे 'साकेत' में रामभक्ति, 'द्वापर' में कृष्णभक्ति, 'गुरुकुल' में सिख धर्म, 'काबा', 'कर्बला' में इस्लाम धर्म के मानववादी पक्ष को चित्रित करते हैं। उनकी काव्यात्मक विचारधारा पर गांधी के प्रभाव को देखा जा सकता है। यही कारण है कि उनकी रचनाओं में सत्य, अहिंसा, अछूतों का उद्धार आदि को विशेष स्थान प्राप्त होता है। उनकी गांधीवादी रचनाएँ मुक्तक के रूप में अधिक प्राप्त होती हैं।

काव्य के भाव एवं कला पक्ष के निखार को कवि का अन्यतम देन माना जा सकता है। खड़ीबोली को सरल किंतु सौष्ठव स्वरूप में उन्होंने अपनी कविताओं में प्रयुक्त किया है। हिंदी के सभी शब्दों को वे अपनी कृतियों में सजाते हैं, यथा - तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी आदि। काव्य के प्रबंध, मुक्तक दोनों क्षेत्रों में उनकी लेखनी बराबर चली है। लोक के साथ, लोक के लिए जब लोक की भाषा में रचनाएँ प्रवाहित हों, तो रचनाएँ स्वतः ही लोक कल्याणकारी बन जाती हैं। भारत के गौरवपूर्ण इतिहास की झांकी प्रस्तुत करते हुए उन्होंने 'सैरंध्री', 'वक संहार', 'नहुष', 'जयभारत', 'हिडिम्बा', 'विष्णुप्रिया' एवं 'रत्नावली' आदि की रचना की। जब वे अपनी रचनाओं के माध्यम से अंतर-बाह्य सामंजस्य को स्थापित करते हैं, तो कर्मवाद को दृढ़तापूर्वक प्रस्तुत करने लगते हैं। 'साकेत' महाकाव्य में धरती को स्वर्ग बनाने की भावना को वे राम के माध्यम से प्रकट करते हैं -

संदेश यहाँ मैं नहीं स्वर्ग का लाया
इस भूतल को स्वर्ग बनाने आया॥

वे 'साकेत' में उर्मिला को केंद्र में रखते हुए भी सभी पात्रों को पूर्णतः गरिमामय स्थान प्रदान करते हैं। स्त्रियों के अंतर्मन को टटोलते हुए वे परित्यक्ता, पति वियोगिनी स्त्रियों की पीड़ा को मर्मस्पर्शी प्रस्तुति देते हैं। कवि की वियोगिनी स्त्रियाँ विरह की ताप में स्वर्ण सी निखर उठती हैं। वे प्रमाद के स्थान पर सतत सक्रियता का पथ चुनती हैं।

मैथिलीशरण गुप्त को देश के नवयुवकों से बड़ी आशा थी। वे देश के उत्थान में नवयुवकों के योगदान को अत्यंत आवश्यक मानते थे। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से नवयुवकों को अद्यतन ज्ञान से जुड़कर देश के विकास में सहयोगी बनाने का आह्वान भी किया करते थे।

देश के विकास में राष्ट्रभाषा की भूमिका को स्पष्टतः स्वीकार करते हुए वे कहते हैं -

है राष्ट्रभाषा भी अभी तक देश में कोई नहीं,
हम निज विचार जान सकें जिससे परस्पर सब कही।
इस योग्य हिंदी है तदापि अब तक न निज पद पा सकी,
भाषा बिना भावैकता अब तक न हममें आ सकी?

कवि देश की सुरक्षा तथा एकता के लिए राष्ट्रभाषा को अपरिहार्य मानते थे।

गुप्त जी भारत की कृषक संस्कृति को गरिमामय स्थान पर रखते हुए उनके जीवन में खुशहाली आने की आकांक्षा करते रहते थे। उनका मानना था कि जब तक हमारे देश के अन्नदाता सुखी न होंगे, देश में खुशहाली नहीं आ सकती। वे अपनी एक रचना में कहते हैं -

जब अन्य देश के कृषक संपत्ति में भरपूर हैं
लाते कि जिनसे आठ रुपया रोज के मजदूर हैं,
तब चार पैसे रोज ही पाते यहाँ कृषक कहो।
कैसे चले संसार उनका किस तरह निर्वाह हो?

बोध प्रश्न

- भारत का गौरव सर्वप्रथम गुप्त जी की किस रचना में चित्रित हुआ है?
- कवि गुप्त की विरहिणी स्त्री पात्र प्रमाद के स्थान पर कौन से पथ का चयन करती हैं?

मैथिलीशरण गुप्त जाति भेद को देश के लिए अभिशाप मानते थे। उनका मानना था कि इससे देश का विनाश ही होता है। उन्होंने पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण करने के स्थान पर अपनी संस्कृति में सामंजस्य बिठाने की प्रेरणा दी है। वे अपने समय के भारतीयों को पतन की ओर जाते हुए देख कर तिलमिला उठते हैं, इसलिए अपनी रचनाओं के माध्यम से जनता में अपने देश की संस्कृति के प्रति गौरव भावना का जयघोष कर रहे थे। उन्होंने भारतवर्ष की भूमि

को भगवद्भूमि कहते हुए भारत में जन्म लेने वाले महापुरुषों को पुण्यात्मा माना है। भारत की जनता को अपने देश के गौरव का स्मरण दिलाते हुए कहते हैं -

'फिर अपने को याद करो,

उठो, अलौकिक भाव धरो।'

कवि मैथिलीशरण गुप्त के कृतित्व में शिक्षा को विशेष स्थान दिया गया है। जिस देश में गुरु-शिष्य परंपरा का प्रचलन हो, उस देश में शिक्षा के नाम पर रटंत विद्या को देख कर कवि का हृदय द्रवित हो उठता है। इसलिए वे अपनी रचनाओं में इस पीड़ा को व्यक्त करते हैं। वे कहते हैं-

सबसे प्रथम है शिक्षा बढ़ाना देश में,

शिक्षा बिना ही पड़ रहे हैं आज हम सब क्लेश में।

शिक्षा बिना कोई कभी बनता नहीं सत्पात्र है,

शिक्षा बिना कल्याण की आशा दुराशा मात्र है।

देशभक्ति की भावना से भरा हुआ स्वर उनकी 'मंगलघट' रचना में देखी जा सकती है। 'मंगलघट' में संग्रहित कविता का एक उदाहरण यहाँ देखा जा सकता है -

उठ, ओ वृहद्, विराट, विशाल।

उठ अमिताभ, लाभ कर निज पद

लुटा, लक्ष्य पर लाल।

भारतीय संस्कृति की समन्वयात्मकता के पोषक कवि मैथिलीशरण गुप्त अपनी रचनाओं में सामाजिक समरसता को स्थापित करने के उद्देश्य से कहते हैं -

जैन बौद्ध फारसी यहूदी मुसलमान सिक्ख ईसाई

कोटि कंठ से मिलकर कह दें हम सब भाई-भाई।

'रंग में भंग' जैसे मौलिक खंड काव्य में मैथिलीशरण गुप्त देशभक्ति, त्याग तथा आदर्श चरित्र की स्थापना का प्रयत्न करते हैं। उनकी स्वतंत्रता की तीव्र आकांक्षा को 'हिंदू' काव्य में

देखा जा सकता है। काव्य का नाम भले ही हिंदू हो, किंतु समस्त काव्य सांप्रदायिक सौहार्द की भावना से भरी हुई है। उनकी 'सिद्धराज' काव्य में क्षत्रिय ओज की ज्वाला को अनुभूत किया जा सकता है। थके-हारे, निराश भारतीयों में ऊर्जा भरने के लिए वे 'जयद्रथ वध' की रचना करते हैं। वे कहते हैं -

अन्यत्र दुर्लभ है भुवन में बात यों उत्कर्ष की।

सचमुच कहीं समता नहीं है, भव्य भारतवर्ष की।

अंग्रेजों की नीति भारतीयों को आपस में बाँट कर अपने शासन की नींव मजबूत करने की थी। कवि ने 'काबा और कर्बला' खंडकाव्य में भारत की मजबूती के लिए हिंदू-मुस्लिम एकता को आवश्यक बताया है। वे इस कृति में हजरत साहब से कहलवाते हैं -

भारत का सद्भाव सुन चुका हूँ मैं पहले

वह है ऐसी भूमि विभिन्न मतों को सहले।

चाहा था इसलिए वहीं जाकर रह जाऊँ,

किंतु विरोधी नहीं चाहते मैं जी पाऊँ।

मैथिलीशरण गुप्त शासन की लोकतांत्रिक प्रणाली के पोषक थे। 'नहुष' काव्य का नायक नक्षत्र लोक को भी मातृभूमि पर न्यौछावर करने के लिए सन्नद्ध दिखाई देता है। गुप्त जी अपने कारावास काल के अनुभव को 'कारावास' नामक रचना में प्रस्तुत करते हैं। उनकी भक्तिपरक रचनाओं में कवि की द्वैत-अद्वैत भक्ति भावना के सामंजस्यपूर्ण चित्रण को देखा जा सकता है। 'यशोधरा' में कवि की गीत, नाटक, तुकांत, अतुकांत आदि भावनाओं की समन्विति को देखा जा सकता है। 'विष्णुप्रिया' में भगवान को भक्त की भक्ति के अधीन बताया गया है। 'साकेत' में कवि की रामभक्ति की पराकाष्ठा को देखते हुए भी लक्ष्मण और उर्मिला के चरित्र की उदात्तता को देखा जा सकता है। 'वकसंहार' में मंत्र तथा यज्ञ की महत्ता को देखा जा सकता है।

'साकेत', 'यशोधरा', 'चन्द्रहास', 'सिद्धराज' आदि में भी कवि के प्रकृति प्रेम के दर्शन होते हैं। कवि के प्रकृति प्रेम को 'पंचवटी' में प्रमुख रूप से अनुभूत किया जा सकता है। कवि की इन पंक्तियों में प्रकृति मानो खिलखिला रही हो -

चारू चन्द्र की चंचल किरणें

खेल रही है जल थल में

स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है

अवनि और अंबरतल में।

बोध प्रश्न

- गुप्त की सांप्रदायिक सद्भाव युक्त रचना का नाम बताइए?
- 'मंगलघट' किस प्रकार की रचना है?
- 'नहुष' काव्य रचना में नायक मातृभूमि पर किसे न्यौछावर करता है?
- गुप्त जी ने अपने कारावास के अनुभव को किस रचना में चित्रित किया है?

7.3.4 हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त का स्थान एवं महत्व

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल को गद्य काल के नाम से जाना जाता है। आधुनिक हिंदी की खड़ीबोली के परिमार्जित स्वरूप को साहित्य की प्रमुख भाषा के रूप में स्थापित करने में मैथिलीशरण गुप्त का विशेष स्थान है। कवि मैथिलीशरण गुप्त खड़ीबोली हिंदी में काव्य रचना करते हुए उच्च मानवीय मूल्यों, राष्ट्रप्रेम की धारा को बहाते हुए राष्ट्रकवि के पद पर सुशोभित हुए। अपने राष्ट्रप्रेम की भावधारा को उन्होंने विविध रचनाओं का केंद्र बनाते हुए भारतीय संस्कृति एवं इतिहास के उज्ज्वल पक्ष को सर्वसाधारण के मध्य स्थापित किया। पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से उन्होंने भारतीय संस्कृति के नए स्वरूप की परिकल्पना को अपनी कृतियों में स्थान दिया। उन्होंने देश के विकास का सबसे बड़ा अवरोध आम जनता में प्रचलित रूढ़ियों, अंधविश्वासों को मानते हुए जनता को जागरूक बनाया। 'भारत भारती', 'साकेत', 'यशोधरा' आदि कृतियों के माध्यम से इतिहास को देखने की नई दृष्टि का विकास किया। उनके साहित्यिक अवदानों को देखते हुए 1952 ई. में भारत सरकार की ओर से राज्यसभा की सदस्यता प्रदान की गई। 1954 ई. में उन्हें पद्मभूषण सम्मान से आभूषित किया गया। हिंदी साहित्य के क्षेत्र में सतत योगदान हेतु हिन्दुस्तानी अकादमी पुरस्कार, साहित्य वाचस्पति पुरस्कार तथा 'साकेत' कृति पर मंगला प्रसाद पारितोषिक सम्मान से सम्मानित किया गया। उन्होंने अपने 78 वर्ष तक की आयु में 2 महाकाव्य, 19 खंडकाव्य, नाटिकाएँ,

काव्यगीत आदि की रचना करते हुए हिंदी साहित्य की खड़ीबोली को गरिमामय स्थान प्रदान किया। हिंदी साहित्य में ऐसे युगपुरुष का आविर्भाव युग को बदलने वाला सिद्ध होता है। ऐसे रचनाकारों का साहित्य सबके हित साधन का माध्यम बनकर कालातीत बन जाती है। जब साहित्य सर्वमंगल की साधना के महत्वपूर्ण उद्देश्यों से संबद्ध हो, तो ऐसा साहित्य एक नए युग के उद्घोष का प्रतीक बन जाता है। कवि मैथिलीशरण गुप्त की साहित्यिक यात्रा ही उनके भारतीय राष्ट्रीय भावधारा का पर्याय बन जाता है।

बोध प्रश्न

- मैथिलीशरण गुप्त देश के विकास में सबसे बड़ा अवरोध किसे मानते थे?

7.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य के क्षेत्र में सर्वसाधारण की भाषा खड़ीबोली को साहित्य की भाषा बनाकर जन-जन तक पहुँचाने का महत्वपूर्ण कार्य भारतेंदु हरिश्चंद्र ने किया था, किंतु उस भाषा को स्तरीयता प्रदान करने में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का अन्यतम स्थान है। तद्युगीन साम्राज्यवादी विचारों को दरकिनार करते हुए कवि ने इतिहास के पन्नों से स्वर्णिम भारत की झांकी दृढ़तापूर्वक अपनी कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत किया। उन्हें पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी का विशेष आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। भारत के नवजागरण को विषय, भाषा, विचार दृष्टि की नवीनता की अत्यंत आवश्यकता थी, जिसे गुप्त जी ने पूर्णता प्रदान की। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के समय में जन्मे गुप्त जी का अंतर-बाह्य व्यक्तित्व अपने घर के वैष्णवी संस्कारों एवं देशप्रेम के उद्गारों ने गढ़ा। गुप्त जी का लेखन 1901 ई. से लेकर भारत की स्वतंत्रता के बाद तक चलता रहा। उन्होंने भारतीयों के आत्मगौरव को जगाया।

कवि गुप्त के स्वभाव में साहित्य का लोकतत्व समाहित होने के कारण वे सदैव लोक कल्याण के राहों का अन्वेषण करते रहते थे। प्रबंध काव्य, मुक्तक काव्य, खंड काव्य, पद्य नाटक, रूपक कविताओं आदि के सृजन द्वारा जन मन को आंदोलित करते हुए उन्होंने आज़ादी की राह को आसान बनाया। उनकी रचनाओं में धर्म, जाति तथा लिंग भेद को मिटाने का सर्वदा प्रयत्न किया गया है। कवि को यह भलीभाँति पता था कि कृषक संस्कृति प्रधान भारत वर्ष की आध्यात्मिकता को देशवासियों में अपने गौरवपूर्ण अतीत की जानकारी होनी आवश्यक है। यही कारण है कि हताशा को भारतीय जनता के मन से निकालने के लिए उन्होंने इतिहास तथा

पुराणों के उपेक्षित पात्रों को अपनी रचनाओं के नायक-नायिका के रूप में प्रस्तुत करते हुए, उन्हें गरिमामयी छवि के साथ स्थापित किया। कवि ने अपने समय के साथ जोड़ते हुए साहित्य को प्रासंगिकता का फलक प्रदान किया। समग्रतः मैथिलीशरण गुप्त की दृष्टि साहित्य सृजन के माध्यम भारतीय सुपूतों के मन में आत्माभिमान को जगाना था, जिसके लिए वे सदैव प्रयत्नरत रहते थे।

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के प्रतिनिधि राष्ट्रीय कवि हैं।
2. मैथिलीशरण गुप्त हिंदी साहित्य में महात्मा गांधी के चिंतन को स्थापित करने वाले प्रमुख रचनाकार माने जाते हैं।
3. उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा स्वतंत्रता आंदोलन और सांस्कृतिक जागरण को गति प्रदान की।
4. उन्होंने आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की प्रेरणा से देश प्रेम के साथ-साथ उपेक्षित स्त्री पात्रों को महत्व प्रदान करने वाले कालजयी काव्यों की रचना की।
5. 'भारत भरती' के माध्यम से मैथिलीशरण गुप्त ने भारतीयों के खोए आत्मगौरव को खोजने का सफल प्रयास किया।

7.6 शब्द संपदा

1. अनन्य = एकमात्र
2. अन्वेषण = खोज करना
3. अल्पायु = कम आयु वाला
4. अवदान = योगदान
5. अवरोध = रुकावट
6. आध्यात्मिकता = सांसारिकता का अभाव
7. आयाम = विस्तार
8. आवेष्टित = चारों ओर से घिरा हुआ

9. आहूत = आमंत्रित किया गया

10.आह्वान = बुलाना

11.उद्गार = मन में भरी हुई बात व्यक्त होना

12.उद्दाम = प्रबल

13.उपादेयता = उपयोगी

14.उपाधि = पदवी

15.उपेक्षित = नजर अंदाज करना

16.ओजस्वी = सशक्त

17.औदात्य = महान

18.परिमार्जित = साहित्यिक कमियों को दूर करना

19.प्रतिबद्धता = वचनबद्धता

20.मनोनीत = चुना हुआ

21.महारत = योग्यता

22.सन्नद्ध = किसी कार्य में तल्लीन

23.समाहित = व्यवस्थित रूप से एकत्रित किया हुआ

24.सौष्ठव = उत्तम

25.हताश = जीवन से हारा हुआ

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. मैथिलीशरण गुप्त के व्यक्तित्व का विस्तृत परिचय दीजिए।
2. राष्ट्रकवि के साहित्यिक अवदानों की चर्चा कीजिए।
3. हिंदी साहित्य में मैथिलीशरण गुप्त के स्थान एवं महत्व पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मैथिलीशरण गुप्त के कृतित्व पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।
2. मैथिलीशरण गुप्त की रचना यात्रा पर प्रकाश डालिए।
3. मैथिलीशरण गुप्त की काव्यगत विशेषताओं की चर्चा कीजिए.

खंड (स)

I . सही विकल्प चुनिए –

1. महात्मा गांधी ने मैथिलीशरण गुप्त को कौन सी उपाधि दी? ( )

   (अ) साहित्य शिरोमणि (आ) हिंदीदूत (इ) राष्ट्रकवि

2. हिंदी साहित्य में सांस्कृतिक नव जागरण का दस्तावेज गुप्त की किस रचना को माना जाता है? ( )

   (अ) साकेत (आ) भारत भारती (इ) रंग में भंग

3. 'साकेत' किस प्रकार की विधा है? ( )

   (अ) महाकाव्य (आ) खंडकाव्य (इ) रूपक काव्य

4. 'यशोधरा' कृति में किसे केंद्रीय पात्र बनाया गया है? ( )

   (अ) यशोदा (आ) यशोधरा (इ) गौतम बुद्ध

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. गुप्त जी ने 'मानस मुद्रण' प्रेस की स्थापना ....ई. में की।
2. गुप्त जी ने 'साहित्य सदन' प्रेस को ....ई. में शुरू किया।
3. 'कवि दिवस' ...... अगस्त को मनाया जाता है।
4. ....पत्रिका में गुप्त जी 'विदग्ध हृदय' के नाम से अपनी रचनाएँ प्रकाशित करवाते थे।

III. सुमेल कीजिए -

1. रामचरण कनकने	(अ) मौलिक नाटक
2. शकुंतला	(आ) 1935 ई.
3. पद्मभूषण उपाधि	(इ) मैथिलीशरण गुप्त के पिता
	(ई)1954ई.

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. मैथिलीशरण गुप्त : आनंद प्रकाश दीक्षित
2. मैथिलीशरण गुप्त ग्रंथावली (मौलिक तथा अनूदित समग्र कृतियों का संकलन 12 खण्डों में) : सं. कृष्णदत्त पालीवाल
3. मैथिलीशरण गुप्त पुनर्मूल्यांकन : नगेंद्र
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल
5. शुक्ल, डॉ प्रेमनारायण (सम्पादक), सम्मलेन पत्रिका (त्रैमासिक), राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त विशेषांक
6. मैथिलीशरण गुप्त और तत्कालीन भारतीय साहित्यिक परिवेश : सं. राघव प्रकाश

इकाई 8 : 'साकेत' : नवम सर्ग

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 मूल पाठ : 'साकेत' : नवम सर्ग

8.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

8.3.2 अध्येय कविता

8.3.3 विस्तृत व्याख्या

8.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

8.4 पाठ सार

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

8.6 शब्द संपदा

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

'साकेत' राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त का अमर महाकाव्य है। 'साकेत' का प्रथम प्रकाशन सन् 1931 में हुआ। इस कृति के लिए मैथिलीशरण गुप्त को सन् 1932 में 'मंगलाप्रसाद परितोषिक' पुरस्कार प्रदान किया गया। गुप्त जी की कृतियों में प्रायः इतिहास के भूले-बिसरे, उपेक्षित पात्रों को औदात्य के धरातल पर स्थापित किया जाता रहा है। 'रामायण' के कथानक एवं पात्रों को लेकर भारतीय भाषा एवं साहित्य का भंडार भरा हुआ है। मैथिलीशरण गुप्त ने रामायण के प्रति अपनी विशिष्ट दृष्टि को चित्रित करते हुए राम के छोटे भाई लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के विरह को मार्मिक अभिव्यक्ति दी है। 'साकेत' में लक्ष्मण एवं उर्मिला के पावन दाम्पत्य को पढ़कर सहृदय का मन द्रवित हो जाता है। कैकेयी के पश्चाताप को मनोवैज्ञानिकता के

धरातल पर कवि ने बड़ी सूक्ष्मता के साथ इस महाकाव्य में प्रस्तुत किया है। 'साकेत' महाकाव्य का नवम सर्ग अत्यंत ही मार्मिक है। उर्मिला के विरह में प्राकृतिक उपादानों की महत्वपूर्ण भूमिका को चित्रित किया गया है।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- मैथिलीशरण गुप्त के महाकाव्य 'साकेत' से परिचित हो सकेंगे।
- 'साकेत' के चयनित अंशों की व्याख्या कर सकेंगे।
- 'साकेत' में वर्णित उर्मिला की वेदना से परिचित हो सकेंगे।
- अध्येय कविता के काव्य की संवेदना से परिचित हो सकेंगे।
- मैथिलीशरण गुप्त की काव्य-भाषा की विशेषताएँ जान सकेंगे।
- मैथिलीशरण गुप्त के काव्य सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।

8.3 मूल पाठ : 'साकेत' : नवम सर्ग

कवि मैथिलीशरण गुप्त अपने युगीन गतिविधियों के प्रति जितने अधिक सजग होते हैं, उनकी रचनाओं में जीवंतता उतनी ही अधिक बढ़ जाती है। 'साकेत' कवि के काव्यात्मक सौंदर्य का सर्वोत्तम उदाहरण है। ऋतुओं के बदलने पर उर्मिला के बदलते हुए मनोभाव को भी कवि ने विवेचित किया है। संयोग के क्षणों में जो ऋतुएँ नायिका को सुख पहुँचाती थीं, वियोग में उतनी ही तीव्रता के साथ त्रासद बन जाती हैं। कवि ने प्रकृति चित्रण में भले ही रीतिकालीन परंपरा का अनुसरण किया हो, किंतु चित्रण की शैली उनकी अपनी है। 'साकेत के नवम सर्ग में कवि ने प्रकृति को उद्दीपक रूप में चित्रित करते हुए उर्मिला के मनोभाव को विस्तार से चित्रित किया है।

8.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

'साकेत' महाकाव्य के रचयिता मैथिलीशरण गुप्त की दृष्टि में रामकथा के नायक, नायिका मानव लोक के प्राणी हैं। वाल्मीकि के 'रामायण' तथा तुलसीदास के 'रामचरितमानस' की तरह 'साकेत' भी एक रामकथा ही है, किंतु अपने नवीन दृष्टिकोण के कारण यह ग्रंथ पाठकों को सहज ही अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। इसकी कथावस्तु पुरानी होकर भी काव्य दृष्टि सर्वथा नई

है। उर्मिला तथा लक्ष्मण 'साकेत' के कथानक के केंद्रीय पात्र हैं। उर्मिला के विरह वर्णन को पढ़ कर पाठकों की आँखें नम हो आती हैं। प्रस्तुत कविता में उर्मिला की विरह वेदना को देखा जा सकता है। उर्मिला वेदना को महत्वपूर्ण मानती हैं। क्योंकि वेदना की तीव्रता के कारण ही वे वेदना को हीरे सी अनमोल मानती हैं। वेदना से ही उर्मिला अपने प्रेम की दृढ़ता को अनुभूत कर पाती है। वेदना उर्मिला के जीवन में प्राणवायु के समान है, चातक पक्षी की एकनिष्ठता से वे अपने प्रेम की तुलना करती हैं। शरद ऋतु आने पर खंजन पक्षी जब आते हैं, तो उन्हें अपने प्रियतम लक्ष्मण की याद दिलाते हैं। उर्मिला शिशिर ऋतु से कहती हैं कि व्यर्थ ही वह वन और पर्वतों में घूमता है, जबकि प्रियतम के बिना वह पतझड़ सी बनी सदा काँपती रहती है। वे अपने विरहपूर्ण जीवन की तुलना अगणित तारों से करती हैं। वे कामदेव को बसंत के आगमन पर चुनौती देती हुई अपने सतीत्व के सिंदूर से भस्म करने की चेतावनी देती हैं। उर्मिला अपनी उद्विग्नता में अपनी सखी को कभी कोमल फूलों को तोड़ने से रोकती हैं तो कभी कहती हैं इन्हें तोड़कर व्यर्थ झड़ने से बचा लो। नायिका रोना आने पर भी गाने की बात कहती हैं। उन्हें ऐसा भ्रम होता है कि उनके प्रिय छिप-छिप कर उर्मिला को देखने आते हैं। वे कहती हैं कि प्रिय आए और देखे कि मैं जी नहीं रही हूँ, बल्कि अपने आँसू पी रही हूँ।

8.3.2 अध्येय कविता

साकेत : नवम सर्ग (चयनित अंश)

1. दो वशंजों में प्रकट करके पावनी लोक-लीला,
सौ पुत्रों से अधिक जिनकी पुत्रियाँ पूतशीला;
त्यागी भी हैं शरण जिनके, जो अनासक्त गेही,
राजा-योगी जय जनक वे पुण्यदेही, विदेही।

2. वेदने, तू भी भली बनी।
पाई मैंने आज तुझी में अपनी चाह घनी।
नई किरण छोडी है तूने, तू वह हीर-कनी,
सजग रहूँ मैं, साल हृदय में, ओ प्रिय-विशिख-अनी!

ठंडी होगी देह न मेरी, रहे दृगंबु-सनी,
तू ही उष्ण उसे रक्खेगी मेरी तपन-मनी!
आ, अभाव की एक आत्मजे, और अदृष्टि-जनी!
तेरी ही छाती है सचमुच उपमोचितस्तनी!
अरी वियोग-समाधि, अनोंखी, तू क्या ठीक ठनी,
अपने को, प्रिय को, जगती को देखूँ खिंची-तनी।
मन-सा मानिक मुझे मिला है तुझमें उपल-खनी,
तुझे तभी त्यागूँ जब सजनी, पाऊँ प्राण-धनी।

3. कहती मैं, चातकि, फिर बोल,
ये खारी आँसू की बूँदें दे सकतीं यदि मोल!
कर सकते हैं क्या मोती भी उन बोलों की तोल?
फिर भी फिर भी इस झाड़ी के झुरमुट में रस घोल।
श्रुति-पुट लेकर पूर्वस्मृतियाँ खड़ी यहाँ पट खोल,
देख, आप ही अरुण हुये हैं उनके पांडु कपोल!
जाग उठे हैं मेरे सौ सौ स्वप्न स्वयं हिल-डोल,
और सन्न हो रहे, सो रहे, ये भूगोल-खगोल।
न कर वेदना-सुख से वचिंत, बढ़ा हृदय-हिदोंल,
जो तेरे सुर में सो मेरे उर में कल-कल्लोल!

4. निरख सखी, ये खंजन आये,
फेरे उन मेरे रजंन ने नयन इधर मन भाये!
फैला उनके तन का आतप, मन-से सर सरसाये,

घूमें वे इस ओर वहाँ, ये हसं यहाँ उड़ छाये!
करके ध्यान आज इस जन का निश्चय वे मुस्काये,
फूल उठे हैं कमल, अधर-से ये बधूंक सुहाये!
स्वागत, स्वागत, शरद, भाग्य से मैंने दर्शन पाये,
नभ ने मोती वारे, लो, ये अश्रु अर्घ्य भर लाये!

5. शिशिर, न फिर गिरि-वन में,
जितना माँगे, पतझड़ दूँगी मैं इस निज नदंन में,
कितना कंपन तुझे चाहिए, ले मेरे इस तन में।
सखी कह रही, पांडुरता का क्या अभाव आनन में?
वीर, जमा दे नयन-नीर यदि तू मानस-भाजन में,
तो मोती-सा मैं अकिंचना रक्खूँ उसको मन में।
हँसीं गई, रो भी न सकूँ मैं, -अपने इस जीवन में,
तो उत्कंठा है, देखूँ फिर क्या हो भाव-भुवन में।

6. शीत काल है और सबेरा;
उछल रहा है मानस मेरा;
भरे न छींटों से तनु तेरा,
रुदन जहाँ क्या गान वहाँ?
भूल पड़ी तू किरण, कहाँ?
मेरी दशा हुई कुछ ऐसी
तारों पर अँगुली की जैसी,
मींड़, परन्तु कसक भी कैसी?
कह सकती हूँ नहीं न हाँ।

भूल पड़ी तू किरण, कहाँ?
न तो अगति ही है न गति, आज किसी भी ओर,
इस जीवन के झाड़ में रही एक झकझोर!

7. मुझे फूल मत मारो,
मैं अबला बाला वियोगिनी, कुछ तो दया विचारो।
होकर मधु के मीत मदन, पटु, तुम कटु गरल न गारो,
मुझे विकलता, तुम्हें विफलता, ठहरो, श्रम परिहारो।
नही भोगनी यह मैं कोई, जो तुम जाल पसारो,
बल हो तो सिन्दूर-बिन्दु यह-यह हर नेत्र निहारो!
रूप-दर्प कंदर्प, तुम्हें तो मेरे पति पर वारो,
लो, यह मेरी चरण-धूलि उस रति के सिर पर धारो!

8. छोड़, छोड़, फूल मत तोड़,
आली, देख मेरा हाथ लगते ही यह कैसे कुम्हलाये हैं?
कितना विनाश निज क्षणिक विनोद में है,
दुःखिनि लता के लाल आँसुओं से छाये हैं।
किन्तु नहीं, चुन ले सहर्ष खिले फूल सब
रूप, गुण, गन्ध से जो तेरे मनभाये हैं,
जाये नहीं लाल लतिका ने झड़ने के लिए,
गौरव के संग चढ़ने के लिए जाये हैं।

9. अब जो प्रियतम को पाऊँ
तो इच्छा है, उन चरणों की रज मैं आप रमाऊँ !

आप अवधि बन सकूँ कहीं तो क्या कुछ देर लगाऊँ,

मैं अपने को आप मिटाकर, जाकर उनको लाऊँ।

ऊषा-सी आई थी जग में, सन्ध्या-सी क्या जाऊँ?

श्रान्त पवन-से वे आवें, मैं सुरभि -समान समाऊँ !

मेरा रोदन मचल रहा है, कहता है, कुछ गाऊँ,

उधर गान कहता है, रोना आवे तो मैं आऊँ !

इधर अनल है और उधर जल हाय! किधर मैं जाऊँ?

प्रबल बाष्प, फट जाय न यह घट कह तो हाहा खाऊँ

10. विचारती हूँ सखि, मैं कभी कभी,

अरण्य से हैं प्रिय लौट आते।

छिपे छिपे आकर देखते सभी

कभी स्वयं भी कुछ दीख जाते!

आते यहाँ नाथ निहारने हमें,

उद्धारने या सखि, तारने हमें?

या जानने को, किस भाँति जी रहे?

तो जान लें वे, हम अश्रु पी रहे!

निर्देश : 1. उक्त कविताओं का सस्वर वाचन कीजिए।

2. उक्त कविताओं का मौन वाचन कीजिए।

8.3.3 विस्तृत व्याख्या

दो वशंजों में ....वे पुण्यदेही, विदेही।

शब्दार्थ : पूतशीला = पवित्र चरित्र वाली, शीलवती। अनासक्त = उदासीन। गेही = गृहस्थ।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में दो कुलों को अपने अनुपम त्याग से गौरवान्वित करने वाली सीता और उर्मिला के चरित्र को बताया गया है।

प्रसंग : राम के वनगमन के समय सीता भी अपने पति के साथ वन के लिए जाती हैं। लक्ष्मण अपने भाई और भाभी की सेवा के लिए उनके साथ जाते हैं। मैथिलीशरण गुप्त ने ऐसे प्रसंग में उर्मिला की पीड़ा से द्रवित होकर उनके त्याग का चित्रण किया हैं।

व्याख्या : कवि के अनुसार सीता और उर्मिला जैसी पुत्रियों के त्यागमय जीवन के कारण विदेहराज राजा जनक के गौरव में वृद्धि होती है। क्योंकि निमि और रघु वंश ऐसी पुण्यशीलाओं के कारण धन्य हो गया है। राजा जनक अपनी पुत्रियों के पवित्र त्याग के कारण स्वयं को सौ पुत्रों वाले व्यक्ति से भी अधिक भाग्यशाली समझते हैं। राजा जनक का यश चारों ओर महान त्यागी गृहस्थ के रूप में विख्यात था, ऐसे में सीता तो राज सुख का त्याग करके राम के साथ वन की ओर चल पड़ती हैं, जबकि उर्मिला का त्याग इन सब में सबसे ऊँचा हो जाता है। वह महल में रह कर भी तपस्विनी बनी रहती है।

विशेष : प्रस्तुत पद्यांश में विरोधाभास अलंकार को देखा जा सकता है। जनक की प्रसंशा कवि मंगलाचरण के रूप में करते हैं। उर्मिला, सीता और राजा जनक के भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन के संतुलन को बताया गया है ।

बोध प्रश्न

- 'पूतशीला' शब्द का प्रयोग किस अर्थ में किया गया है?

वेदने, तू भी भली बनी...............पाऊँ प्राण-धनी।

शब्दार्थ : वेदना = दुःख। हीर कनी = हीरे का कण। विशिख = रोगियों के रहने का स्थान अथवा बाण। उपमोचिस्तनी = माँ के स्तन के पास अथवा हृदय के पास।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में वेदना का मानवीकरण करते हुए कवि ने वेदना के सकारात्मक पक्ष को चित्रित किया है। उर्मिला को अपनी वेदना की तीव्रता में प्रेम की तीव्रता की अनुभूति होती है।

प्रसंग : इस पद्यांश में उर्मिला की विरह वेदना का चित्रण किया गया है। वेदना का यह अनोखा रूप उर्मिला को अधिक अच्छा लगता है।

व्याख्या : उर्मिला के माध्यम से कवि ने इस पद्यांश में वेदना के महत्व को प्रतिपादित किया है। उर्मिला वेदना से कहती हैं कि वेदना तुम्हारे ही कारण मुझे आज अपने प्रिय के प्रति प्रेम की गहराई का पता चला है। मेरे मन में यह आशा जगी है कि मेरे प्रिय से मेरा मिलन अवश्य होगा। उर्मिला को वेदना जहाँ एक ओर हीरे के प्रकाश सी अनुभूत होती है, वहीं दूसरी ओर वे वेदना को पीड़ाजनक बाण के समान मानकर स्वयं को सजग रहने के लिए कहती हैं। प्रिय के अभाव रूपी पीड़ा में तथा प्रिय की अदृष्टि की स्थिति में वेदना अत्यधिक प्रबल हो उठती है। वे कहती हैं वेदना के कारण निरंतर मेरे आँसुओं के बहते रहने पर भी मेरा शरीर वेदना रूपी सूर्यकांत मणि के कारण गर्म रहता है। वेदना अभाव की इकलौती पुत्री है तथा उसकी माँ अदर्शन है। उर्मिला लक्ष्मण के अभाव तथा अदर्शन से उत्पन्न वेदना के सीने से पुत्री की तरह चिपकी रहना चाहती हैं। वे अपने प्रिय के मिलन पर ही उसे छोड़ने की बात कहती हैं।

विशेष : वेदना के प्रति नवीन दृष्टि का प्रतिपादन किया गया है। वेदना को उर्मिला के जीवित रहने का आधार बताया गया है।

बोध प्रश्न

- वेदना को कवि ने हीरकनी क्यों कहा है?

कहती मैं, चातकि , फिर बोल............. मेरे उर में कल-कल्लोल!

शब्दार्थ : श्रुति-पुट = दोनों कान। पांडु = पीला पड़ना। हिंदोल= एक राग अथवा झूला। कल-कल्लोल = मन की लहर।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला अपने प्रेम की एकनिष्ठता की उपमा चातकी पक्षी से देती हैं। वे अपनी पूर्व स्मृतियों को श्रुति पुट सी मानती हुई वेदना को अपने जीवन का सुख मानती हैं।

प्रसंग : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला स्वयं को चातकी मानते हुए अपने आंसुओं को मोती से भी अधिक अनमोल बताती हैं। अपने जीवन की पूर्वस्मृतियों को श्रुति पुट सी पवित्र मानते हुए वेदना के सुर में सुर मिला कर गाती हैं।

व्याख्या : उर्मिला स्वयं को चातकी मानते हुए कहती हैं कि हे मेरे मन रूपी चातकी ! मेरे नेत्रों से निरंतर बहने वाले आँसुओं का मूल्य मोती से भी अधिक है। मेरा जीवन फिर भी पतझड़ बना हुआ है। मेरे जीवन के पतझड़ में पूर्वस्मृतियाँ श्रुति पुट सी यादों के दरवाजों को खटखटाया

करती हैं। मेरी यादों की सुरलहरियाँ मेरे पीले पड़े गालों को लाल बना देती हैं। मेरे निर्जीव से शून्य जीवन को वेदना आकर स्मृतियों के झूले पर झुलाने और गाने लगती हैं। उर्मिला यादों की लहरों पर झूलते हुए अपने प्रिय की स्मृतियों के बादल को चातकी सी देख रही हैं।

विशेष : विवेच्य पद्यांश में उर्मिला के प्रेम की एकनिष्ठता की कवि चातकी से उपमा देते हैं तो आँसुओं की लड़ियों को मोती से भी अधिक अनमोल चित्रित करते हैं। नायिका वेदना को सुख मानकर उसी के साथ रहना चाहती है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला ने स्वयं को चातकी क्यों कहा है?

निरख सखी, ये खंजन आये.................ये अश्रु अर्घ्य भर लाये!

शब्दार्थ : निरख = देखो। खंजन = एक पक्षी। आतप= धूप, प्रकाश। बंधूक = लाल रंग का फूल। शरद = एक ऋतु का नाम जो ठंडी से पहले आता है। अर्घ्य = पूजा के लिए जल।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला प्रकृति के अलग-अलग छटाओं में अपने प्रियतम की छवि देखती हैं।

प्रसंग : प्रिय के सौंदर्य का अद्भुत प्रसंग कवि ने किया है। उर्मिला प्रकृति में कमल के खिलने का कारण अपने प्रिय की मुस्कान को मानती हैं। प्रकृति के उपादानों में होने वाले सुंदर परिवर्तन को देख-देख कर वह प्रसन्न होती हैं।

व्याख्या : उर्मिला अपनी सखी से कहती हैं कि देखो सखी! शरद ऋतु शुरू हो गया है। खंजन पक्षी इधर आकर मेरे प्रिय की आँखों का स्मरण दिलाते हैं। इस ऋतु में धूप चारों ओर फैलकर मेरे प्रिय की आभा का आभास दिलाते हैं। हे सखी, मेरे प्रिय की दृष्टि खंजन पक्षी के माध्यम से पड़ी तो तालाब का कमल भी खिल उठा। कमल की कोमलता मेरे प्रिय की ही कोमलता है। अवश्य ही मेरे प्रिय मुझे याद करके हँसे होंगे, जिससे ये धवल हंस उड़कर इधर आ गए हैं। मेरे प्रिय की मुस्कान कमल के खिलने में प्रतिबिंबित हो रही है, प्रिय के हंसने पर उनके लाल-लाल ओंठ यहाँ दुपहरियाँ के फूल के रूप में खिले हुए हैं। नायिका कहती हैं शरद ऋतु के आने से मैं ही नहीं बल्कि आकाश भी खुश होकर ओस रूपी

मोती बरसा रहा है। मैं तो ख़ुशी से अपने आंसुओं के अर्घ्य चढ़ा रही हूँ, हे शरद ऋतु ! इन्हें स्वीकार करके मुझ पर अनुग्रह करो।

विशेष : प्राकृतिक उपादानों का अद्‌भुत चित्रण इस पद में किया गया है। प्रकृति के प्रत्येक रम्य दृश्य में प्रियतम की छवि का सुंदर साम्य प्रस्तुत किया गया है।

बोध प्रश्न

- तालाब के कमल किस कारण खिल जाते हैं?

शिशिर, न फिर गिरि -वन में.................. क्या हो भाव-भुवन में।

शब्दार्थ : पांडुरता = पीलापन। आनन= चेहरा। अकिंचना = बेचारी। उत्कंठा = इच्छा। भुवन = संसार।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में शिशिर ऋतु का मानवीकरण किया गया है।

प्रसंग : उर्मिला द्वारा शिशिर ऋतु का आवाहन किया गया है। वे शिशिर ऋतु की सहायता करना चाहती हैं।

व्याख्या : उर्मिला कहती हैं, हे शिशिर! तुम निरर्थक पर्वत, पहाड़ की ओर घूमती रहती हो। तुझे जो भी चाहिए वह सब मेरे पास है। मेरे शरीर रूपी पतझड़ से आओ तुम्हें पतझड़ दे दूं। तुम्हारा काम सबको कंपन देना है, तो लो मैं भी अपने प्रिय के विरह में रात-दिन कांपती रहती हूँ। तुम्हें जितना कंपन चाहिए मुझसे ले लो। तुम्हारे आने से प्रकृति पीली पड़ जाती है। मेरी सखियाँ कहती हैं कि मेरा शरीर प्रियतम के अभाव में पीला पड़ चुका है।

हे शिशिर! तुम्हारे आने से सब ठंडी से जम जाते हैं। मेरे प्रियतम की स्मृतियों के आंसुओं को ज़माने में मेरी सहायता करो ताकि मैं अकिंचन उन्हें जमा कर सहेज लूं। मेरी विवशता तो देखो कि मैं अपने प्रिय को दिए गए वचन के कारण रो भी नहीं सकती हूँ। मेरी भी अब ऐसी उत्सुकता है कि हंसने-रोने के अभाव में मेरे भाव-जगत की क्या स्थिति है? अर्थात मैं स्वयं के भाव जगत को जानने के लिए उत्कंठित हूँ।

विशेष : शिशिर ऋतु का मानवीकरण किया गया है। उर्मिला की विरहपूर्ण स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला शिशिर ऋतु को क्यों बुलाती हैं?

शीत काल है और सबेरा..................... झाड़ में रही एक झकझोर!

शब्दार्थ : रुदन = रोना। मींड = मलना। कसक = रुक-रुक कर होने वाली पीड़ा।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला की मानसिक पीड़ा का चित्रण हुआ है।

प्रसंग : कवि ने इस पद्यांश में उर्मिला के गहन विरह पीड़ा को चित्रित करते हुए उनकी विवशता को प्रकट किया है।

व्याख्या : इस पद्यांश में उर्मिला शीतकाल के गुनगुने धूप को देख कर व्यथित हो उठती हैं। वे कहती हैं शीत ऋतु की कपकपाती ठंडी में सुबह की सूर्य किरण सुखदायक प्रतीत होती है किन्तु मेरे लिए शीत ऋतु की किरणें दुखदायक बन गई हैं, क्योंकि प्रिय विरह के कारण आँसुओं के छींटों से मेरा तन भरा हुआ है। नायिका कहती हैं जहाँ रोना होगा वहाँ हे किरण! गान भला कैसे हो सकता है। निश्चय ही किरणें अपना मार्ग भूलकर मेरी ओर आ गई हैं। मेरी विरह स्थिति तो ऐसी है कि उंगली पर तारे गिनने जैसी समाप्त ही नहीं हो रही हैं। अतः मेरे मन की पीड़ा रह-रह कर मुझे त्रास पहुँचा रही है। मेरे जीवन के पतझड़ में मुझे न तो गति और न अगति ही मिली। क्योंकि मेरी बड़ी बहन सीता भले ही वन में हैं, लेकिन अपने पति के साथ हैं। मुझे तो न पति का सुख है और न ही राजमहल का सुख मिला। अतः हे किरण! तू भूलकर मेरे पास आ गई है। मेरे मन की व्यथा तो मैं किसी से कह भी नहीं सकती हूँ।

विशेष : विवेचित पद्यांश में उर्मिला के विरह का कारुणिक चित्रण किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला को गति या अगति क्यों नहीं मिलती है?

मुझे फूल मत मारो....................... उस रति के सिर पर धारो!

शब्दार्थ : मदन = कामदेव। कटु = कडुवा। पटु = बुद्धिमान। गरल = विष। विकलता = व्याकुलता। परिहारो = दूर करो। हर नेत्र = शिव का नेत्र। दर्प = घमंड। कंदर्प = कामदेव। रति = कामदेव की पत्नी का नाम।

संदर्भ : इस पद्यांश में फूलों को खिला हुआ देख कर उर्मिला की विरह पीड़ा बढ़ जाती है। उनकी मनःस्थिति का कवि ने जीवंत चित्रण किया है।

प्रसंग : इस पद में उर्मिला कामदेव को अपने सतीत्व की शक्ति से परास्त करती हुई चित्रित हुई हैं।

व्याख्या : पुष्पों का खिलना सबको प्रिय लगता है, किन्तु विरहिणी उर्मिला को पुष्पों का खिलना अत्यंत त्रासद प्रतीत होता है। वे कहती हैं हे कामदेव! मुझे अपने काम पुष्प से मत मारो। मैं पहले ही विरहिणी स्त्री हूँ, मेरे प्रियतम मेरे साथ नहीं हैं। मैं जानती हूँ कि तुम बसंत के मित्र हो, इसलिए मधु की ही वर्षा करोगे। लेकिन मुझ पर तुम्हारा मधु विष बनकर असर नहीं करेगा। क्योंकि मैं पतिव्रता स्त्री हूँ, संयम से रहती हूँ। मैं भोगिनी नहीं अपितु योगिनी स्त्री हूँ। अतः हे कामदेव! यदि तुममें शक्ति है तो अपने काम बाण के साथ मेरे माथे के सिंदूर की ओर देखो। यह शिव की तीसरी आंख बनकर तुम्हें पुनः भस्म कर देगा। यदि तुम्हें अपने रूप का घमंड है तो मेरे पति तुमसे भी अधिक रूपवान हैं। और मेरे चरणों की धूल ले जाकर अपनी पत्नी रति पर डाल दो।

विशेष : इस पद में उर्मिला के सतीत्व को सशक्त रूप में कवि ने चित्रित किया है। यहाँ फूल को कामदेव के प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है।

बोध प्रश्न

- कामदेव के बाणों से भी अधिक शक्तिशाली उर्मिला के पास क्या है?

छोड़, छोड़, फूल मत तोड़....................संग चढ़ने के लिए जाये हैं।

शब्दार्थ : लतिका = बेल। विनोद = हंसी-मजाक। लाल = पुत्र, माणिक्य। जाये = पैदा किए।

संदर्भ : इस पद्यांश में कवि उर्मिला की मानसिक उद्विग्नता का चित्रण करते हैं।

प्रसंग : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला राजोद्यान में अपने प्रिय की बातें करती हुई बैठी थी कि तभी पूजा के लिए पुष्प तोड़ने के लिए दूसरी सखी आती हैं, जिसे वे तोड़ने से मना करती हैं।

व्याख्या : उर्मिला कहती हैं, हे सखी! इन फूलों को मत तोड़ो। देखो तो तुम्हारा हाथ लगते ही कैसे ये कुम्हला गए हैं। इसकी माता लता का हृदय रो रहा है। फूल को तोड़ने पर जो द्रव्य पदार्थ निकल रहा है ये उन फूलों की माँ के अश्रु हैं। अचानक उर्मिला के विचार बदल जाते हैं। वे कहती

हैं नहीं-नहीं, तुम इन सारे खिले हुए पुष्पों को तोड़ लो, इन पुष्पों के रूप, गुण तथा सुगंध को ऐसे व्यर्थ मत करो। इनकी माँ ने इन्हें यूं ही मुरझाने, झड़ने के लिए जन्म नहीं दिए हैं। बल्कि इन्हें तो गौरव के साथ सिर पर चढ़ने के लिए जन्म दिया है।

विशेष : प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने उर्मिला के मन की उद्विग्नता का चित्रण किया है। इसमें लता का मानवीकरण किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला अपनी सखी को फूल तोड़ने के लिए क्यों कहती हैं ?

अब जो प्रियतम को पाऊँ .... यह घट कह तो हाहा खाऊँ ।

शब्दार्थ : रज = धूलि। श्रांत = थका हुआ। सुरभि = सुगंध। रोदन = रोना। अनल = आग। घट = घड़ा, हृदय। वाष्प = भाप। हाहा खाना = विनती करना।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में उर्मिला के मन के भाव का प्रकटीकरण हुआ है।

प्रसंग : उर्मिला के मन में अपने प्रियतम से मिलने की तीव्र इच्छा है। वे प्रिय के चरण रज लगाने के बाद मृत्यु के मुख में भी जाने से पीछे नहीं हटना चाहती हैं।

व्याख्या : उर्मिला अपनी सखी से कहती हैं, हे सखी! मेरा मन कह रहा हैं कि यदि मेरे स्वामी के दर्शन अभी हो जाय तो उनके चरणों की धूलि लगाकर मैं स्वयं समय बन जाऊँ। उनकी प्राप्ति के बाद तो स्वयं को मिटाने में भी देरी न करूँ। वे अपनी सखी से कहती हैं कि वे अपने जीवन की उषा को लेकर आई थीं। अब संध्या के साथ जीवन से विदा नहीं लेना चाहती हैं। वे कहती हैं जब मेरे स्वामी हवा की धीमी गति से आयेंगे तो मैं उनमें सुगंध सी रम जाना चाहती हूँ। रोते-रोते बहुत समय हो गया अब मेरा मन गाने को कह रहा है। मेरी ऐसी विषम स्थिति में कहीं असंतुलित होकर मेरा हृदय फट न जाय। आँखों में जल और हृदय में विरह की अग्नि दोनों जैसे मेरी नियति बन गए हैं।

विशेष : इस पद्यांश में उर्मिला के विलक्षण प्रेम को लाक्षणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला का मन क्या करने को कहता है?

विचारती हूँ सखि.................................. हम अश्रु पी रहे!

शब्दार्थ : अरण्य = वन। निहारने = देखने। उद्धारने = उपकार करने

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश में कवि ने उर्मिला के विरह भाव को सुंदर अभिव्यक्ति दी है।

प्रसंग : उर्मिला अपनी सखी से अपने प्रिय के छिप कर देखने की बात करती हैं।

व्याख्या : उर्मिला अपनी सखी से कहती हैं कि हे सखी! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि कभी-कभी मेरे प्रिय वन से आकर मेरी हालत छिप-छिप कर देखते हैं और कभी-कभी चांदनी रात में मुझे भी दीख जाते हैं। मुझे लगता है कि मेरे स्वामी को मेरी हालत पर दया आती होगी, इसलिए मेरा उध्दार करने के लिए, मुझे तारने के लिए आते होंगे या फिर ये देखने आते हैं कि मैं किस प्रकार जी रही हूँ? तो वे देख लें कि मैं उनके बिना कैसे जी रही हूँ। मैं तो हमेशा आंसुओं को पीते हुए जी रही हूँ।

विशेष : इस पद्यांश में कवि ने उर्मिला के मानिनी स्वरूप को चित्रित किया है। विरह विगलित उर्मिला को अपने प्रियतम के आस-पास होने की अनुभूति होती है।

बोध प्रश्न

- उर्मिला हर समय क्या पीते हुए जी रही थी?

8.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

मैथिलीशरण गुप्त अपने देशकाल, संस्कृति, साहित्य के सच्चे प्रतिनिधि कवि हैं, इसी कारण इन्हें महात्मा गांधी ने राष्ट्रकवि की उपाधि से विभूषित किया था। वे सदैव प्राचीन मान्यताओं, रीतियों, विचारों एवं पात्रों को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत करते हुए युगीन समस्याओं के समाधान हेतु प्रयत्नरत रहते थे। एक पूर्व प्रचलित कथा को आधार बनाकर नितांत नवीन धरातल पर प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत करना सहज कार्य नहीं है। इतिहास तथा पुराणों के भूले-बिसरे तथा उपेक्षित पात्रों को लेकर उन्हें साहित्य समाज में प्रतिष्ठा दिलाना अत्यंत दुष्कर कार्य होता है, जिसे कवि ने बड़ी सफलतापूर्वक किया है। 'साकेत' इसका जीवंत उदाहरण है। इस प्रबंध काव्य के आरंभिक आठ सर्गों में रामायण की कथा को संक्षेप में वर्णित किया गया है। नवम सर्ग में कवि ने कैकेयी और उर्मिला जैसी उपेक्षित पात्रों के मनःस्थिति को चित्रित करने में कोई कमी नहीं रखी है। विशुद्ध खड़ीबोली में बिंब, प्रतीक, मिथक, छंद, अलंकर, मुहावरे,

लोकोक्ति तथा रस से आपूरित 'साकेत' आधुनिक युग का सुंदरतम महाकाव्य सिद्ध होता है। प्रकृति को एक प्रमुख उपादान बनाकर कवि ने प्रकृति का सुंदरतम मानवीकरण किया है। उर्मिला का चौदह वर्षीय विरही जीवन 'साकेत' के नवम सर्ग का संवेदनात्मक अंश है। 'साकेत' की सबसे अधिक निराश्रित प्राणी उर्मिला ही होती है। उर्मिला की दयनीय दशा को कवि ने मार्मिक अभिव्यक्ति दी है।

8.4 पाठ सार

'साकेत' के नवम सर्ग में उर्मिला के विरह वर्णन की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। 'साकेत' महाकाव्य को कवि ने बारह सर्गों में रचा है। आरंभिक आठ सर्गों में रामायण की कथा चित्रित है। इसका नवम सर्ग उर्मिला के आंसुओं से भीगा हुआ है, जिसे पढ़कर पाठक भी द्रवित हो उठते हैं। दस से बारह तक के सर्गों में लक्ष्मण तथा उर्मिला के मिलन का प्रसंग है। नवम सर्ग में छह ॠतुओं का वर्णन कवि ने उर्मिला के विरह की तीव्रता के साथ किया है। उर्मिला के त्याग को कवि राजा जनक के त्याग से भी बड़ा बताते हैं। उर्मिला के विरह वर्णन में प्रकृति का उद्दीपन रूप में चित्रण हुआ है। परंपरा को नई दृष्टि से वर्णित करने की कला ही कवि को राष्ट्रकवि की गरिमा प्रदान करता है। उर्मिला अपने सतीत्व के बल से कामदेव को भी शिव की भांति भस्म करने की बात कहती हैं। शरद, शीत, शिशिर, हेमंत, ग्रीष्म एवं वर्षा ॠतु उनके विरह के समक्ष याचक रूप में चित्रित हुए हैं। इस प्रकार 'साकेत' का नवम सर्ग उर्मिला के उदात्त त्याग की अमर कथा बन कर सामने आता है।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'साकेत' में मैथिलीशरण गुप्त ने राम कथा को आधार बनाया है, लेकिन इस काव्य में राम का नायकत्व केंद्र में नहीं है। 'साकेत' (अयोध्या) को सर्वाधिक महत्व मिलने के कारण वही नायकत्व का अधिकारी है।
2. 'साकेत' में राम कथा को लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के अवलोकन बिंदु से प्रस्तुत किया गया है। इसलिए यह राम काव्य होते हुए भी मूलतः उर्मिला की कथा है।

3. कवि ने नवम सर्ग में कथा प्रवाह को शिथिल करते हुए अत्यंत विस्तार से गीति शैली में उर्मिला के विरह का आत्मपरक वर्णन किया है।
4. आत्मपरक होने के कारण 'साकेत' का नवम सर्ग एक स्वतंत्र गीति काव्य जैसा प्रतीत होता है, जिसमें विरहिणी उर्मिला की विविध प्रेम दशाओं का विस्तार से अंकन किया गया है।
5. स्थूल इतिवृत्त के स्थान पर सूक्ष्म मनोभावों पर केंद्रित गीतों के कारण 'साकेत' का नवम सर्ग द्विवेदी युग की प्रचलित काव्य शैली का अतिक्रमण करते हुए छायावाद का पूर्वाभास प्रतीत होता है।

8.6 शब्द संपदा

1. अवदान = योगदान
2. उत्कंठित = अधीर
3. उद्दीपन = उत्तेजित करना
4. उद्विग्नता = आकुलता
5. उपादान = साधन
6. उपेक्षित = उदासीनता
7. औदात्य = महान
8. दुष्कर = मुश्किल
9. द्रवित = पिघलना
10. परिमार्जित = स्वच्छ ढंग से
11. रम्य = सुंदर

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'साकेत' महाकाव्य का परिचय दीजिए।
2. 'साकेत' के संदर्भ में मैथिलीशरण गुप्त की काव्य-भाषा की विशेषताओं का चित्रण कीजिए।

3. ‘साकेत’ में वर्णित उर्मिला की वेदना पर प्रकाश डालिए।
4. प्रकृति-चित्रण में मैथिलीशरण गुप्त की नवीन दृष्टि का उल्लेख कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 250 शब्दों में दीजिए।

1. उर्मिला के त्याग को कवि ने अधिक ऊँचा क्यों कहा है?
2. वेदना से उर्मिला क्या कहती हैं?
3. शिशिर ऋतु से उर्मिला क्या कहती हैं?
4. कवि ने उर्मिला के सतीत्व को किस प्रकार चित्रित किया है?
5. उर्मिला की उद्विग्नता को कवि द्वारा कैसे निरूपित किया गया है?
6. निम्नलिखित अंशों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए -
   i. वेदने, तू भी भली बनी।/ पाई मैंने आज तुझी में अपनी चाह घनी।/ नई किरण छोडी है तूने, तू वह हीर-कनी,/ सजग रहूँ मैं, साल हृदय में, ओ प्रिय-विशिख-अनी!
   ii. शीत काल है और सबेरा;/ उछल रहा है मानस मेरा;/ भरे न छींटों से तनु तेरा,/ रुदन जहाँ क्या गान वहाँ?
   iii. आते यहाँ नाथ निहारने हमें,/ उद्धारने या सखि, तारने हमें?/ या जानने को, किस भाँति जी रहे?/ तो जान लें वे, हम अश्रु पी रहे!

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. ‘साकेत’ का प्रथम प्रकाशन किस सन् में हुआ? ( )

(अ) सन् 1930 में (आ) सन् 1931 में (इ) सन् 1935 में

2. मैथिलीशरण गुप्त को मंगलाप्रसाद पारितोषिक पुरस्कार किस रचना पर दिया गया?( )

(अ) साकेत (आ) नहुष (इ) भारत भारती

3. 'साकेत' में कुल कितने सर्ग हैं? ( )

(अ) 11 सर्ग (आ) 14 सर्ग (इ) 12 सर्ग

4. उर्मिला को फूल कौन मारता है? ( )

(अ) सखी (आ) कामदेव (इ) रति

5. वेदना का पिता कवि ने किसे कहा है? ( )

(अ) अभाव (आ) अदृष्टि (इ) अनासक्ति

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. कवि ने फूल की माता.......................को कहा है।
2. उर्मिला को लक्ष्मण की आँखें ....पक्षी के समान प्रतीत होती हैं।
3. कामदेव का मित्र ....ऋतु है।
4. उर्मिला वेदना को ....के मिलने पर ही छोड़ने की बात कहती हैं।
5. तालाब का कमल ....के मुस्कराने से खिलता है।

III. सुमेल कीजिए -

1. कवि दिवस	(अ) नवम सर्ग
2. पद्मभूषण	(आ) 3 अगस्त को
3. उर्मिला का विरह-वर्णन	(इ) 1954 में

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. साकेत : मैथिलीशरण गुप्त
2. मैथिलाशरण गुप्त - एक पुनर्मूल्यांकन : इला रानी सिंह (संकलन)
3. मैथिलीशरण गुप्त का काव्य - सांस्कृतिक अध्ययन : आशा रानी गुप्ता
4. मैथिलीशरण गुप्त का साहित्य : द्वारका प्रसाद मीतल

इकाई 9 : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

9.3.1 प्रसाद का जन्म तथा परिवार

9.3.2 जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व

9.3.3 जयशंकर प्रसाद का कृतित्व

9.3.4 जयशंकर प्रसाद का जीवन दर्शन

9.3.5 जयशंकर प्रसाद की सौंदर्य चेतना

9.3.6 प्रसाद की भाषा एवं शैली

9.4 पाठ सार

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

9.6 शब्द संपदा

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप छायावाद के चार महत्वपूर्ण स्तंभों में से एक, श्रेष्ठ कवि, दार्शनिक, चिंतक जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व-कृतित्व के बारे में अध्ययन करेंगे। प्रसाद का 48 वर्ष का संघर्षपूर्ण जीवन रहा, किंतु साहित्यिक क्षेत्र में उनकी जो उपलब्धि रही वह कम महत्वपूर्ण नहीं है। भारतीय वाङ्गमय के गहन अध्येता, संस्कृत के प्रकांड विद्वान, दार्शनिक तथा भारतीय संस्कृति पर अगाध आस्था रखने वाले प्रसाद हिंदी साहित्य जगत के अमूल्य निधि हैं।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- छायावाद के प्रसिद्ध कवि जयशंकर प्रसाद के जन्म, वंश, परिवार संबंधी विवरण प्राप्त कर सकेंगे।
- प्रसाद के शिक्षा एवं वैवाहिक जीवन की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व को जान सकेंगे।
- जयशंकर प्रसाद के कृतित्व के बारे में जान पाएँगे।
- जयशंकर प्रसाद के काव्य में सौंदर्य बोध, जीवन दर्शन तथा भाषा शैली का परिचय प्राप्त करेंगे।

9.3 मूल पाठ : जयशंकर प्रसाद : एक परिचय

प्रिय छात्रो! जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में छायावादी कविता का वैभव अपनी क्लासिक पूर्णता के साथ मुखरित हुआ है। उन्होंने हिंदी काव्य में एक तरह से छायावाद की स्थापना की जिसके द्वारा खड़ीबोली के काव्य में न केवल कमनीय माधुर्य की रससिद्ध धारा प्रवाहित हुई, बल्कि जीवन की सूक्ष्म एवं व्यापक आयामों के चित्रण की शक्ति भी संचित हुई जो आगे चलकर 'कामायनी' के माध्यम से एक शक्तिकाव्य के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

9.3.1 प्रसाद का जन्म तथा परिवार

जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी, 1890 को उत्तर प्रदेश के काशी के गोवर्धनसराय में एक संपन्न वैश्य परिवार में हुआ। इनके वंश का नाम 'सुँघनी साहु' है। इनके पितामह बाबू शिवरतन साहू सुरती के प्रसिद्ध व्यवसायी, बड़े दयालु और दानी-स्वभाव के व्यक्ति थे। पान के मसाले में प्रयुक्त होने वाली सुगंधियुक्त सुर्ती के निर्माण के कारण इन्हें 'सुँघनी साहु' के नाम से जाना जाने लगा। आगे चलकर इनका परिवार भी सुँघनी परिवार के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इनकी माता का नाम मुन्नी देवी था और पिता बाबू देवीप्रसाद थे, जो पैतृक गुणों से संपन्न व्यक्ति थे। वे कलाप्रेमी भी थे, अत: कलाकारों का बहुत आदर करते थे। काशी में इनका बड़ा सम्मान था और काशी की जनता काशीनरेश के बाद 'हर हर महादेव' से बाबू देवीप्रसाद का स्वागत करती थी। प्रसाद के बड़े भाई का नाम शंभू रत्न था। इनके अन्य भाई-बहनों का देहांत अत्यंत

अल्प आयु में हो चुकी थी, इसलिए प्रसाद को माँ-बाप का भरपूर प्रेम मिला। लेकिन जब वे 12 वर्ष के थे, तब उनके पिता का देहांत हो गया और उनके 15 वर्ष की आयु में माँ गुजर गईं। इसके दो वर्ष बाद उनके बड़े भाई शंभुरत्न का भी देहांत हो गया। उनके पिताजी और बड़े भाई की मृत्यु के बाद पारिवारिक संपत्ति के विभाजन को लेकर हालत बिगड़ने लगी और कोर्ट-कचहरी के चक्कर में लाखों रुपये खर्च हो गए। विरासत के रूप में उन्हें दुकान के नाम बहुत बड़ा कर्ज मिला। वे संयमी थे, इसलिए धीरे-धीरे इस दु:स्थिति से उभरते गए। ऐसे हालातों में घर में उनके सहारे के रूप में केवल उनकी विधवा भाभी रह गई थी।

बाल्यकाल

प्रसाद के पूरे परिवार को शिव उपासना में आस्था थी। माता-पिता का मानना था कि शिवजी के वर से ही उन्हें पुत्र-भाग्य मिला है। अतः उन्हें बचपन में झारखंडी कहकर पुकारा जाता था। आगे चलकर जयशंकर के रूप में नामकरण संस्कार हुआ, जो शिव जी का ही नाम था। प्रसाद उनके आरंभिक जीवन का एक उपनाम था जो बाद में मूल नाम से अधिक महत्वपूर्ण बन गया। प्रसाद ने अपनी माता के साथ कई तीर्थ स्थानों के दर्शन किए। उनकी माता अत्यधिक धार्मिक स्वभाव की थी। उनके धार्मिक वृत्तियों का प्रसाद के व्यक्तित्व पर गहरा असर पड़ा है। प्रसाद के मन में शैव भक्ति तथा शैव दर्शन के मूल बीज बोने का कार्य उनके परिवार से ही हुआ है।

प्रसाद को बचपन में माँ-बाप और बड़े भाई का भरपूर स्नेह मिला किंतु उनके जीवन में सुख के ये पल बहुत ही सीमित समय के लिए ही थे। माता-पिता और भैया के देहांत के बाद परिवार की जिम्मेदारी भी उन पर पड़ी, जिसे उन्होंने अपने जीवन पर्यंत निभाया। बचपन से ही वे किताबें पढ़ने के शौकीन थे। अतः जीवन के कष्टतम क्षण में भी उन्होंने पढ़ने की आदत न छोड़ी।

शिक्षा

प्रसाद का जन्म संपन्न परिवार में होने के बावजूद हालात ऐसे बदले कि उन्हें अपनी नियमित स्कूली पढ़ाई को बीच में ही रोकना पड़ा। दस से बारह वर्ष की अवस्था में इन्होंने काशी के क्वींस कॉलेज में अध्ययन अवश्य किया किंतु माँ-बाप और बड़े भाई के देहांत के बाद उन्हें स्कूल छोड़ना पड़ा। लेकिन साहित्य और कला के प्रति उन्हें अपार रुचि थी। अतः अपने नौ

वर्ष की उम्र में उन्होंने 'कलाधर' के नाम से ब्रजभाषा में एक सवैया लिखकर उनके प्रारंभिक शिक्षक 'रसमय सिद्ध' को दिखाया था। उनका वास्तविक नाम श्री मोहिनीलाल गुप्त था और उपनाम रसमय सिद्ध था। वे एक शिक्षक के रूप में बहुत प्रसिद्ध थे। चेतगंज के प्राचीन दलहट्टा मोहल्ले में उनकी एक छोटी सी पाठशाला थी। प्रसाद जी ने उनसे हिंदी और संस्कृत का ज्ञान प्राप्त की। प्रसाद कुशाग्र बुद्धि के थे। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने कवि प्रसाद में लिखा है कि 9 वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने पूरी लघु-कौमुदी तथा अमर कोश को कंठस्त कर लिया था।

कहा जाता है कि प्रसाद जी ने गोपाल बाबा, दीनबंधु ब्रह्मचारी और हरिहर महाराज से संस्कृत पढ़ी। इसके अतिरिक्त स्वाध्याय से भी वे वैदिक संस्कृत के निष्णात हुए। स्वाध्याय द्वारा आपने भारतीय तथा यूरोपीय दर्शन, साहित्य शास्त्र, सौंदर्यशास्त्र, ज्योतिष, प्राचीन भारतीय इतिहास, तंत्र साहित्य आदि में ज्ञान प्राप्त किया था। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के संस्कृत अध्यापक महामहोपाध्याय पं. देवीप्रसाद शुक्ल कवि-चक्रवर्ती को प्रसाद का काव्य-गुरु माना जाता है। यह स्पष्ट होता है कि प्रसाद को संस्कृत से अपार प्रेम था और संस्कृत साहित्य के वे मर्मज्ञ बने, जिसकी झलक उनकी रचनाओं में मिलती है। दैनिक जीवन के वार्तालाप में भी समय-समय पर संस्कृत, उर्दू, फ़ारसी, हिंदी आदि के समुचित उद्धरण देते थे। इसके अतिरिक्त बाग-बगीचे की देखरेख, भोजन बनाना एवं शतरंज के वे शौकीन थे। नियमित रूप से व्यायाम, सात्विक खान-पान एवं गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे। नियमित रूप से गीता का पाठ करते थे। उनका विचार था कि गीता के पाठ करने के साथ-साथ उसके आशय को जीवन में धारण करना आवश्यक है।

वैवाहिक जीवन

प्रसाद जी को तीन बार विवाह करना पड़ा। माता-पिता और बड़े भाई की अकाल मृत्यु के बाद भाभी के निर्देश पर वे विवाह के लिए तैयार हुए। 1908 में विंध्यावासिनी देवी के साथ उनका विवाह हुआ। उनकी पत्नी को क्षय रोग था, जिसके कारण 1916 में उनका निधन हो गया। सन 1917 में प्रसाद ने सरस्वती देवी से दूसरा विवाह किया। लेकिन वह भी क्षय रोग से पीड़ित हो गई और 1918 में प्रसूतावस्था में माँ और शिशु दोनों का देहांत हो गया। इससे भावुक और कोमल हृदय के प्रसाद को गहरा सद्मा लगा। फिर से घर बसाने की उनकी बिल्कुल इच्छा नहीं थी, लेकिन भाभी और अन्य लोगों के आग्रह से बाध्य होकर उन्होंने तीसरा विवाह

सन 1921 में कमला देवी से किया। सन 1922 में उन्हें पुत्र की प्राप्ति हुई, जिसका नाम रत्नशंकर रखा गया। कुछ साल बाद स्वयं प्रसाद क्षय रोग के शिकार हो गए। शुश्रूषा के बाद भी वे रोग से मुक्त नहीं हो सके और 15 नवंबर, 1937 को उनका देहांत हो गया। उस समय वे केवल 48 वर्ष के थे। अल्पायु में उनकी मृत्यु होने के बाद भी हिंदी साहित्य जगत में उनका अपरिमित योगदान है। एक से बढ़कर एक उत्कृष्ट रचनाएँ उन्होंने हिंदी साहित्य जगत को दी हैं।

बोध प्रश्न

- जयशंकर प्रसाद का जन्म स्थान कौन सा था?
- जयशंकर प्रसाद के वंश का क्या नाम था? यह नाम क्यों पड़ा?
- जयशंकर प्रसाद के काव्य-गुरु के रूप में किसे माना जाता है?

9.3.2 जयशंकर प्रसाद का व्यक्तित्व

जयशंकर प्रसाद असाधारण व्यक्तित्व के धनी थे। उदारता, व्यवहार कुशलता और विद्वत्ता उनमें कूट-कूटकर भरी हुई थी। प्राचीन के प्रति गहरी आस्था के बावजूद उनमें नवीन के प्रति जिज्ञासा भी थी। प्रातः जल्दी उठना, नियमित व्यायाम करना, भ्रमण करना, लेखन कार्य में लीन रहना, दुकान पर बैठना, साहित्यिक चर्चाओं में भाग लेना, कारोबार संभालना इनकी दिनचर्या थी। बावजूद इसके, उन्हें अपनी युवावस्था में न जाने कितने सारे मुश्किलों का सामना करना पड़ा है। वे बहुत ही संयमशील तथा कर्मठ व्यक्ति थे, जिसके कारण वे बुरे हालातों से धीरे-धीरे उभरने के प्रयास करने लगे। उनके जीवन में उन्होंने जो दर्द झेला और जो दुख भोगा, वह उनकी रचनाओं में पूर्ण रूप से झलकता है। उनके जीवन और काव्य में निहित समरस चेतना का मूल कारण भी यही है। प्रसाद जी का सोच सकारात्मक था।

कलात्मकता

अपने पिता का उनपर विशेष प्रभाव था, जिसके कारण वे भी कला के उपासक बने। दैनिक जीवन में उन्हें जब भी मौका मिलता, वे अपनी कला का प्रदर्शन अवश्य करते थे। अपने कमरे को, अपनी आस-पास की चीजों को वे बहुत ही कलात्मकता के साथ सहेजकर रखते थे। पाक-विद्या में भी वे कुशल थे। श्री कृष्णदेव गौड़ ने लिखा है- “उनके द्वारा बनाए गए बादाम के हलुए में ‘कामायनी’ से कम रस नहीं मिलता था।” प्रसाद संगीत प्रेमी थे। वे संगीतज्ञ नहीं थे, लेकिन संगीत का आस्वादन करना जानते थे। शास्त्रीय संगीत में उन्हें रुचि थी। संगीत सुनने की

इच्छा से वे कभी-कभी सिद्देश्वर बाई वेश्या के यहाँ जाया करते थे। प्रसाद के अनुसार 'मधुरता, भाव और एक तरह का दर्द यही संगीत के महत्वपूर्ण उपादान है।' ब्रह्म मुहूरत में उठकर संस्कृत के श्लोकों का वे सस्वर पठन किया करते थे। उनके नाटकों में भी संगीत के तत्व देखने को मिलते हैं। संगीत के साथ-साथ नौका विहार करना, कुश्ती लड़ना, शतरंज खेलना आदि में भी उनकी विशेष रुचि थी। कभी-कभी सिनेमा भी देखने जाते थे जो टालस्टाय, ड्यूमा आदि साहित्यकारों की रचनाओं पर आधारित हों। इससे साहित्य के प्रति उनकी रुचि एवं शालीनता का दर्शन होता है।

शांत और गंभीर प्रकृति के व्यक्ति

प्रसाद जी शांत और गंभीर व्यक्ति थे। व्यास जी के शब्दों में वे अत्यंत क्रोधित अवस्था में भी कभी अपने मुख से अपशब्दों का प्रयोग नहीं करते थे। उनके व्यक्तित्व की यह एक महत्वपूर्ण विशेषता थी। वे किसी को दुखी नहीं देखना चाहते थे। वे मितभाषी थे, लेकिन दोस्तों के बीच ठहाका मार कर हँसा करते थे।

आत्मनिष्ठा एवं दृढ़ता

प्रसाद बहुत ही आत्मविश्वासी एवं दृढ़ व्यक्ति थे। दुष्कर परिस्थितियों में भी प्रसाद विचलित नहीं हुए, बल्कि संयमित होकर सारी उलझनों से मुक्त होने की कोशिश कर रहे थे। इससे उनकी दृढ़ता का पता चलता है। वे आत्मविश्वास के साथ जीवन यापन कर रहे थे। आलोचकों द्वारा की गई कटु आलोचनाओं के उत्तर या स्पष्टीकरण देने का प्रयास नहीं करते थे। एक बार उनके मित्र व्यास जी ने उनकी पांडुलिपियों को फाड़ डाला, तब उनका यही कथन था, कि, 'मेरी कृतियाँ टेक लगाने से नहीं टिकेंगी, वे स्वयं अपने कल पर टिकेंगी।" उनका यह आत्मविश्वास समय की कसौटी पर खरा उतरा। उनकी कृतियों की ख्याति इस बात की साक्षी है, जिसमें उदात्त जीवन दृष्टि, मानवीय जीवन की गहरी, अनूठी अभिव्यंजना निहित है।

दृढ़ता के प्रसंग में उनका बेटा रत्नशंकर की शिक्षा से संबंधित प्रकरण बड़ा प्रसिद्ध है। बनारस में उन्हें केवल एक ही स्कूल पसंद था। अपने पुत्र को उन्होंने उसी स्कूल में पढ़ने के लिए भेजा। लेकिन कुछ समय बाद उन्हें पता चला कि उस स्कूल में भी छात्रों द्वारा मनुष्यों की पूजा कराई जाती है तो उन्होंने रत्नशंकर का स्कूल जाना बंद करा दिया। इस मूल्य पर आधुनिक शिक्षा का ग्रहण उन्हें पसंद नहीं आया, फिर उन्होंने रत्नशंकर को किसी भी स्कूल में पढ़ने नहीं

भेजा, घर पर ही अध्यापन की व्यवस्था की। उनकी यह मानसिकता और चारित्रिक दृढ़ता उनके विभिन्न पात्रों के चरित्र-निर्माण की आधार-शिला रही है।

निस्वार्थ साहित्य-सेवा

प्रसाद बचपन से ही किताबें पढ़ने के शौकीन थे। जीवन के संकट काल में भी वे निरंतर साहित्यिक अध्ययन में लगे रहे। बचपन में ही ब्रजभाषा में उन्होंने सवैये लिखे थे। जीवन पर्यंत वे निस्वार्थ रूप से साहित्यिक सेवा करते रहे। पत्र-पत्रिका में रचना प्रकाशित होने पर जो पारिश्रमिक या पुरस्कार दिए जाते, उन्होंने उसे कभी नहीं स्वीकार किए। अपनी किसी पुस्तक को पुरस्कार हेतु न भेजा और न प्रकाशक को भी भेजने की अनुमति दी। यहाँ तक कि परिवार में रुपयों की तंगी होने के बावजूद वे सहयोग राशि लेने से इनकार कर देते। वे ऐसे कोई भी कार्यक्रम में जाना पसंद नहीं करते थे, जहाँ उन्हें सहजता के साथ श्रद्धा, आदर, प्रशंसा, लोकप्रियता आदि प्राप्त हो सकते थे। व्यापार को संभालते हुए बीच-बीच में वे कलम भी चला लेते और 'कामयानी' की रचना होती रहती। साहित्य के प्रति जितना उन्हें लगाव था, उतना ही लगाव उन्हें अपने व्यापार के प्रति भी था।

आकर्षक तथा रहस्यमय व्यक्तित्व

प्रसाद सचमुच कोई तपस्वी की भाँति लगते थे। महादेवी वर्मा ने जब उन्हें पहली बार देखा, तो उन्हें बौद्ध भिक्षु कहा था। हृष्ट-पुष्ट शरीर, नियमित व्यायाम से प्राप्त दृढ़ शरीर, सुगठित सुडौल गोरा शरीर, नाटा कद, घुँघराले बाल, मस्तानी चाल-ढाल हर व्यक्ति को अपनी ओर जरूर आकर्षित करते। प्रसाद के व्यक्तित्व के संबंध में डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना का यह कथन द्रष्टव्य है- "प्रसाद छायावाद की काव्यधारा के प्रवर्तक ही नहीं हैं, अपितु उसकी प्रौढ़ता, शालीनता, गुरुता, गंभीरता के भी पोषक कवि हैं। प्रसाद की कविताओं में प्रकृति के सचेतन रूप के साथ-साथ मानव के लौकिक एवं पारलौकिक जीवन की जैसी रमणिक झाँकी अंकित है, वैसे किसी अन्य कवि की कविता में दृष्टिगोचर नहीं होती।"

बोध प्रश्न

- प्रसाद जी कैसे व्यक्ति थे?

9.3.3 जयशंकर प्रसाद का कृतित्व

जयशंकर प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार थे। काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध आदि विधाओं में उन्होंने लेखन किया है। प्रारंभिक दिनों में वे कलाधार के नाम से ब्रजभाषा में लिखते थे, जो सन 1909-1910 के बीच प्रकाश में आने लगे। चित्राधार, प्रेम-पथिक आदि उनकी ब्रजभाषा में रचित रचनाएँ हैं। लेकिन बाद के दिनों में वे खड़ीबोली हिंदी में लिखने लगे। खड़ीबोली हिंदी के प्रख्यात साहित्यकारों में उन्हें शीर्षस्थ स्थान प्राप्त है।

सन 1906 से ही प्रसाद नियमित रूप से लिख रहे थे, किंतु प्रकाशन में समस्या थी। उन दिनों पत्र-पत्रिकाएँ भी सीमित थीं और उनमें स्थान पाना मुश्किल था। अतः प्रसाद जी ने स्वयं 'इंदु' नाम से एक मासिक पत्रिका का प्रकाशन आरंभ किया। उन्होंने अपने भांजे अंबिकादास गुप्त को इसका संपादक बनाया। इसका प्रवेशांक सन 1909 को निकाला। प्रसाद तब 20 वर्ष के थे। इसमें साहित्य के बारे में उन्होंने इस प्रकार लिखा था- 'साहित्य का कोई लक्ष्य विशेष नहीं होता और उसके लिए विधि का निबंधन नहीं है, क्योंकि साहित्य स्वतंत्र प्रकृति, सर्वतोगामी प्रतिभा के प्रकाशन का परिणाम है। वह किसी की परतंत्रता को सहन नहीं कर सकता, संसार में जो कुछ सत्य और सुंदर है, वही साहित्य का विषय है। साहित्य केवल सत्य और सौंदर्य की चर्चा करके सत्य को प्रतिष्ठित और सौंदर्य को पूर्ण रूप से विकसित करता है, आनंदमय हृदय के अनुशीलन में स्वतंत्र आलोचना में उसकी सत्ता देखी जा सकती है।'

उन दिनों 'इंदु' पत्रिका को भी 'सरस्वती' पत्रिका के समान ही ख्याति प्राप्त हो रही थी। यह पत्रिका 1906 में शुरू हुई थी। बीच-बीच में कई बार रुक-रुककर 1927 तक चलती रही। 'इंदु' पत्रिका के बंद होने के बाद प्रसाद जी की प्रेरणा से 'हंस' और 'जागरण' पत्रिकाओं का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इन सभी पत्रिकाओं की ख्याति के साथ-साथ प्रसाद के साहित्यिक व्यक्तित्व भी विकसित हो रहा था। प्रसाद ने अपने-आप को सिर्फ काव्य तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध आदि विधाओं में भी उन्होंने लेखन कार्य किया।

बोध प्रश्न

- साहित्य के संबंध में प्रसाद जी का क्या मत है?

प्रसाद की प्रमुख रचनाओं का संक्षिप्त परिचय

प्रसाद का काव्य-साहित्य

चित्राधार (1909) : यह प्रसाद की ब्रजभाषा में रचित काव्य-संकलन है। इसकी अधिकांश रचनाएँ गीति तत्व पर आधारित हैं। इस रचना में कवि ने प्रकृति की रमणीयता का मनोरम वर्णन किया है। इसमें प्राचीन परंपरा का पालन किया गया है। आगे चलकर इन्हीं के अंदर विद्यमान सूक्ष्म बीज 'झरना' एवं अन्य काव्य-संग्रहों में अंकुरित होकर 'कामायनी' जैसे गौरवशाली महाकाव्य का रूप धारण करता है। कवि की जिज्ञासा प्रवृत्ति भी इस कृति में देखी जा सकती है।

झरना (1918) : प्रसाद की सुप्रसिद्ध संग्रह 'झरना' का प्रकाशन सन 1918 में हुआ। इसमें गीतिपरक रचनाएँ संकलित हैं। पहले इसमें केवल 24 कविताएँ संकलित थीं, इसका दूसरा संस्करण सन 1927 में प्रकाशित हुआ, जिसमें आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार 33 रचनाएँ जोड़ी गईं थीं। 'झरना' प्रेम के विविध अनुभवों का जीवंत वर्णन है। साथ ही इसमें निहित लोकमंगल की भावना इस संकलन को श्रेष्ठ बनाता है।

आँसू (1925) : 'आँसू' जयशंकर प्रसाद की मुक्तक शैली में रचित विरह काव्य है। इसका रचनाकाल लगभग 1923-24 ई. की है तथा प्रकाशन 1925 ई. में साहित्य-सदन, चिरगाँव, झांसी से हुआ था। इसके प्रथम संस्करण में केवल 252 पंक्तियाँ थीं, किंतु जब इसका द्वितीय संशोधित संस्करण श्रावणी पूर्णिमा सन 1933 में भारती भंडार, प्रयाग से प्रकाशित हुआ, जिसमें पूर्व रचित छंदों के क्रम कुछ बदल दिये गये और कवि ने कुछ अन्य छंद रचकर इसमें जोड दिये, इससे आँसू में कुल 680 पंक्तियाँ हो गईं थीं। इस कविता का मूल भाव करुणा और प्रेम है। करुणा और प्रेम दो ऐसे भाव हैं जिनसे मानवता पनपती है। करुणा और प्रेम सहृदयता के प्रतीक हैं। कवि यह अच्छे से जानते हैं कि इस पूरे संसार को करुणा और प्रेम की आवश्यकता है, जिनसे मानव संवेदनशील होता है और प्रत्येक जीव से प्रेम भाव रख सकता है। अतः प्रत्येक जीव से संवेदनशील भावना की प्रतीति प्रस्तुत कविता का मूल उत्स है। यही भाव मानव को मानव बनाए रखता है। 'आँसू' 'कामायनी' की पूर्व पीठिका है। 'आँसू' में करुणा का संचार है, तो 'कामायनी' में मानवता के विकास की कहानी। 'आँसू' के इन छंदों में प्रसाद की व्यक्तिगत जीवनानुभूति का प्रकाशन हुआ है।

लहर (1935) : 'लहर' महात्मा बुद्ध के जीवन पर आधारित दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक तथा सौंदर्य वर्णन से मिश्रित रचना है। शेरसिंह का शस्त्र समर्पण, पेशोला की प्रतिध्वनि, प्रलय की छाया में कवि ने मुक्त छंद में ऐतिहासिक प्रसंगों की शक्तिशाली और मार्मिक चित्रण किया है। कल्पना की मनोरमता, भावुकता, भाषा शैली में प्रौढ़ता 'लहर' की विशेषता है। 'लहर' के संबंध में सुमित्रानंदन पंत ने 'छायावाद : पुनर्मूल्यांकन' नामक पुस्तक में लिखा है कि "लहर के प्रगीतों में गांभीर्य, मार्मिक अनुभूति तथा बुद्ध की करुणा का भी प्रभाव है। प्रसाद जी का भावजगत ' झरना' की प्रेम-व्याकुलता तथा चंचल भावुकता से बाहर निकलकर इसमें उनकी व्यापक जीवनानुभूति को अधिक सबल संगठित अभिव्यक्ति दे सका है।" लहर के अंत में ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित चार कविताएँ संकलित हैं जो कि प्रसाद के जीवन-दर्शन, देशप्रेम, सामयिक स्थिति, अंतर्द्वंद्व तथा नियतिबोध पर आधारित हैं।

कामायनी (1935) : 'कामायनी' प्रसाद की अंतिम कृति है। इसके कथानक का आधार वह प्राचीन आख्यान है जिसके अनुसार मनु के अतिरिक्त संपूर्ण देव-जाति प्रलय का शिकार हो जाती है और मनु तथा श्रद्धा के संयोग से मानव सभ्यता का प्रवर्तन होता है। इसका कथानक संक्षिप्त होने पर भी कवि ने जीवन के अनेक पक्षों को समन्वित करते हुए मानव-जीवन के लिए एक व्यापक आदर्श व्यवस्था की स्थापना करने का प्रयास किया है। 'कामायनी' में बुद्धिवाद के विरोध में हृदय-तत्व की प्रतिष्ठा करते हुए कवि ने शैव दर्शन के आनंदवाद को जीवन के पूर्ण उत्कर्ष का साधन माना है।

प्रसाद का नाट्य- साहित्य

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में कथा-साहित्य के अंतर्गत प्रेमचंद को मील का पत्थर माना जता है, तो नाट्य- साहित्य में जयशंकर प्रसाद को। नाटक के क्षेत्र में प्रसाद ने युग-परिवर्तनकारी कार्य किया है। यही कारण है कि आधुनिक हिंदी नाट्य साहित्य का काल विभाजन 'प्रसाद-पूर्व', 'प्रसाद' और 'प्रसादोत्तर युग' के रूप में किया जाता है। 1911 से 1933 तक प्रसाद ने लगभग 13 नाटकों की रचना की हैं, जिनमें से अधिकतर नाटक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित हैं - सज्जन (1910), कल्याणी-परिणय (1912), करुणालय (1913), प्रायश्चित (1914), राजश्री (1915), विशाख (1921), अजातशत्रु (1922), जनमेजय का

नागयज्ञ (1926), स्कंदगुप्त (1928), एक घूँट (1929), चंद्रगुप्त (1929) और ध्रुवस्वामिनी (1933)।

प्रसाद ने भारत के वैभवपूर्ण इतिहास को आधार बनाकर ही लगभग सभी नाटकों की रचनाएँ की हैं। भारतीय संस्कृति, भारत का स्वर्णिम अतीत, पुराण-कथा, अर्द्धमिथकीय वस्तु के भीतर से प्रसाद ने देशप्रेम की भावना को जन-जन में जाग्रत करते हुए राष्ट्रीय सुरक्षा को प्राथमिकता देते हुए दिखाई देते हैं। उनके नाटकों के अधिकांश चरित्र ऐतिहासिक होने पर भी तत्कालीन राष्ट्रीय संकट को पहचानने और सुलझाने का मार्ग प्रशस्त करते हैं। बौद्ध दर्शन का प्रभाव भी उनके नाटकों में दिखाई देता है। उनके प्रसिद्ध नाटक 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी' आदि सत्ता-संघर्ष एवं राष्ट्रीय सुरक्षा की भावना से ओत-प्रोत नाटक हैं। इसके साथ ही पात्रों के चरित्र में उन्होंने मानसिक अंतर्द्वंद्व का चित्रण करते हुए उनमें परिस्थिति के अनुसार परिवर्तन व विकास दिखाया है। मानव-चरित्र के सत-असत दोनों पक्षों का उद्घाटन उन्होंने अपने नाटकों में किया है। नारी की महानता, सूक्ष्मता और गंभीरता को पूरी सजीवता के साथ प्रसाद ने प्रस्तुत किया है।

प्रसाद के उपन्यास / कहानियाँ

प्रसाद ने तीन उपन्यास लिखे हैं - 'कंकाल', 'तितली' और 'इरावती'। 'कंकाल' में नागरिक सभ्यता के यथार्थ को उद्घाटित किया गया है। इस दृष्टि से यह एक यथार्थवादी उपन्यास है। 'तितली' ग्रामीण जीवन से संबंधित उपन्यास है जो आदर्शोन्मुख यथार्थ का प्रतीक है। 'इरावती' ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया अधूरा उपन्यास है जो रोमांस पर आधारित है।

सन 1912 में 'इंदु' में प्रसाद की पहली कहानी 'ग्राम' प्रकाशित हुई। इसमें ग्रामीण यथार्थ का वह पक्ष अभिव्यक्त हुआ है जिसकी उस युग में कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। महाजनी सभ्यता के अमानवीय पक्ष का वास्तविक उद्घाटन इस कहानी में किया गया है। 'ममता' कहानी में पतनोन्मुख सामंत वंश का चित्रण है। प्रसाद के प्रमुख कहानी संग्रह हैं- छाया (1912), प्रतिध्वनि (1926), आकाशदीप (1929), आँधी (1933), इंद्रजाल (1936)।

बोध प्रश्न

- मुक्तक शैली में रचित विरह काव्य का नाम बताइए।

- ‘कामायनी’ की पूर्वपीठिका के रूप में किस रचना को माना जाता है?
- ‘कामायनी’ के माध्यम से प्रसाद जी क्या निरूपित करना चाहते थे?
- प्रसाद ने कितने उपन्यास लिखे? उनके नाम बताइए।

9.3.4 जयशंकर प्रसाद का जीवन दर्शन

प्रिय छात्रो! आप जान ही चुके हैं कि प्रसाद एक दार्शनिक रचनाकार हैं, शैवभक्त हैं। दर्शन एवं आध्यात्मिक चेतना के बीज उनके अंदर बचपन में ही बोए गए थे, जो आगे चलकर हिंदी साहित्य आकाश में एक वटवृक्ष का रूप धारण करता है। आधुनिक हिंदी साहित्य में छायावाद को प्रतिष्ठित करने में प्रसाद की यही चेतना कार्य करती है। प्रेम, प्रकृति और मानव सौंदर्य की स्वानुभूतिमयी रहस्यपरक सूक्ष्म अभिव्यंजना जिस काव्य में होती है, उसे यदि छायावाद कहा जाए तो प्रसाद की प्रत्येक रचना इन्हीं तत्वों से ओत-प्रोत है। यही कारण है कि प्रसाद को छायावाद का प्रमुख प्रवर्तक कहा जाता है। वे एक ऐसे कवि हैं जिनकी साहित्यिक यात्रा छायावाद से शुरु होकर छायावाद में समाप्त हो जाती है, लेकिन उसकी जड़ें इतनी मजबूति से फ़ैली हुई हैं कि आज भी वे प्रासंगिक हैं।

प्रसाद के दार्शनिक विचारों पर सर्वाधिक प्रभाव शैव दर्शन के अंतर्गत आनेवाले प्रत्यभिज्ञा दर्शन, बौद्ध दर्शन का पड़ा है। उनके ‘ कामायनी’ महाकाव्य में प्रयुक्त अनेक पारिभाषिक शब्द प्रत्यभिज्ञा दर्शन के शब्द हैं। दर्शन के नीरस एवं शुष्क विचारों को उन्होंने भाव एवं कल्पना के योग से सरस एवं सरल बना दिया है।

नियतिवादी विचारधारा का विकास शैवागमों के आधार पर हुआ है, जिसमें नियति को संपूर्ण संसार के कार्य व्यापार को संचालन करने वाली शक्ति बताया गया है। प्रसाद ने नियति को उसी रूप में स्वीकार किया है। ‘कामायनी’ का मनु, ‘अजातशत्रु’ का जीवक, ‘स्कंदगुप्त’ की देवसेना, ‘आकाशदीप’ की चंपा - सभी पात्रों से जुड़े संवादों में नियतिवाद के तत्व मिलते हैं। नियतिवाद का अर्थ भाग्यवाद नहीं है। यह मानव जीवन को आगे बढ़ाते हुए उसके कर्मचक्र का प्रवर्तन करता है। ‘कामायनी’ के रहस्य सर्ग में श्रद्धा कर्मलोक का परिचय देते हुए नियतिवाद का संचालन करती है -

नियति चलाती कर्म चक्र यह तृष्णा जनित ममत्व वासना,

पाणि-पदमय पंच-भूत की यहाँ हो रही है उपासना।

बौद्ध दर्शन में जीवात्मा का अंतिम लक्ष्य महाकरुणा को प्राप्त करना है। बौद्ध दर्शन के अनुसार बुद्ध वही बन सकता है जिसके अंदर करुणा का भाव संचालित हो। यह करुणा केवल करुणा भाव न होकर महाकरुणा भाव है। प्रसाद की रचनाओं में करुणा भाव सर्वत्र व्याप्त है। उन्होंने ब्रह्म के अस्तित्व पर सदा विश्वास किया है। उनके अनुसार ब्रह्म का वास स्थान हृदय है। वे ईश्वर को सर्वव्यापि मानते हैं। इसके अतिरिक्त मानवातावाद, रहस्यवाद, क्षणिकवाद आदि प्रसाद के दर्शन की विशेषताएँ हैं।

बोध प्रश्न

- प्रत्यभिज्ञा दर्शन किस दर्शन के अंतर्गत आता है?
- बौद्ध दर्शन के अनुसार बुद्ध बनने के लिए क्या चाहिए?

9.3.5 जयशंकर प्रसाद की सौंदर्य चेतना

प्रसाद की सभी रचनाओं में सौंदर्य के विविध रूपों में देखा जा सकता है। जैसे- नारी सौंदर्य, प्रकृति सौंदर्य, भाव सौंदर्य आदि। सौंदर्य को प्रसाद परमात्मा का वरदान मानते हैं।

उज्ज्वल वरदान चेतना का

सौंदर्य जिसे सब कहते हैं ।

जिसमें अनंत अभिलाषा के,

सपने सब जगते रहते हैं ॥

‘कामायनी’ में प्रसाद ने श्रद्धा और इडा के सौंदर्य का मार्मिक चित्रण किया है। श्रद्धा के सौंदर्य का मांसल एवं स्थूल चित्रण न करके उन्होंने सूक्ष्म एवं वायवी चित्रण किया है। उसके शरीर का निर्माण फूलों की सुगंध, मकरंद, एवं पराग कणों से हुआ है -

कुसुम कानन अंचल में मंद,

पवन प्रेरित सौरभ साकार।

रचित परमाणु पराग शरीर,

खड़ा हो ले मधु का आधार॥

प्रसाद ने प्रेम की भाँति सौंदर्य को विस्तृत दायरे में देखने का प्रयास किया है। सौंदर्य में निहित मांसल अभिव्यक्ति को आत्मा तक पहुँचाने का काम किया है। बाह्य सौंदर्य एवं आंतरिक सौंदर्य दोनों की अभिव्यक्ति प्रसाद की रचनाओं में हुई है। प्रसाद की रचनाओं में सौंदर्य के तीन स्वरूप दृष्टिगत होते हैं- मानवीय सौंदर्य, प्राकृतिक सौंदर्य और भावगत सौंदर्य। मानवीय सौंदर्य के अंतर्गत कवि ने स्त्री-पुरुष के बाह्य सौंदर्य का वर्णन किया है। पुरुष वर्णन की अपेक्षा स्त्री रूप वर्णन में वे अधिक सफल हुए हैं। प्रकृति-चित्रण छायावादी काव्य की निजी विशेषता है। प्रकृति के प्रति प्रसाद के मन में सदा यह जिज्ञासा रही है कि इस प्रकृति को इतना सौंदर्य मिला कहाँ से। प्रकृति की परिवर्तनशीलता को देखकर कवि के मन में अपने आप ही जिज्ञासा एवं कौतूहल जाग उठता है। उन्होंने प्रकृति पर चेतनता को आरोपित करते हुए उसका मानवीकरण किया है। प्रकृति को अपना उपादान बनाकर मानव और प्रकृति के बीच सामंजस्य स्थापित करना उनकी विशेषता है। प्रसाद ने प्रकृति के सौंदर्य को रहस्यात्मक रूप देते हुए उसे चरम पर पहुँचाया है।

प्रसाद की रचनाओं में भावगत सौंदर्य का अमूर्त रूप प्रस्तुत हुआ है। 'कामायनी' की चिंता, वासना, लज्जा आदि सर्गों में अमूर्त भाव प्रधान रूप से अभिव्यक्त हुआ है। 'आँसू' में उनका भावात्मक सौंदर्य सौम्य एवं निश्चल रूप में अभिव्यक्त हुआ है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि प्रसाद के सौंदर्य चित्रण में कमनीयता, मादकता, मधुरता, पावनता एवं उदात्तता है।

बोध प्रश्न

- प्रसाद की रचनाओं में कितने प्रकार के स्वरूप दृष्टिगोचर होते हैं।
- सौंदर्य को प्रसाद किसका वरदान मानते हैं?

9.3.6 प्रसाद की भाषा एवं शैली

प्रसाद की भाषा में तत्सम, तद्भव, देशज, सभी प्रकार के शब्दों को देखा जा सकता है। कहीं-कहीं समस्त पदों जैसे भूत-हित-रत, अरुण-कपोलों आदि का प्रयोग मिलता है। लोकोक्ति और मुहावरे एवं विदेशी शब्दों का बहुत कम प्रयोग मिलता है। कोमल शब्द, संगीतात्मकता, प्रवाहमयता आदि सभी गुण प्रसाद की रचनाओं की विशेषताएँ हैं। प्रसाद के पद-चयन के बारे में डॉ. नामवर सिंह का कथन उल्लेखनीय है- "प्रसाद के पद-चयन का एक ओर बहुत दूर तक निराला, पंत, महादेवी के पद-चयन से साम्य है, तो दूसरी ओर प्रत्यक्ष रूप से रवींद्रनाथ के पद-

चयन की भी इसमें झलक है और परोक्षत: गुजराती और मराठी स्वच्छंदतावादी कवियों की पद-चयनभी।" उनकी भाषा में एक प्रांजलता है, स्वच्छता है और गति है जो उनकी भावाभिव्यक्ति के अनुसार सरल और कठिन होती चली जाती है।

छंद योजना : प्रसाद की रचनाओं में पुराने और नए छंदों का प्रयोग मिलता है। पहले जब प्रसाद ने ब्रजभाषा में रचनाएँ की तो कवित्त, सवैया जैसे प्राचीन छंदों का प्रयोग किया है। उन्होंने जो छोटी अवस्था में सबसे पहले जो छंद रचा वह सवैया था। 'कामायनी' में उन्होंने नए छंदों का प्रयोग किया है। रोला, रूपमाला, लावनी आदि कई प्रकार के छंदों का प्रसाद ने प्रयोग किया है। मिश्रित छंदों का प्रयोग भी प्रसाद ने किया है। विषय के अनुसार छंदों का प्रयोग किया गया है। गीतिकाव्य की शैली में गेय पदों की रचना भी प्रसाद की विशेषता है।

अलंकार योजना : प्रसाद अनायास ही अलंकार का प्रयोग करते थे। अलंकार के प्रयोग से काव्य की सुंदरता बढ़ जाती है। अनुप्रास, श्लेष, पुनरुक्तिप्रकाश, मानवीकरण, उत्प्रेक्षा, संदेह, प्रतीप आदि का प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखें-

तरुण तपस्वी- सा वह बैठा (अनुप्रास और उपमा अलंकार)

उसी तपस्वी से लंबे थे, देवदारु दो-चारु खडे (प्रतीप अलंकार)

शरद इंदिरा के मंदिर की/ मानो कोई गैल रही (उत्प्रेक्षा अलंकार)

विश्व कमल की मृदुल मधुकरी/रजनी तू किस कोने से-/ आती चूम-चूम चली जाती/पडी हुई किस रोने- से : यहाँ पर रजनी का मानवीकरण अलंकार है। विश्व कमल को मधुकरी कहने में रूपक अलंकार है। चू-चूम में पुनरुक्तिप्रकाश है। इसी प्रकार और अलंकारों का प्रयोग भी प्रसाद के काव्य में सुंदरता की वृद्धि करता है। हिंदी के आलोचकों ने प्रसाद के स्वभावगत अलंकार के प्रयोग की प्रशंसा की है। कहीं-कहीं उपमान का प्रयोग बड़ी कलात्मकता से किया गया है। जैसे - बिखरी अलकें, ज्यों तर्कजाल' इस प्रयोग में इडा को बुद्धि का प्रतीक के रूप में लिया है। बुद्धि में तर्क अधिक होता है। इडा के बालों को तर्कजाल कहने में कलात्मकता है।

प्रतीक-योजना : प्रसाद के काव्य में प्रतीक योजना की प्रधानता है। 'कामायनी' के पात्रों को कवि ने प्रतीक रूप में चित्रित किया है। श्रद्धा हृदय की प्रतीक है। इडा बुद्धि की प्रतीक है और

मनु मन की प्रतीक है। इसी प्रकार आँसू के आरंभिक पंक्ति - इस करुणा कलित हृदय में, क्यों विकल रागिनी बजती?

यहाँ पर रागिनी दुख का प्रतीक है। इसी तरह लहर काव्य की प्रथम पंक्ति में- "उठ उठ री लघु लोल लहर", यहाँ पर लहर स्मृति के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त हुई है। प्रतीक योजना से काव्य में एक अनूठापन आ गया है। यह प्रसाद तथा अन्य छायावादी कवियों की विशेषता है।

बिंब योजना : चित्रात्मकता या बिंबात्मकता छायावाद की विशेषता है। प्रसाद के वर्णन को पढ़ने से वह बिंब या चित्र आँखों के सामने उपस्थित हो जाता है। जैसे-

घिर रहे थे घुँघराले बाल

अंस अवलंबित मुख के पास

नील घन-शावक से सुकुमार

सुधा भरने को विधु के पास।

यहाँ पर श्रद्धा के रूप का वर्णन है। उसके घुँघुराले बाल थे। वे कंधे तक लटक रहे थे। इस वर्णन से घुँघुराले बलों वाले श्रद्धा के मुख का चित्र हमारी आँखों के सामने आ जाता है। लहर में प्रलय की छाया नामक कविता से रानी कमला का एक बिंब प्रस्तुत है-

तातारी दासियों ने मुझको झुकाना चाहा

मेरे ही घुटनों पर

किंतु अविचल रही।

मणि मेखला में रही कठिन कृपाणी जो

चमकी वह सहसा

मेरे ही वक्ष का रुधिर पान-करने को।

इनके अतिरिक्त ध्वन्यात्मक तथा लाक्षणिक प्रयोग भी प्रसाद की भाषा-शैली की विशेषताएँ हैं।

खग कुल कुल कुल-सा बोल रहा,

किसलय का अंचल डोल रहा।

प्रसाद की गद्य रचनाओं में भी काव्यमय भाषा के तत्व दिखाई देते हैं। काव्यमय भाषा के कारण कई स्थानों पर चित्रात्मक रूप की अभिव्यक्ति होती है। एक उदाहरण प्रस्तुत है- निशीथ के नक्षत्र गंगा के मुकुल में अपना प्रतिबिंब देख रहे थे। शांत पवन का झोंका सबको आलिंगन करता हुआ विरक्त के समान भाग रहा था, तथा जूही की प्यालियों में मकरंद-मदिरा पीकर मधुप की टोलियाँ लड़खडा रही थी और दक्षिण पवन मौलसिरि के फ़ूलों की कौडियाँ फेंक रहा था। कमर से झुकी हुई अलबेली बेलियाँ नाच रही थीं। मन की हार जीत हो रही थी। इसी प्रकार कंकाल का प्ररंभिक प्रसंग द्रष्टव्य है- 'माघ की अमावास्या की गोधूली में प्रयाग में बाँध पर प्रभात का सा जनरव और कोलाहल तथा धर्म लूटने की धूम काम हो गई है, परंतु बहुत-से घायल और कुचले हुए अर्धमृतकों की आर्तध्वनि उस पावन प्रदेश को आशीर्वाद दे रही है।'

पात्रों के मन के अंतर्द्वंद्व को प्रस्तुत करते हुए कवि काव्यभाषा के निकटतम प्रयोग कर जाते हैं। नायिका का वर्णन करते हुए लिखते हैं- 'उसका भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों अंधकार में कभी छिपते और कभी तारों के रूप में चमक उठते।' आगे देखिए- 'गाला चुपचाप सुनहली किरणों को खारी के जल में बुझती हुई देख रही थी....उस निर्जन स्थान में पवन रुक-रुक कर बह रहा था। खारी बहुत धीरे-धीरे अपने करुण प्रवाह में बहती जाती थी, पर जैसे उसका जल स्थिर हो-कहीं से आता-जाता न हो।'

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि कवि प्रसाद की आत्मा मूलत: काव्यात्मक है। प्रेम के उदात्त स्वरूप को सामने लाकर सौंदर्य के स्थूल से सूक्ष्म को सराहा है। नारी की कोमलता के स्थान पर उसे गौरवमयी एवं श्रद्धा स्वरूप भावाभिव्यक्ति की है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि कवि प्रसाद न केवल छायावाद के बल्कि पूरे हिंदी साहित्य जगत का ध्रुव तारा के समान हैं।

बोध प्रश्न

- प्रसाद ने गद्य लेखन में किस प्रकार की भाषा का प्रयोग किया है?
- 'कामायनी' में कवि ने इडा को किसका प्रतीक के रूप में चित्रित किया है?

9.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! आप जान ही चुके हैं कि जयशंकर प्रसाद का यौवन काल संघर्षों में बीतने पर भी वे कभी नहीं डगमगाए। उन्होंने परिस्थितियों का डटकर सामना किया। साहित्य के लिए उनकी जो देन है, वह अपरिमित है। इतने कम समय में काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध सभी विधाओं में प्रसाद ने जो लेखन कार्य किया है वह अतुलनीय है। उनकी प्रत्येक रचना अपने आप में महत्वपूर्ण है।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

1. जयशंकर प्रसाद आधुनिक हिंदी काव्य में छायावाद के प्रमुख स्तंभ माने जाते हैं।
2. उनके काव्य 'झरना' को छायावाद के प्रवर्तन का श्रेय प्राप्त है।
3. उन्होंने काव्य के अतिरिक्त नाटक, एकांकी, कहानी, उपन्यास और निबंध आदि अनेक विधाओं में बहुमुखी लेखन किया।
4. उन्हें नाटक के क्षेत्र में भी युग प्रवर्तक माना जाता है।
5. 'कामायनी' जयशंकर प्रसाद की काव्य प्रतिभा का चरम शिखर है, जिसे आधुनिक युग का प्रतिनिधि कालजयी महाकाव्य कहा जा सकता है।

9.6 शब्द संपदा

1. कमनीय = सुंदर
2. क्लासिक = उच्च कोटि का प्राचीन साहित्य, उत्कृष्ट कला या कृतियाँ, प्रसिद्ध ग्रंथ जो मानव जीवन के
3. चिरस्थायी = शाश्वत, हमेशा के लिए, टिकाऊ
4. दृष्टिगोचर = दिखाई पड़ने वाला, जिसे आँखों से देखा जा सकता है निकट हो
5. पतनोन्मुख = पतन की ओर उन्मुख, विनाश की ओर जाना, समाप्त होना
6. पारलौकिक = जो लौकिकता से परे हो, परलोक, अलौकिक, अज्ञात

7. पितामह = दादा, पिता के पिता (ब्रह्मा और शिव को भी पितामह कहा जाता है)

8. प्रतिष्ठित = सम्मानित, जिसकी प्रतिष्ठा या इज्जत की गई हो ।

9. प्रत्यभिज्ञा दर्शन = कश्मीरी शैव दर्शन की एक शाखा है। इसका शाब्दिक अर्थ है-पहले से देखे हुए को पहचानना, या पहले से देखी हुई वस्तु की तरह की कोई दूसरी वस्तु को देखकर उसका ज्ञान प्राप्त करना।

10. प्रसूतावस्था = प्रसव काल

11. भ्रमात्मक = संदिग्ध, भ्रमयुक्त, भ्रम उत्पन्न करना

12. मिथकीय = लोक काल्पनिक कथानक, लोक रूढ़ि, पौराणिक कथा मान्यता, आख्यान

13. संस्पर्श = संसर्ग, संपर्क, संयोग, प्रभावित होना

14. समरसता : सामंजस्य, सदा एक समान रहने की स्थिति, संतुलन

15. सर्वतोगामी : सभी दिशाओं में जाने वाला

16. सर्वतोगामी प्रतिभा : विभिन्न विषयों का ज्ञान या जानकारी होना

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए

1. जयशंकर प्रसाद के बाल्यकाल संबंधी जीवन का वर्णन कीजिए।

2. प्रसाद के व्यक्तित्व की विशेषताओं के बारे प्रकाश डालिए।

3. प्रसाद की रचनाओं का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

4. प्रसाद की प्रेम तथा सौंदर्य चेतना पर सारगर्भित लेख लिखिए।

5. प्रसाद की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए

1. प्रसाद के काव्य में निहित सौंदर्य बोध पर प्रकाश डालिए।

2. प्रसाद की अलंकार योजना एवं छंद योजना पर प्रकाश डालिए।

3. प्रसाद की प्रतीक-योजना संबंधी जानकारी दीजिए।

4. प्रसाद के जीवन दर्शन पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. प्रसाद के पितामह का नाम ( )

(अ) देवीशंकर प्रसाद (आ) शिवरतन साहू (इ) दोनों

2. प्रसाद के वंश का नाम ( )

(अ) साहू सुंघनी (आ) सुँघनी साहू (इ) सुरती साहू

3. गोबर्धनसराय ( )

(अ) प्रसाद का जन्मस्थान (आ) प्रसाद का ससुराल (इ) इनमें से कोई नहीं

4. कलाधर ( )

(अ) प्रसाद के बचपन का नाम (आ) प्रसाद का काव्यनाम (इ) दोनों

5. रत्नशंकर ( )

(अ) प्रसाद का बडा भाई (आ) प्रसाद का पुत्र (इ) दोनों

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. चित्राधार प्रसाद की .... भाषा में रचित रचना है।

2. प्रसाद आधुनिक हिंदी साहित्य के .... युग के साहित्यकार हैं।

3. स्कंदगुप्त नाटक का प्रकाशन वर्ष .... है।

III. सुमेल कीजिए -

1. प्रत्यभिज्ञा दर्शन	(अ) बुद्धि का प्रतीक
2. झरना	(आ) प्रसाद का अधूरा उपन्यास
3. इडा	(इ) यथार्थवादी उपन्यास
4. कंकाल	(ई) कश्मीरी शैव दर्शन
5. इरावती	(उ) छायावाद का प्रवर्तन

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. जयशंकर प्रसाद : आचार्य नंददुलारे वाजपेयी

2. प्रसाद - आँसू तथा अन्य कृतियाँ : सं. विनयमोहन शर्मा

3. प्रसाद की काव्य-प्रतिभा : दुर्गाशंकर मिश्र

4. हिंदी साहित्य का इतिहास : नगेंद्र

5. छायावाद पुनर्मूल्यांकन : सुमित्रानंदन पंत

इकाई 10 : कामायनी : 'चिंता' एवं 'श्रद्धा'

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना

10.2 उद्देश्य

10.3 मूल पाठ : कामायनी : 'चिंता' एवं 'श्रद्धा'

10.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

10.3.2 चिंता सर्ग : निर्धारित अंश की व्याख्या

10.3.3 श्रद्धा सर्ग : निर्धारित अंश की व्याख्या

10.4 पाठ सार

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

10.6 शब्द संपदा

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! मध्यकालीन साहित्य में जायसी के महाकाव्य 'पद्मावत' तथा तुलसी कृत 'रामचरितमानस' का जो स्थान है, आधुनिक हिंदी साहित्य में 'कामायनी' का वही स्थान है। "इसके कथानक का आधार वह प्रसिद्ध आख्यान है जिसके अनुसार मनु के अतिरिक्त संपूर्ण देव-जाति प्रलय का शिकार हो जाती है और मनु तथा श्रद्धा के संयोग से मानव-सभ्यता का प्रवर्तन होता है। इसका कथानक बहुत संक्षिप्त है, लेकिन कवि ने इसमें जीवन के अनेक पक्षों को समन्वित करके मानव-जीवन के लिए एक व्यापक आदर्श व्यवस्था की स्थापना का प्रयास किया है।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास)। इस इकाई में आप 'कामायनी' के दो प्रमुख सर्ग- 'चिंता' तथा 'श्रद्धा' के कुछ अंशों का अध्ययन करेंगे।

10.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप-

- 'कामायनी' के कथानक के बारे में जान सकेंगे।
- चिंता सर्ग के निर्धारित अंशों की व्याख्या कर सकेंगे।
- श्रद्धा सर्ग के निर्धारित अंशों की व्याख्या कर सकेंगे।
- 'कामायनी' की काव्यगत विशेषताओं को समझ सकेंगे।

10.3 मूल पाठ : कामायनी : 'चिंता' एवं 'श्रद्धा'

10.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

प्रिय छात्रो! 'कामायनी' प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक महाकाव्य है। मनु, श्रद्धा और इडा की पौराणिक कथा को आधार बनाकर कवि ने मानव-कुल को समरसता और आनंदवाद का संदेश दिया है। इन पात्रों के माध्यम से मानव-मन के क्रमिक विकास का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया है। इस पूरी रचना का सृजन कवि ने प्रतीकात्मक शैली में किया है। 'मनु'- मननशील, संकल्प-विकल्प युक्त, अहंकार युक्त मन का प्रतीक है। श्रद्धा-कोमल भावों से युक्त हृदय का प्रतीक है तथा इडा बुद्धि का प्रतीक है। 'कामायनी' में कुल 15 सर्ग हैं - चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इडा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य तथा आनंद।

'कामायनी' के प्रथम सर्ग 'चिंता' में यह दिखाया गया है कि प्रलय के कारण समस्त देव जाति का विनाश हो चुका है। इस जल-प्लावन में केवल मनु नामक देव पुरुष जीवित हैं। उन्हें आदिपुरुष कहा जाता है। मनु का शरीर सुदृढ़ था, भुजाओं और पैरों की धमनियाँ और नसें फूली हुईं दिखाई दे रही थीं, पास में दो-चार देवदारु के वृक्ष खड़े थे जो बर्फ के जमने से श्वेत हो रहे थे। कुछ ही दूरी पर एक पेड़ के सहारे एक नाव बंधी हुई थी, जिसकी सहायता से मनु ने आत्मरक्षा की थी। उस नाव के सहारे वे हिमालय की ऊँची चोटी पर पहुँच चुके थे। हिमालय के उत्तुंग शिखर बैठकर वह भीगे नयनों से चिंता की मुद्रा में प्रलय प्रवाह को देख रहा था। चारों ओर सिर्फ और सिर्फ विनाश के बादल मंडरा रहे थे -

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर / बैठ शिला की शीतल छाँह

एक पुरुष भीगे नयनों से/ देख रहा था प्रलय प्रवाह

प्रलय से पूर्व की देव जाति के वैभवपूर्ण जीवनशैली को वह याद कर रहा था। वे सब विलासिता में डूबे हुए थे। उन्हें अमर होने का घमंड था। किंतु नियति के सामने हर किसी को झुकना ही पड़ता है। दीर्घ प्रलय के बाद नव युग का प्रभात हुआ। प्रकृति धीरे-धीरे खिलने-मुस्कुराने लगी। प्रकृति में हुए इस बदलाव को देखकर मनु के मन में 'आशा' का संचार होता है। निराशा को आशा में बदलने का वर्णन इस सर्ग में किया गया है। तीसरे सर्ग 'श्रद्धा' में एक सुंदर युवती का आगमन होता है। उसने मनु का परिचय पूछा। मनु ने विषाद भरे स्वर में अपना परिचय दिया। सुंदर युवती ने अपना नाम 'श्रद्धा' बताया, श्रद्धा अर्थात काम-पुत्री कामायनी। वह गंधर्व देश की रहने वाली थी। भ्रमण की इच्छा से वह हिमालय की सुंदरता निरखने आई थी, तभी जल-प्रलय हुआ था। तब से वह भी अकेली भटक रही थी। मनु के मन में निराशा के भाव को देखकर श्रद्धा उसे सुख-दुख की परिभाषा समझाती है। उस अनुपम सुंदरी के संपर्क में आने से मनु के मन में नई रागमयी चेतना का, नव-जीवन के सृजन का उत्साह प्रस्फुटित हुआ। श्रद्धा अपनी सेवा भावना और ममता से मनु के मन में जीवन के प्रति रागात्मक भाव एवं आस्था जगाती है। श्रद्धा का दूसरा नाम ही विश्वास है।

अकेले भटक रहे मनु को अपने पास एक सुंदर युवती पाकर मन में "काम" भाव का संचार होता है। यह मानव की नैसर्गिक प्रवृत्ति है। काम मानव के जीवन को विकास की ओर ले चलता है, लेकिन उसकी अतिशयता विनाश का कारण भी बनता है। एक दिन रात्रि जब वे प्रकृति के रमणीय दृश्य को देख रहे थे, उनके मस्तिष्क में अतीत की स्मृति कौंध जाती है। श्रद्धा का अपूर्व सौंदर्य उन्हें लालायित करता है। इसी उधेड़बुन में उनकी आँख लग जाती है। तब उनके सपने में स्वयं कामदेव आकर कहते हैं- 'मैं काम हूँ, देवों की विलासिता का साथी। मेरी प्रिया रति जो अनादि वासना का रूप थी, आकर्षण का काम करती थी। हम दोनों के सहयोग से सृष्टि का प्रसार होता था। हम दोनों के मेल से प्रेम कला का जन्म हुआ है। तुम यदि प्रेम-कला को पाना चाहते हो तो पहले उसके पात्र बनो', कहकर वह अदृश्य हो जाता है। मनु का मन पहले ही अकेलेपन से ऊब चुका था। अब अपने साथ श्रद्धा को पाकर उनके मन में 'वासना' जागृत हुई। श्रद्धा का असाधारण सौंदर्य उन्हें अपनी ओर खींच रहा था। वह श्रद्धा के सामने अपने अतृप्त

अधीर हृदय के उन्माद को प्रणय के रूप में अभिव्यक्त करता है। उसके प्रणय-प्रस्ताव को सुनकर श्रद्धा रोमांचित हो उठती है।

मनु के इस प्रणय निवेदन से श्रद्धा पुलकित हो उठती है और उसके स्त्री सुलभ 'लज्जा' का संचार होता है। श्रद्धा ने अपने-आप को मनु को समर्पित तो कर दिया था, परंतु उसके हृदय में एक हलचल मची हुई थी। वह पुरुष की तुलना में अपने आप को दुर्बल पा रही थी। तभी उसे एक छाया प्रतिमा अपनी ओर आती दिखाई देती है। श्रद्धा ने जब उससे परिचय पूछा तब वह कहती है- 'मैं देवी जगत की रानी रति हूँ, अपने स्वामी काम से ठगी जाकर आकर्षण शक्ति का रूप धारण कर चुकी हूँ। उसी की प्रतिमा लज्जा हूँ। मैं नारी को शिष्टता की सीख देती हूँ। मैं नारी के कपोलों पर लालिमा के रूप में दिखाई देती हूँ। मैं नारी के सौंदर्य की रक्षा करती हूँ।' उसकी बातों को सुनकर श्रद्धा कहती है कि 'मैंने नारीत्व की दुर्बलता को समझ लिया है। पुरुष पर विश्वास कर मैंने अपने-आप को सौंपा था, बदले में उससे कुछ पाने का साहस नहीं होता।' तब लज्जा उसे समझाती है- 'जिस विश्वास के साथ तुमने आत्मसमर्पण किया है, उस पर आस्था रखो और पुरुष के जीवन में अमृत-रस का संचार करो। अच्छाई-बुराई को समानता से अपनाते जाओ।' लज्जा की बातों से प्रेरित होकर श्रद्धा अपने आप कि पूर्ण रूप से मनु को समर्पित कर देती है।

श्रद्धा की प्रेरणा से मनु 'कर्म' के प्रति प्रेरित होता है। कवि ने इस सर्ग में मनु के जीवन के दो प्रकार के कर्मों का उल्लेख किया है- बाह्य जीवन का सहज कर्म था-सोमप्राप्ति के लिए बलि और यज्ञ तथा आंतरिक जीवन का कर्म था नर-नारी का संबंध जो सृष्टि के विकास के लिए आवश्यक। पहले कर्म की पूर्ति पशु की बलि चढ़ाने और यज्ञ के रूप में दो असुर पुरोहित आकुलि और किलात के सहयोग से संपन्न होता है। इस यज्ञ से मनु के मन की पाशविक प्रवृत्ति जाग उठती है। मनु के भावी विपथन के पूर्वाभास का यह संकेत है। मनु के मन की वासना समाप्त नहीं होती है। लेकिन श्रद्धा इस समर्पण के बाद अन्य कार्यों में लग जाती है।

पाशविक गुणों के संचार से प्रेरित होकर मनु शिकार खेलने में मग्न हो जाते हैं। श्रद्धा के प्रति भी उनका आकर्षण कम हो जाता है, क्योंकि श्रद्धा के प्रेम में अब पहले वाली उष्णता नहीं थी। वह हमेशा धान चुनने में या ऊन कातने में लगी रहती थी। वह गर्भवती भी थी। नवजात शिशु के स्वागत की तैयारी में वह लग जाती है। इसे देखकर मनु के में मन में "ईर्ष्या" का संचार

होता है। उनका वासना-ग्रस्त मन फिर से भटकने लगता है। उन्हें लगता है कि श्रद्धा अब बच्चे के लालन-पालन में मस्त रहेगी और वह उपेक्षित रह जाएगा। यही सोचकर वह श्रद्धा को अकले छोड़कर चले जाते हैं।

श्रद्धा से रूठकर मनु पुन: इधर-उधर भटकते-भटकते सरस्वती नदी के किनारे बसे सारस्वत प्रदेश में आ पहुँचते हैं। वह स्थान सूना और उजड़ा पड़ा था। इस प्रदेश की शासिका "इडा" से मनु की भेंट होती है। इडा बुद्धि का प्रतीक है। अर्थात, मनु मन का प्रतीक है तो इडा उसकी बुद्धि का प्रतीक है। इस सर्ग में मन और बुद्धि का मिलन होता है। इडा और मनु परस्पर एक-दूसरे के प्रति आकृष्ट होते हैं और इडा मनु को अपने देश का शासक बना देती है। उस उजड़े प्रदेश को बसाने और व्यवस्थित करने की जिम्मेदारी वह मनु को देती है। इडा के उपदेशानुसार मनु नव-सृष्टि का निर्माण करने के लिए उद्यत होते हैं। इस सर्ग की घटनाओं और प्रसंगों के माध्यम से प्रसाद यह संदेश देना चाहते हैं कि मनु के अंदर (मन में) मानवता के विकास के लिए श्रद्धा का संसर्ग जितना आवश्यक था, उतना ही आवश्यक था इडा का संसर्ग, जिसके माध्यम से वे प्रजापति बनकर प्रजा के संरक्षक बन सकते थे। लेकिन मनु का अतृप्त मन इस कार्य से भी तृप्त नहीं हो पाया। इसका मुख्य कारण उनके मन की वासना थी, जो तृप्त नहीं हो पा रही थी। अपनी इस अदम्य और अतृप्त वासना की पूर्ति के लिए एक दिन वे इडा को साधन बनाने की धृष्टता कर बैठते हैं। इडा अपने-आप को बचाने का प्रयत्न करती है। मनु के इस अभद्र व्यवहार से सारस्वत प्रदेश के निवासी क्रोधित होकर उस पर आक्रमण कर देते हैं, जिससे मनु मूर्छित हो जाते हैं।

इस सर्ग के संबंध में यह भी उल्लेखनीय है कि जब मनु श्रद्धा को छोड़कर सारस्वत प्रदेश आते हैं, तब उन्हें कामदेव के शब्द सुनाई पड़े - "हे मनु तुम भूल गए। निष्ठा स्वरूप उस नारी को तुमने तुच्छ समझा। जीवन को अनित्य मानकर जितना हो सके उतना सुख भोगना और वासना-तृप्ति ही तुमने अपना लक्ष्य समझा। पुरुष होने के अहं के वश में तुमने नारी का महत्व स्वीकार नहीं किया, उसके देह को केवल भोग की सामग्री समझा। वस्तुत: अधिकार और अधिकारी के बीच समरसता होती है, इस सत्य की तुमने उपेक्षा की।" अब इसका फल तुम्हें भुगतना पड़ेगा। कामदेव का यह संदेश केवल मनु के लिए मात्र नहीं था, बल्कि समस्त मानव जाति के लिए है।

कामदेव के शाप के जरिए प्रसाद यह कहना चाहते हैं कि श्रद्धा भाव के बिना मनुष्य का कल्याण संभव नहीं है।

मनु से परित्यक्ता होने के बाद श्रद्धा पुत्र को जन्म देती है। मनु से तीव्र आघात सहने के बावजूद वह मनु को भुला नहीं पाती। एक दिन वह "स्वप्न" में देखती है कि इडा नामक एक सुंदरी मनु का प्रेरणा-स्रोत बनकर उन्हें प्रगति के मार्ग पर ले जा रही है। मनु का एक समृद्ध नगर बसा हुआ है। मनु के हाथ में एक प्याला है जिसमें इडा सोम रस डाल रही है और मनु पी रहा है। मनु का अतृप्त मन इडा से प्रणय निवेदन करता है। इडा उनके निवेदन को स्वीकार नहीं करती, किंतु मनु बलपूर्वक उसे आलिंगन में लेने की चेष्टा करते हैं। इडा चीखती हुई वहाँ से भाग जाती है। नारी पर अत्याचार होने से अंतरिक्ष में रुद्र का क्रोधमय स्वर गूँजता है। शंकर का तीसरा नेत्र खुलाता है और शिव का तांडव नृत्य आरंभ होता है। प्रलय की संभावना से सब जीव भयभीत थे। मनु के इस अभद्र व्यवहार से प्रजा भी रुष्ट हो जाती है और मनु पर प्रहार करने के लिए तैयार हो उठती हैं। मनु द्वार बंद कर छिपकर बैठा है। ऐसा भयानक स्वप्न देखकर श्रद्धा काँप उठती है।

यद्यपि श्रद्धा ने स्वप्न देखा था, लेकिन वह सपना सच निकला। सारस्वत प्रदेश उजड़ा हुआ था। देव वंश की निरंकुशता जब अपनी सीमा पार गई थी तब प्रलय हुआ था, उसी प्रकार मनु की निरंकुशता पुन: प्रलय का संकेत दे रही थी। सारस्वत प्रदेश की अशांति का मूल कारण यह था कि मनु इडा पर अपना वासनामय अधिकार जमाना चाहते थे। इससे राजा और प्रजा के बीच "संघर्ष" का वातावरण बना। चारों तरफ से बाणों की वर्षा हुई। मनु घायल होकर गिर पड़े।

मूर्छित मनु को श्रद्धा स्पर्श करती है तो उसके स्पर्श से मनु की मूर्च्छा टूटती है। सामने श्रद्धा को देखकर वे लज्जित हो जाते हैं। श्रद्धा अपने पुत्र कुमार को पिता से मिलवाती है। मनु पश्चात्ताप की आग में जलता है। मनु अपने कलुषित आचरण के कारण श्रद्धा का साक्षात्कार करने में संकोच का अनुभव करते हैं। उनका मन "निर्वेद" भाव से इतना भर जाता है कि वे पुन: श्रद्धा, कुमार और इडा को छोड़कर चले जाते हैं।

मनु के चले जाने के बाद श्रद्धा वहीं सारस्वत प्रदेश में ही कुछ दिन रह जाती है। उसे मनु की चिंता सताती है। अपने पुत्र "मानव" को इडा के पास छोड़कर वह पति की तलाश में निकल पड़ती है। श्रद्धा के पुत्र मानव को इडा के पास छोड़ जाने के कारण को कवि सांकेतिक रूप से

इस प्रकार व्यक्त करते हैं - "यह तर्कमयी, तू श्रद्धामय/ तू मननशील/ कर कर्म अभय।" अर्थात, एक बच्चे को माँ से श्रद्धा भाव, पिता से मनन शक्ति तथा इडा से अनुशासन में मेधा (तर्क) शक्ति का विकास कर अपने मानव व्यक्तित्व का पूर्ण करें और निर्भय हो कर अपने कर्म पथ पर अग्रसर हो सकें।

अंततः श्रद्धा अपने पति को ढूँढ ही लेती है। पुन: एक बार श्रद्धा का दर्शन पाकर मनु का मन अपने किए पर पछताता है। अपने प्रति श्रद्धा के उदार भाव को देखकर उनके मन में श्रद्धा भाव जाग उठता है। मनु के मन में श्रद्धा का भाव जाग उठते ही उन्हें कैलाशपर्वत पर नटराज शंकर नृत्य करते हुए दिखाई देने लगते हैं। उन्हें ऐसा लगता है मानो हिमालय पर्वत भी विद्युत प्रभा से दमक उठा है। इस अद्भुत प्रकाश को देख मनु श्रद्धा से कहते हैं कि उन्हें उस ओर ले चलें। श्रद्धा और मनु आनंद शिखर की दिशा में आगे बढ़ते जा रहे हैं। शिखर की ऊँचाई पर हर तरफ बरफ जमी हुई है। वे दोनों इतनी ऊँचाई पर पहुँच गए थे कि वहाँ पर ग्रह, तारे, नक्षत्र आदि कुछ भी दिखाई नहीं दे रहे थे। ऋतुओं का वहाँ कोई ज्ञान नहीं था। भूमंडल रेखा अदृश्य हो चली थी। वहाँ पर संसार तीन दिशाओं में विभाजित प्रतीत हो रहा था और तीन प्रकाश बिंदु दिखाई दे रहे थे। ऐसे "रहस्यमय" स्थान पर पहुँच कर मनु के मन में नई चेतना का संचार होने लगता है। साथ ही उन प्रकाश बिंदुओं को देखकर उनके मन में संशय भी होता है। श्रद्धा उनके मन के संशय को दूर करते हुए कहती है, ये तीन ज्योतिबिंदु क्रमश: भावलोक, कर्मलोक और ज्ञानलोक हैं, जो क्रमश: हमारी भाववृत्ति, कर्मवृत्ति और ज्ञानवृत्ति के प्रतीक हैं। इन तीनों का परिचय देते हुए श्रद्धा मानव जीवन के आधारभूत और निगूढ़ रहस्यों का उद्घाटन करती है। वह कहती है कि इन तीनों में सामंजस्य न होने के कारण जीवन सदा अपूर्ण रहता है। भाव, क्रिया तथा ज्ञान के सामंजस्य से ही जीवन में परिपूर्णता आ पाती है। ऐसा कहते हुए श्रद्धा उन तीनों का पृथक अस्तित्व नष्ट कर उनके बीच सामंजस्य स्थापित कर देती है। वास्तव में ये तीन बिंदु मनु की चेतना (भाववृत्ति, कर्मवृत्ति, ज्ञानवृत्ति) की ही प्रतिच्छाया हैं। तीनों में सामंजस्य होते ही मनु की चेतना में भी समरसता का संचार होने लगता है। कवि ने इस स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया है -

"स्वप्न, स्वाप, जागरण भस्म हो, इच्छा क्रिया ज्ञान मिल लय थे,

दिव्य अनाहत पर-निनाद में, श्रद्धायुक्त मनु बस तन्मय थे।

इडा, मनु के पुत्र मानव के सहयोग से सारस्वत प्रदेश को पुन: समृद्ध करती है। इसके बाद मानव, इडा और सारस्वत प्रदेश के निवासी श्रद्धा और मनु के दर्शनार्थ चल पड़ते हैं। उनके साथ धर्म के प्रतिनिधि वृषभ भी है। चारों तरफ मंगलगान गूँज रहा है। चलते-चलते वे एक समतल भूमि पर पहुँचते हैं। सामने कैलाश पर्वत है। पास ही मानसरोवर है जिसके किनारे मनु ध्यानमग्न बैठे हुए हैं। उनके सामने पुष्प लेकर श्रद्धा खड़ी है। सभी उन दोनों को प्रणाम करते हैं। मानव अपनी माँ की गोद में बैठ जाता है। इडा अत्यंत भावुक हो जाती है। उस समय विश्वसुंदरी श्रद्धा का शरीर कौषेय वस्त्र से ढका हुआ था। हिमालय पर्वत चंद्र-ज्योत्सना से धवलित हो रहा था। इस दृश्य को देखकर सभी आपसी भेद-भाव, ईर्ष्या-द्वेश आदि भूलकर एक दूसरे को अपने से अभिन्न अनुभव करने लगे। इस स्थिति में जड़ और चेतन के मध्य का द्वैत भी अद्वैत में बदल गया था। सभी आनंद में लीन होकर समरसता का अनुभव कर रहे थे-

समरस थे जड़ या चेतन, सुंदर साकार बना था,

चेतनता एक विलसती, आनंद अखंड घना था।

बोध प्रश्न

- कामायनी में कुल कितने सर्ग हैं?
- कामायनी किसकी पुत्री थी ?
- सारस्वत प्रदेश किस नदी के तट पर स्थित थी?
- मनु, श्रद्धा और इडा किसके प्रतीक हैं?

अध्येय कविता : (1) चिंता

ओ चिंता की पहली रेखा, अरी विश्व-वन की व्याली,

ज्वालामुखी स्फोट के भीषण प्रथम कंप-सी मतवाली!

है अभाव की चपल बालिके, री ललाट की खललेखा!

हरी-भरी-सी दौड़-धूप, ओ जल-माया की चल-रेखा!

इस ग्रहकक्षा की हलचल-री तरल गरल की लघु-लहरी,

जरा अमर-जीवन की, और न कुछ सुनने वाली बहरी!

अरी व्याधि की सूत्र-धारिणी-अरी आधि, मधुमय अभिशाप!
हृदय-गगन में धूमकेतु-सी, पुण्य-सृष्टि में सुंदर पाप।
मनन करावेगी तू कितना? उस निश्चिंत जाति का जीव-
अमर मरेगा क्या? तू कितनी गहरी डाल रही है नींव।
आह! घिरेगी हृदय-लहलहे-खेतों पर करका-घन-सी,
बुद्धि, मनीषा, मति, आशा, चिंता तेरे हैं कितने नाम,
अरी पाप है तू, जा, चल जा, यहाँ नहीं कुछ तेरा काम।
विस्मृति आ, अवसाद घेर ले, नीरवते ! बस चुप कर दे,
चेतनता चल जा, जड़ता से आज शून्य मेरा भर दे।
चिंता करता हूँ मैं जितनी उस अतीत की, उस सुख की,
उतनी ही अनंत में बनती जातीं रेखाएँ दुख की।
आह सर्ग के अग्रदूत ! तुम असफल हुए, विलीन हुए,
भक्षक या रक्षक जो समझो, केवल अपने मीन हुए।

निर्देश : इन पंक्तियों का सस्वर वचन कीजिए।
इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

10.3.2 चिंता सर्ग : निर्धारित अंशों की व्याख्या

ओ चिंता की पहली रेखा, अरी विश्व-वन की व्याली,
ज्वालामुखी स्फोट के भीषण प्रथम कंप-सी मतवाली !

शब्दार्थ : व्याली = सर्पिणी। भीषण = भयंकर। विश्ववन = संसार रूपी जंगल। स्फोट = फटना। मतवाली = उन्मत्त।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : मनु के मन की वेदना उनके मुख से कहानी के रूप में निकल रही थी, उसी को कवि ने इन पंक्तियों में प्रस्तुत किया है। मनु देव जाति के थे और उन्होंने विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत किया था। पहली बार उन्होंने दुख का सामना किया था, इसलिए अधिक चिंतित थे।

व्याख्या : मनु देव जाति के थे जिनके सामने कभी कोई चिंता नहीं थी। प्रलय के बाद वे पहली बार चिंता से ग्रसित थे। इसलिए मनु चिंता को संबोधित करते हुए कहते हैं, ओ चिंता की पहली रेखा, तू इस संसार रूपी वन में रहने वाली सर्पिणी हो। जिस स्थान में साँप रहते हों, वह रहने के लिए सुरक्षित नहीं रहता है। इसी प्रकार मानव को जब चिंताएँ घेर लेती हैं तो उसका जीवन सुखमय नहीं रहता। तू ज्वालामुखी पर्वत के पहली बार फटने पर होने वाले भयंकर भूचाल के समान उत्पात मचाने वाली हो। जिस प्रकार ज्वालामुखी फटने से सारी धरती नष्ट हो जाती है, उसी प्रकार चिंता भी मन का सारा सुख नष्ट कर देता है।

विशेषता : ओ, अरी, मतवाली - चिंता के लिए संबोधन।

चिंता की पहली रेखा- अर्थात पहली बार चिंता का सामना करना, पहली बार चिंता से ग्रसित होना।

विश्ववन की व्याली- रूपक अलंकार, प्रथम कंप सी- उपमा अलंकार

मतवाली : लाक्षणिक प्रयोग, चिंता को मतवाली इसलिए कहा गया है क्योंकि मतवाला मस्तिष्क विकृति का कारण बनता है। चिंता के लिए मतवाली प्रयोग का लक्ष्य अर्थ होगा विवेकहीन, व्यंग्यार्थ है अत्यंत घातक या हानिकारक होना। चिंता अमूर्त भाव है, उसे मानवी के रूप में संबोधित किया गया है।

बोध प्रश्न

- 'ओ चिंता की पहली रेखा' का क्या अर्थ है?

है अभाव की चपल बालिके, री ललाट की खललेखा !

हरी-भरी-सी दौड़-धूप, ओ जल-माया की चल-रेखा !

शब्दार्थ : अभाव = लोप। चपल = चंचल। ललाट = माथा। खल = दुष्ट। लेखा = रेखा। खललेखा= अशुभ रेखा। हरी = भरी सी, संपन्न। दौड़-धूप = प्रयत्न। जल माया = मरु मरीचिका। चल = चंचल।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : हिमालय के उत्तुंग शिखर पर बैठे मनु निर्जन वन में बिल्कुल अकेले थे। नीचे प्रलय था। ऐसे में उन्हें चिंता सताई जा रही थी कि आगे क्या होगा, कैसे होगा? वे कुछ भी नहीं समझ पा रहे थे। उनके जीवन में चिंता का यह पहला ही मौका था। इसलिए वे चिंता के बारे में सोचते हुए चिंता को अलग-अलग रूपों में वर्णन करने लगते हैं।

व्याख्या : मनु चिंता से कहते हैं - अरी अभाव से उत्पन्न होने वाली चंचल लड़की! अर्थात, जीवन में होने वाले अभावों के कारण मन में चिंता की उत्पत्ति होती है। अरी चिंता! तू मानव के ललाट पर लिखी गई दुष्ट या अमंगलमयी रेखा है। अर्थात मानव के दुर्भाग्य का सूचक है ।मन में चिंता के उत्पन्न होने पर माथे पर टेढी रेखाएँ बन जाती हैं। लेकिन फिर भी मनुष्य आशा के सहारे जीवित रहता है, इसी सोच के साथ कि बुरे दिन कट जाएँगे, इसलिए कवि ने चिंता को हरी भरी सी दौड़ धूप कहा है। अर्थात चिंताग्रस्त मानव चिंता से बचने के लिए बड़ा प्रयत्नशील रहता है। लेकिन चिंता! तू मरीचिका जैसी है। मरीचिका अपनी चंचल लहरों से मृगों को आकर्षित करती है। उसी प्रकार तू भी मनुष्य को अपनी ओर आकर्षित कर उसे भटकाती रहती है। कहने का तात्पर्य यह है कि जब हम चिंता में होते हैं तो हम कोई निर्णय ठीक से नहीं ले पाते हैं। हमारा मन डँवाडोंल होते रहता है, उस मरीचिका के समान ।

विशेषता : यहाँ चिंतातुर मन की स्थिति का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है। अभाव की चपल बालिके, ललाट की खल लेखा, हरी भरी सी दौड़ धूप, जल माया - चिंता के लिए प्रयुक्त संबोधन हैं। उल्लेख, उपमा, रूपक तथा मानवीकरण अलंकार है। हरी-भरी : लाक्षणिक प्रयोग, चिंता का मानवीकरण किया गया है।

बोध प्रश्न

- चिंता के लिए प्रयुक्त एक संबोधन बताइए।

इस ग्रहकक्षा की हलचल-री तरल गरल की लघु-लहरी,

जरा अमर-जीवन की, और न कुछ सुनने वाली बहरी !

शब्दार्थ : ग्रह कक्षा = पृथ्वी का भ्रमण। गरल = विष। तरल = द्रव्य पदार्थ। लघु = छोटी। जरा = बुढ़ापा। बहरी = न सुनाई देने वाली।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : पहली बार चिंता से गुजरने वाले मनु चिंता को अलग-अलग तरीकों से बखान करते हैं। कभी वह ज्वालामुखी लगती है तो कभी व्याल के समान। कभी चपल बालिके तो कभी जल माया। इसी क्रम में वे आगे चिंता का वर्णन करते हैं और अपना दुख अभिव्यक्त करते हैं।

व्याख्या : चिंता को संबोधित करते हुए मनु कहते हैं कि चिंता, तुम पूरे ब्रह्मांड में, ग्रह नक्षत्रों के मध्य हलचल मचा देने वाली हो। ग्रहों के मार्ग में भू, भुव, स्व: तीनों लोक आ जाते हैं। इसलिए ब्रह्मांड ही ग्रहकक्षा है। अतः पूरे ब्रह्मांड को हिला देने वाली क्षमता चिंता तुम्हारे अंदर है। तुम तरल पदार्थों में भी हो और गरल में भी। यह उस हल्की लहर के समान जो हमेशा हलचल में रहती है। जिस प्रकार विष के फैल जाने से मानव का सर्वनाश हो जाता है, उसी प्रकार चिंता के कारण मानव के मन को बड़ा आघात पहुँचता है। चिंता मस्तिष्क को प्रभावित कर जीवन को विषाक्त कर देती है। चिंता आदमी को जल्द ही बूढ़ा बना देती है और चिंता से मनुष्य शीघ्र ही मर भी जाता है। चिंताग्रस्त मानव बहरे की तरह होता है, जिसे कुछ भी सुनाई नहीं देता, वह अपने ही धुन में खोये रहता है। मनु चिंता को बहरी कहते हैं।

विशेषता : चिंता की चरमसीमा बताई गई है। उल्लेख तथा रूपक अलंकारों का प्रयोग हुआ है। 'ल' की आवृत्ति से अनुप्रास अलंकार है। जरा अमर जीवन में अर्थापत्ति व्यंग्य है। बहरी-मानवीकरण है।

बोध प्रश्न

- चिंता में किस प्रकार क्षमता होती है?

अरी व्याधि की सूत्र-धारिणी-अरी आधि, मधुमय अभिशाप !

हृदय-गगन में धूमकेतु-सी, पुण्य-सृष्टि में सुंदर पाप।

शब्दार्थ : व्याधि = रोग। सूत्र-धारिणी = संचालित करने वाली। आधि = मानसिक रोग। धूमकेतु= पुच्छल तारा (अशुभ का सूचक)। पुण्य = पवित्र, पावन। मधुमय = माधुर्य भरा।

अभिशाप = कष्टमय स्थिति जिसमें सुखदायक वस्तु भी दुखद या बुरी बन जाती है। गगन = आकाश।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : अब मनु चिंता से बहुत परेशान है। उन्हें सूझ नहीं रहा कि उन्हें करना क्या है! ऐसे में वे चिंता को अलग-अलग प्रकारों से संबोधित करते हुए अपनी मजबूरियों का बखान कर रहे हैं। इस अकुलाहट में उनकी बेबसी दिखती है।

व्याख्या : चिंता को संबोधित करते हुए मनु कहते हैं, अरी चिंता, तू रोगों को उत्पन्न करने वाली है, तू जिस मनुष्य के हृदय में घर कर लेती है, उसे अनेक और असाध्य बीमारी हो जाती है। सभी व्याधियों की तू ही सूत्रधारिणी है। तू मानसिक रोग की जड़ है इसलिए तुम मधुमय अभिशाप हो, जो धीरे-धीरे आदमी को मानसिक रूप से खोखला कर देती है। मानव के हृदय रूपी आकाश में तू धूमकेतु की तरह जन्म लेती है। धूमकेतु एक अत्यंत चमकीला तारा होता है जिसके पीछे पूंछ सी रहती है जिससे धुआँ सा निकलता है। ज्योतिष शास्त्र में इसे अनिष्ट माना जाता है। तू भी इसी प्रकार की है। इस पावन संसार में तू सुंदर पाप है।

विशेषता : व्याधि की सूत्र-धारिणी : चिंता एक मानसिक विकार है जिसके कारण नाना प्रकार के रोग पैदा होते हैं इसलिए कवि ने चिंता को व्याधि की सूत्र-धारिणी कहा है।

मधुमय अभिशाप और सुंदर पाप : दोनों चिंता के कल्याण प्रद फल हैं।

सूत्रधारिणी, आधि, अभिशाप और पाप में निरंग रूपक अलंकार है। हृदय-गगन में रूपक अलंकार है। धूमकेतु सी में उपमा अलंकार का प्रयोग हुआ है। चिंता शब्द स्त्री लिंग होने पर भी उसकी तुलना अभिशाप, धूमकेतु और पाप जैसे पुल्लिंग शब्दों से की गई है।

बोध प्रश्न

- चिंता को मधुमय अभिशाप क्यों कहा गया है?

मनन करावेगी तू कितना? उस निश्चिंत जाति का जीव-

अमर मरेगा क्या? तू कितनी गहरी डाल रही है नींव।

शब्दार्थ : मनन करना = किसी के बारे में निरंतर सोचना। निश्चिंत = जिसको कोई चिंता नहीं।

संदर्भ: प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्‌धृत किया गया है।

प्रसंग : चिंता को अलग-अलग रूपों में संबोधन करते हुए उसके दोष को स्पष्ट करने वाले मनु उससे कहते हैं कि उसका उद्देश्य चाहे जो भी हो, उसे उसमें सफलता नहीं मिलेगी।

व्याख्या : चिंता से मनु कहते हैं- तू मुझे कितना सोचने के लिए विवश करेगी? भले ही तुझमें व्याधि और आधि उत्पन्न करने की शक्ति हो, परंतु तेरे स्वभाव से मेरे जैसा व्यक्ति जो प्रकृति से ही न मरने वाला बताया गया है ऐसे में रोग, आशंका मेरे सामने क्या कर सकते हैं? आधि और व्याधि मृत्यु के दूत हैं। पर जो मृत्यु के बंधन से परे है, उसका ये क्या बिगाड़ेगा? ऐसे में तू मुझे किस हद तक प्रभावित कर पाएगी? कितनी गहरी नींव डाल रही है। अपनी सफलता के लिए कितना दृढ़ आधार बनाना चाहती है या कितना महान प्रयास कर रही है? या कितनी गहरी जड़ हाल रही है कि मैं चाहता हुआ तेरे प्रभाव से मुक्त नहीं हो पा रहा हूँ। अर्थात, मनु देव जाति के होने के कारण चिंता से उनकी मृत्यु होने की संभावना नहीं है, लेकिन उसके प्रभाव से वे अपने-आप को नहीं बचा पाए हैं। इसलिए वे बार-बार चिंता में डूब जाते हैं।

विशेषता : निश्चिंत जाति का जीव अमर मरेगा क्या : विरोधाभास अलंकार

चिंता की गहरी नींव डालना : लाक्षणिक प्रयोग। प्रश्नार्थक चिह्न मनु के मन की उलझन को दर्शाता है। तू - सर्वनाम का प्रयोग सामान्यत: घनिष्ठ मित्रों के बीच या ईश्वरीय शक्ति के पास प्रार्थना करते हुए किया जाता है, जिससे घनिष्ठता ध्वनित होती है। यहाँ चिंता के लिए तू का प्रयोग यह दिखाता है कि मनु और चिंता के बीच घनिष्ठता हो।

बोध प्रश्न

- चिंता से मनु क्या कहते हैं?

आह! घिरेगी हृदय-लहलहे-खेतों पर करका-घन-सी,

छिपी रहेगी अंतर तम में सबके तू निगूढ़ धन सी।

शब्दार्थ : करका = बिजली। निगूढ़ = गुप्त, रहस्यपूर्ण।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : मनु चिंता को सार्वजनिक एवं सार्वयुगीन बताते हैं।

व्याख्या : चिंता से मनु कहते हैं कि तू सुखमय हृदय में आक्रमण करके हल चल पैदा करती है। तू लोगों के मन रूपी हरे-भरे खेतों में ओले बरसाने वाले मेघ की भाँति सदा ही घिरी रहती है। एकमात्र मैं ही तेरे आक्रमण का शिकार नहीं बना हूँ, तू तो भावी संतति के आशा और प्रसन्नता से भरे मन पर भी वज्रपात करने वाली हो। हरे-भरे खेतों पर ओले पद जाए तो वे नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार उल्लासमय जीवन में चिंता घुसकर तहस-नहस कर देती है। तेरी झपकी में न आने वाला आज कोई मानव होगा? चिंताग्रस्त न होने वाले मानव इस संसार में क्या कोई हो सकते हैं? तू सबके हृदयांतराल में इस प्रकार छिपी रहती हो जैसे जमीन के अंदर गहरा गाड़ दिया गया धन छिपा रहता है। अर्थात मानव अपनी चिंता प्रकट होने नहीं देता, वह उसे अपने मन में छिपा लेता है।

विशेषता : चिंता अमूर्त है, जिसके लिए मूर्त उपमाओं का प्रयोग हुआ है। हृदय लहलहे खेतों- रूपक अलंकार, करका-घन-सी और निगूढ़ धन सी में उपमा अलंकार।

बोध प्रश्न

- करका-घन-सी में कौन-सा अलंकार है?

बुद्धि, मनीषा, मति, आशा, चिंता तेरे हैं कितने नाम,

अरी पाप है तू, जा, चल जा, यहाँ नहीं कुछ तेरा काम।

शब्दार्थ : बुद्धि = मेधा शक्ति। मनीषा = प्रतिभा। मति = किसी विषय पर चिंतन करना और समझना।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : मनु चिंता को अलग-अलग नामों से संबोधित करते हुए उसे डाँटने-फटकारने के बाद भी उन्हें सुकून नहीं मिलता। इसलिए, वे अब उसे मनाने पर लगे हैं कि तुम किसी भी तरह जल्द मुझे छोड़कर चली जाओ।

व्याख्या : विविध प्रकार से अलग-अलग नामों से चिंता को संबोधन करने के बाद भी मनु का मन नहीं भरता। इसलिए वे कहते हैं कि तू इस धरती पर अलग-अलग नामों से रहती है। जगह-जगह तेरे नाम बदल जाते हैं। कई नामों से तू लोगों को छलती है। कहीं तू बुद्धि तो बनकर तो कहीं मनीषा बनकर। कहीं मति तो कहीं आशा के रूप में छिपी रहती है। कहीं चिंता के रूप में मानव के मन में बसी रहती है। चिंता को बुद्धि इसलिए कहा गया है क्योंकि चिंतित व्यक्ति बुद्धि से सोचता है। चिंता पर मनन करने के कारण उसे मनीषा कहा गया है। चिंता की उत्पत्ति मन से होती है, मन तर्क या वितर्क करता रहता है। मन को मति भी कहते हैं, इसलिए मन या मति से उत्पन्न होने के कारण चिंता को मति भी कहा गया है। चिंताग्रस्त मानव उससे छुटकारा पाने के लिए प्रयत्न करता है। प्रयत्न आशा जनित होते हैं। इसलिए इसे आशा भी कह गया है ।चिंता से चिंतन का जन्म होने के कारण वह सार्थक है। कुल मिलाकर चिंता कई रूपों में मानव मन को उद्विग्न या आवेगपूर्ण बनाती है। इसलिए मनु चिंता से अनुरोध करते हैं कि-अरी चिंता, तू पाप है। यहाँ से जल्दी चली जा। तेरा यहाँ कोई काम नहीं है, इसलिए तुम मुझसे दूर हो जाओ।

विशेषता : चिंता का मानवीकरण हुआ है। मनु के मन का क्षोभ प्रकट हुआ है। पाप का प्रयोग पापिनी के अर्थ में है। लेकिन पाप का अर्थ यदि बुराई लें तो अधिक चमत्कारक होगा। चिंता तो अपने आप में बुरी है। उसे अभिशाप भी कहा जा चुका है। चल जा में भाषा का शैथिल्य है, चली जा होना चाहिए था, लेकिन छंदोभंग हो जाता है, इसलिए चल जा का प्रयोग किया गया है। काव्यलिंग अलंकार है।

बोध प्रश्न

- चिंता के कुछ नाम बताइए।

विस्मृति आ, अवसाद घेर ले, नीरवते! बस चुप कर दे,

चेतनता चल जा, जड़ता से आज शून्य मेरा भर दे ।

शब्दार्थ : विस्मृति = भूल। अवसाद = व्यापार शून्यता। नीरवता = सन्नाटा। चेतनता = सजीवता। जड़ता = संज्ञाहीनता।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : मनु चिंता को अलग-अलग नामों से संबोधित करते हुए उसे डाँटने-फटकरने के बाद भी उन्हें सुकून नहीं मिलता। इसलिए, वे अब उसे मनाने पर लगे हैं कि तुम किसी भी तरह जल्द मुझे छोड़कर चली जाओ। मनाने के बावजूद जब चिंता से वे मुक्त नहीं हो पाए तो फिर विस्मृति अवसाद का आग्रह करते हैं ताकि वे उसे भूल जाए।

व्याख्या : मनु कहते हैं कि मेरी स्मरण शक्ति जाती रहे। क्योंकि अतीत का स्मरण होने से ही चिंता बढ़ती है। न मुझे कुछ याद आएगा न ही चिंता मुझे सताएगी। इसलिए मैं सब कुछ भूल जाना चाहता हूँ। हे विस्मृति! आ जा। वे कहते हैं कि मुझे अवसाद या सभी इंद्रियों की व्यापार शून्यता इस प्रकार घेर लें कि चिंता मेरे मन तक पहुँचे ही न। फिर नीरवता से कहते हैं कि बस बहुत हो चुका अब तो चिंता से मुक्त करा दो। वे चेतन अवस्था में भी नहीं रहना चाहते हैं। जड़ बनकर बिना किसी चेतना के वे शून्य की तरह रहना चाहते हैं, ताकि चिंता उन्हें छू भी न पाए। और जो चिंता पहले से ही मन में घर कर गई है, जड़ या अचेतन अवस्था में उसका क्या काम। पता भी नहीं चलेगा कि ऐसी कोई चिंता नामक कुछ है। नीरवता से कहते हैं कि बस बहुत हो चुका अब इस कोलाहल को शांत कर दो। तात्पर्य यह है कि- बाह्य कोलाहल के साथ-साथ आंतरिक हलचल भी शांत हो जाए। क्योंकि चिंता में अतीत के सारे कोलाहल कानों में गूंजता हुआ प्रतीत होता है। उससे बचने के लिए वे नीरवता से कहते हैं कि शांत करा दो। जब नीरवता से कुछ नहीं हुआ तो वे चेतना को कहते हैं कि कहीं तुम मुझे छोड़कर चली जाओ, मैं जड़ वस्तु की तरह रहना चाहता हूँ ताकि मुझे चिंता न सता पाए।

विशेषता : चिंता से अधिक पीड़ित होने पर व्यक्ति में जड़ता आ जाती है और वह संवेदना खोने लगता है। आज शून्य मेरा भर दो- शून्य का अर्थ ब्रह्म भी है, अर्थात चिंता से पीड़ित मन आखिर ईश्वर का शरण लेता है। भरा उसे जाता है, जो खाली हो। यदि वह पहले ही पूर्ण होगा तो उसमें और वस्तु के लिए अवकाश कहाँ? मनु का हृदय भी खोया-खोया या व्यापार शून्य है अर्थात वह अन्य विषयों को ग्रहण नहीं कर पा रहा है, इसलिए उसे जड़ता से भर देने पर चिंता के लिए जगह नहीं रहेगा। चिंता विकारावस्था है जहाँ शून्य निर्विकार स्थिति है। यहाँ कवि शैवागम के आनंदवाद या बौद्ध धर्म के शून्यवाद की ओर संकेत करते हैं। विस्मृति, अवसाद, चेतनाहीनता अवांछनीय स्थिति हैं परंतु उनको आमंत्रित किया गया है-अनुज्ञा, समुच्चय आदि अलंकार है।

‘शून्य’ साभिप्राय होने से परिकरांकुर अलंकार है। अनुप्रास अलंकार भी है। मनु के मन में उत्पन्न यह विरक्ति क्षणिक मात्र की है।

बोध प्रश्न

- चिंता कैसी अवस्था है?

चिंता करता हूँ मैं जितनी उस अतीत की, उस सुख की,

उतनी ही अनंत में बनती जातीं रेखाएँ दुख की।

शब्दार्थ : अनंत = हृदयाकाश। अतीत = बीता हुआ कल, भूतकाल।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य ‘कामायनी’ के चिंता सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : अब तक चिंता को कोसने के बाद मनु इस बात पर पहुँचते हैं कि उन्हें चिंता अवांछनीय क्यों लग रही है। उन्हें अपने सुखमय विलासपूर्ण अतीत का स्मरण हो रहा है, जलप्लावन और अकेलेपन में विलासमय जीवन का याद आना सहज ही है।

व्याख्या : मनु कहते हैं कि मैं अपने बीते दिनों के सुख की चिंता करता हूँ। लेकिन उस अतीत सुख की जितनी मैं चिंता करता जाता हूँ, उतनी ही दुख की रेखाएँ मेरे हृदय में घर कर जाएँगी। अर्थात दुख भोगने के पश्चात मनुष्य यदि सुखमय स्थिति में पहुँच जाए तो वह शीघ्र ही दुखों को भूल जाता है, परंतु सुख भोगने के बाद यदि दुख आ जाए तो फिर उस सुखमय पलों को भुलाना बहुत कठिन है। मनु के साथ भी ऐसा ही हुआ है। सुख के बाद दुख आया है, इसलिए वे उस दुख से उभर नहीं पा रहे हैं।

विशेषता : अतीत के बारे में सोचने पर दुख और भी गहरा जाता है। सुख अनुभव योग्य होता है लेकिन दुख सहन करने योग नहीं होता। पहले की भांति यहाँ भी कवि ने हृदय के लिए अनंत शब्द का प्रतीकात्मक रूप में प्रयोग किया है। अनंत में दुख की रेखाओं का बनाना रूपकातिशयोक्ति अलंकार है। लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग हुआ है। अमूर्त और मूर्त बिंबों की कुशल योजना हुई है।

बोध प्रश्न

- दुख की रेखाएँ हृदय में कैसे घर कर जाती हैं?

आह सर्ग के अग्रदूत ! तुम असफल हुए, विलीन हुए,

भक्षक या रक्षक जो समझो, केवल अपने मीन हुए।

शब्दार्थ : सर्ग=सृष्टि रचना, अग्रदूत=पहले प्रजापति, विलीन=लुप्त, भक्षक= खा जाने वाला, मीन=मछली

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के चिंता सर्ग से उद्‌धृत किया गया है।

प्रसंग : मनु प्रलय के मूल में देवों की विलासितापूर्ण जीवन एवं उनके अत्याचारों का स्मरण करते हुए दुख प्रकट करते हैं।

व्याख्या : कवि अपने पूर्वजों, इस सृष्टि के अग्रदूतों, देवताओं से कहते हैं कि तुमने जो इस सृष्टि की रचना की और उसकी सुरक्षा और विकास के लिए विविध प्रयास किए। उनमें तुम्हें सफलता नहीं मिली, तुम्हारी वह सृष्टि भी प्रलय में ध्वस्त हो गई और तुम स्वयं भी उसमें मिट गए। तुम अपने आपमें स्वयं सृष्टि के रक्षक या भक्षक, चाहे जो भी सोच लो, हमने अपने कर्मों से ही इस विनाश को आमंत्रित किया है। अपने अहंकार के कारण प्रकृति के क्रोध का हम शिकार हो गए। एक मछली अपने से छोटी मछली से अपना पेट भरती है और क्षण भर के लिए अपनी रक्षा कर लेती है, लेकिन किसी बड़ी मछली का उसे शिकार होना ही पड़ता है। मछली जाति स्वयं रक्षक भी है और भक्षक भी। देव जाति ने भी असुरों से अपनी रक्षा कर ली, लेकिन अहंकार के कारण काल में विलीन हो गए। अपने ही विलास ने देव जाति को नष्ट कर दिया। इसलिए देव जाति स्वयं अपना रक्षक भी है और भक्षक भी।

विशेषता : देवता को सृष्टि की प्रथम रचना बताया गय है। दैवीगुण रक्षक है, अहंकार भक्षक है। इसलिए मनुष्य को सात्विक होना चाहिए। तीन प्रकार के गुणों का उल्लेख किया गया है- सात्विक, राजसिक, तामसिक। इन तीनों में सात्विक सबसे श्रेष्ट गुण माना गया है।

बोध प्रश्न

- देव जाति का विनाश कैसे हुआ?

अध्येय कविता : (2) श्रद्धा

“कौन तुम? संसृति-जलनिधि तीर-तरंगों से फेंकी मणि एक,
कर रहे निर्जन का चुपचाप प्रभा की धारा से अभिषेक?
मधुर विश्रांत और एकांत-जगत का सुलझा हुआ रहस्य,
एक करुणामय सुंदर मौन और चंचल मन का आलस्य !”
सुना यह मनु ने मधुर गुंजार मधुकरी का-सा जब सानंद,
किये मुख नीचा कमल समान प्रथम कवि का ज्यों सुंदर छंद।
एक झिटका-सा लगा सहर्ष, निरखने लगे लुटे-से कौन-
गा रहा यह सुंदर संगीत? कुतूहल रह न सका फिर मौन।
और देखा वह सुंदर दृश्य नयन का इंद्रजाल अभिराम,
कुसुम-वैभव में लगा समान चंद्रिका से लिपटा घनश्याम।
मृसण, गांधार देश के नील रोम वाले मेषों के चर्म,
ढँक रहे थे उसका वपु कांत बन रहा था वह कोमल वर्म।
नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मुदुल अधखुला अंग,
खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघवन बीच गुलाबी रंग॥
खिला वह मुख! पश्चिम के व्योम बीच जब घिरते हों घनश्याम,
अरुण रवि- मंडल उनको भेद दिखाई देता हो छविधाम।
या कि, नव इंद्रनील लघु श्रुंग फोड़ कर धधक रही हो कांत-
एक लघु ज्वालामुखी अचेत माधवी रजनी में अश्रांत।

निर्देश : इन पंक्तियों का सस्वर वचन कीजिए।

इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

10.3.3 श्रद्धा सर्ग : निर्धारित अंशों की व्याख्या

कौन तुम? संसृति-जलनिधि तीर-तरंगों से फेंकी मणि एक,

कर रहे निर्जन का चुपचाप प्रभा की धारा से अभिषेक?

शब्दार्थ : संसृति जलनिधि = संसर रूपी भवसागर। तीर = किनारा। प्रभा की धारा = कांति की किरणें। अभिषेक = स्नान/ सुशोभित।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : प्रलय कुछ थम सा गया है। हिमालय के उत्तुंग शिखर पर बैठा मनु प्रलय से घबरा गया है। अकेलेपन में जीना उसे दुष्कर लगता है। धीरे-धीरे प्रकृति में बदलाव होने लगता है तो मनु के मन में आशा जगती है। एकांत स्थान में जब वह अकेला बैठा था, तब एक अनिद्य सुंदरी श्रद्धा मनु से यह प्रश्न करती है।

व्याख्या : हिमगिरि के नीरव वातावरण में एक दिन मनु जब चिंता में लीन होकर बैठे थे तब अचानक उन्हें ऐसा लगा कि कोई उनसे पूछ रहा है-"तुम कौन हो? तुम्हारे मनोहर कांतिमय रूप को देखकर मुझे ऐसा लगता है जैसे समुद्र की लहरें उथल-पुथल मचाकर मणि को तट से फेंक देती हैं, उसी प्रकार इस सांसारिक आघातों से ठुकुराए हुए मणि के समान तुम कौन हो? जिस प्रकार समुद्र की तट पर पड़ी हुई मणि अपनी आभा से अपनी चारों ओर जगमगा देती है उसी प्रकार इस निर्जन स्थान में कांति की धारा को तुम आलोकित कर रहे हो। बताओ तुम कौन हो?

विशेषता :यहाँ उक्तिवक्रता और लालित्य है। रूपक तथा परिकर अलंकार है। लक्षणा शब्द-शक्ति है। छंद: संपूर्ण श्रद्धा सर्ग में 16 मात्राओं वाले शृंगार छंद प्रयुक्त हुआ है।

बोध प्रश्न

- 'संसृति-जलनिधि' का क्या अर्थ है?

मधुर विश्रांत और एकांत-जगत का सुलझा हुआ रहस्य,

एक करुणामय सुंदर मौन और चंचल मन का आलस्य!

शब्दार्थ : मधुर = आकर्षक। विश्रांत = आराम करना। एकांत = अकेलापन, एकाकी। करुणामय= करुणापूर्ण, जिसे देखकर करुणा उत्पन्न हो। मौन = शांत/ नीरवता।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : प्रलय कुछ थम सा गया है। हिमालय के उत्तुंग शिखर पर बैठा मनु प्रलय से घबरा गया है। हिमालय के इस एकांत स्थान में बैठे उस अकेले व्यक्ति को देख श्रद्धा चकित होकर उससे कई प्रश्न पूछती है।

व्याख्या : वह कहती है, तुम्हें देखने से तुम बहुत थके हुए लगते हो, अकेले में विश्राम कर रहे हो क्या? तुम्हारे आकार से मधुरता टपक रही है। तुम्हें देखने से लगता है कि तुमने इस जगत का रहस्य भली भांति जान लिया है। तुम्हारा यह मौन न केवल तुम्हारे बाह्य सौंदर्य का बोध कराती है, अपितु स्पष्ट हो रहा है कि तुम्हारा हृदय भी करुणा से परिपूर्ण है। और तुमने अपनी चंचलता को त्यागकर आलस्य के साथ बैठकर विश्राम कर रहे हो।

विशेषता : श्रद्धा सर्ग का प्रारंभिक अंश नाटकीय लगता है। सारे पद में लाक्षणिक वक्रता का प्रयोग हुआ है।

बोध प्रश्न

- किसका हृदय करुणा से परिपूर्ण है?

सुना यह मनु ने मधुर गुंजार मधुकरी का-सा जब सानंद,
किये मुख नीचा कमल समान प्रथम कवि का ज्यों सुंदर छंद।

शब्दार्थ : मधुकरी = भ्रमर। प्रथम कवि = महर्षि वाल्मीकि।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : श्रद्धा के वचनों को सुनकर मनु की जो प्रतिक्रिया हुई उसका उल्लेख कवि ने किया है।

व्याख्या : मनु उस पूरे प्रदेश में अकेले थे। विचारमग्न होकर झुके कमल सा नीचे धरती की ओर देख रहे थे। तभी अचानक भ्रमरी के मधुर गुंजार के समान श्रद्धा के वचनों को सुना। श्रद्धा के

शब्द सुनकर उनका मन प्रसन्न हुआ। उनका हृदय आनंदित हो उठा। उन्हें लगा जैसे आदिकवि वाल्मिकि का सबसे प्रथम पद्य सुन रहे हों।

विशेषता : कवि ने स्थिति का सुंदर चित्र अंकित किया है। मनु आसन पर मुख नीचा किए बैठे हैं, सामने श्रद्धा खड़ी है। जब कमल नीचे होता है तो भंवरा ऊपर-ऊपर मंडराता रहता है। श्रद्धा की तुलना यहाँ मधुकरी से की है, इसलिए मनु की तुलना कमल से की है। मधुकरी का गुंजन मधुर और मंद होता है, जो व्यक्ति मनु से बात कर रहा है, उसका स्वर भी मधुर एवं मंद है। अत: कवि यहाँ पर पाठक को यह दिखाना चाहते हैं कि मनु से जिसकी बात हो रही है, वह एक स्त्री है जो मृदुभाषी, लज्जाशील एवं करुणामय है।

अंतिम पंक्ति में कवि आदिकवि वाल्मीकि की ओर संकेत किया है। वाल्मीकि की काव्यरचना के मूल में यह प्रसिद्ध है कि एक दिन वाल्मीकि ने क्रौंच पक्षी के क्रीडाशील जोड़े में से एक को किसी व्याघ के बाणों से आहत होकर गिरते देखा, महर्षि का मन करुणा से भर आया और करुणामय श्लोक प्रकट हुआ -

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वगम: शाश्वती समा:।

यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधी: काममोहितम॥

मधुकरी का सा और कमल समान : उपमा अलंकार, सुना, तूने, सानंद इन दन्त्यवर्णों की आवृत्ति के कारण श्रुति और मकार की आवृत्ति से वृत्ति अनुप्रास है।

बोध प्रश्न

- 'मधूकरी का सा' में किस अलंकार का प्रयोग किया गया है?

एक झिटका-सा लगा सहर्ष, निरखने लगे लुटे-से कौन-

गा रहा यह सुंदर संगीत? कुतूहल रह न सका फिर मौन।

शब्दार्थ : झिटका सा लगा = बिजली सी दौड़ गई। लुटे से = आश्चर्यचकित। सहर्ष = प्रसन्नता के साथ। कुतूहल रह न सका फिर मौन = यह जानने की उत्सुकता दबी न रही।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा।

व्याख्या : उस निर्जन प्रदेश में अचानक एक स्त्री की आवाज सुनकर मनु को विस्मय का हलका झटका सा लगा। उस स्वर के माधुर्य से वे इतने मुग्ध हो गये कि मानो खो गए। उनके रोम-रोम में हर्ष की बिजली दौड़ी। उन्हें ऐसा आभास हुआ कि कोई उनके हृदय रूपी धन को लूट रहा है। वे अपने आप को रोक न सके। प्रसन्न होकर उस ओर देखने लगे जहाँ से यह मीठी आवाज आई थी। कौन कह रहा है, यह जानने की उनमें उत्सुकता थी। अर्थात, श्रद्धा की वाणी की मधुरता में मनु खो गये थे और अपने मन की कुतूहलता को वे दबा नहीं पाए।

विशेषता : उत्प्रेक्षा और पर्यायोक्ति अलंकार है। सा, सुंदर, संगीत, सका : अनुप्रास अलंकार है।

बोध प्रश्न

- मनु ऐसा क्यों लगा कि कोई उसके हृदय रूपी धन को लूट रहा है?

और देखा वह सुंदर दृश्य नयन का इंद्रजाल अभिराम,

कुसुम-वैभव में लगा समान चंद्रिका से लिपटा घनश्याम।

शब्दार्थ : इंद्रजाल = जादू, सम्मोहन। अभिराम = मनोहर। कुसुम वैभव = फूलों का समूह। चंद्रिका = चांदनी। घनश्याम = काले बादल।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा। वे अपने आप को रोक न पाए, सिर उठाकर देखा।

व्याख्या : भ्रमरी गुंजार सी आवाज़ सुनकर मनु अपने आप को रोक न पाए। उनके मन में हलचल हुई कि इस निर्जन प्रदेश में इतनी मीठी सी आवाज किसकी है। वे अपने-आप को रोक न सके। जब अपना सिर उठाकर देखा तो सामने खड़ी सुंदर स्त्री को देख वे दंग रह गए। वह मनु के नेत्रों पर मोहक जादू सी डाल रही थी। वह बहुत ही आकर्षक लग रही थी। उसे देख ऐसा लगता था मानो सुंदर फूलों से लदी कोई लता हो या फिर काले बादलों से घिरी हुई चाँदनी हो।

विशेषता : नयन का इंद्रजाल अभिराम : रूपकातिशयोक्ति है। कुसुम वैभव तथा लता समान : उपमा अलंकार है। चंद्रिका से लिपटा घनश्याम : इसका अर्थ यह नहीं कि वह युवती श्यामवर्ण की थी। कवि का कहना है कि वह सुंदरी नील परिधान पहनी हुई थी, जिसकी उपमा घनश्याम (नीले बादल) से तथा उसके शरीर को चांदनी से दी गई है। "चंद्रिका से लिपटा घनश्याम" यह प्रसाद की मौलिक कल्पना है।

बोध प्रश्न

- उक्त पंक्तियों में प्रयुक्त किसी एक अलंकार का उदाहरण दीजिए।

हृदय की अनुकृति बाह्य उदार एक लंबी काया, उन्मुक्त,

मधु-पवन-क्रीडित ज्यों शिशु साल, सुशोभित हो सौरभ-संयुक्त।

शब्दार्थ : अनुकृति = प्रतिरूप। बाह्य = बाहरी। काया = शरीर। मधु = मधुर, मंद। साल = शाल वृक्ष। सौरभ-सा-युक्त = सुगंधमय। उन्मुक्त = स्वतंत्र।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा। वे अपने आप को रोक न पाए, सिर उठाकर देखा। उस स्त्री के अंग सौंदर्य को आँखों में भरने लगा। नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी। कवि उस स्त्री के वर्णन इस प्रकार करते हैं।

व्याख्या : मनु ने जब सिर उठाकर देखा तो एक सुंदर आकर्षक स्त्री की प्रतिमा उसके सामने खडी थी। उसे लगा कि वह बाहर से जितना आकर्षक व मनमोहक लग रही है, उसका हृदय भी उदारता से भरा होगा। उसकी देह लंबी थी, अर्थात कवि का यह कहना है कि जिस प्रकार उस रमणी का शरीर लंबा और कोमल था, उसका हृदय भी कोमल एवं विशाल होगा। श्रद्धा के मन की सुंदरता उसके मुख पर सुशोभित हो रही थी। उस सुंदरी का शरीर देख मनु को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे सुगंध से भरा शाल वृक्ष जो बसंती के झोंकों से हिलोरें लेता हुआ झूम रहा है।

विशेषता : श्रद्धा के बाह्य सौंदर्य को उसके आंतरिक शरीर का प्रतिरूप बताया गया है। लंबी काया =शरीर ही लंबा नहीं बल्कि उसकी आत्मा भी उदार थी, शिशु साल- श्रद्धा कन्या होने की सूचना देता है। अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा अलंकार है।

बोध प्रश्न

- श्रद्धा का मन कैसा था?

मृसण, गांधार देश के नील रोम वाले मेषों के चर्म,

ढँक रहे थे उसका वपु कांत बन रहा था वह कोमल वर्म।

शब्दार्थ : मृसण = कोमल। मेष = भेड़। चर्म = चमड़ा। वपु = शरीर। कांत = सुंदर। वर्म = कवच। नील = नीली। रोम = बाल।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : अचानक इस प्रकार एक स्त्री की ध्वनि उस निर्जन प्रदेश में सुनकर मनु को जैसे झटका लगा। वे अपने आप को रोक न पाए, सिर उठाकर देखा। उस स्त्री के अंग सौंदर्य को आँखों में भरने लगा। नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी। मनु बस उस स्त्री को देखते रह जाता है। उसकी सुंदरता का वर्णन कवि के शब्दों में देखते ही बनता है।

व्याख्या : उस रमणी का रूप वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि उस नारी का कोमल शरीर गांधार देश के चिकने नील रोमवाले भेड़ों के चमड़े से ढका हुआ था और वही उसके शरीर का रक्षा कवच था।

विशेषता : गांधार देश पेशावर से आगे का क्षेत्र है जिसका कुछ भाग अब पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान में आता है। आजकल गांधार को कंदहार कहते हैं। वहाँ की लंबी रोम वाली चिकनी भेडें बहुत प्रसिद्ध हैं। मृसण गांधार देश के नील - के माध्यम से कवि स्पष्टत: कहना चाहते है कि युवती जितनी सुकुमार थी उसके वस्त्र भी उतने ही कोमल और सुकुमार थे। परिणाम और स्वभावोक्ति अलंकार है।

नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मुदुल अधखुला अंग,

खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघवन बीच गुलाबी रंग॥

शब्दार्थ : परिधान = वस्त्र। मृदुल = कोमल। मेघवन = बादल रूपी वन।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी। मनु बस उस स्त्री को देखते रह जाता है। उसकी सुंदरता का वर्णन कवि के शब्दों में देखते ही बनता है। नीले वस्त्र के बीच उसका यौवन झाँक रहा था। कवि उसका वर्णन अत्यंत सुंदर शब्दों में करते हैं।

व्याख्या : नील वर्ण के उस मेष चर्म से बने वस्त्र के बीच कहीं उसका सुंदर सुकुमार शरीर दिख रहा था। सुकुमार शरीर, कोमल और मृदुल अंग इस प्रकार शोभित था जैसे कि काले बादलों के वन में गुलाबी रंग की बिजली का फूल खिला हो।

विशेषता : श्रद्धा के कोमल शरीर का सुंदर वर्णन हुआ है। नीले रंग के चमड़े के बीच झांकते गुलाबी अंग में चित्रात्मकता है। हर्ष और रति भाव है। अधखुला अंग : निरंगरूपक है। ज्यों बिजली के फूल : उत्प्रेक्षा अलंकार।

बोध प्रश्न

- 'बिजली के फूल' में किस अलंकार का प्रयोग हुआ है?

खिला वह मुख! पश्चिम के व्योम बीच जब घिरते हों घनश्याम,

अरुण रवि-मंडल उनको भेद दिखाई देता हो छविधाम।

शब्दार्थ : व्योम = आकाश। अरुण = सूर्य। लाल = सूर्य की लाल किरणें जो मन को मोह लेती हैं। घनश्याम = काले-काले बादल। रविमंडल = सूर्य मंडल। भेद = चीरना/ अंतर। छविधाम = सौंदर्य का निलय। श्याम = काले।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : नील परिधान में युवती की सुंदरता मादकता उत्पन्न कर रही थी। मनु बस उस स्त्री को देखते रह जाता है। उसकी सुंदरता का वर्णन कवि के शब्दों में देखते ही बनता है।

व्याख्या : मनु उस युवती की सुंदर काया और मनोहर मुख को देख कर कहते हैं- "आह, खिला-खिला वह मुख, उस सुंदर मुख का वर्णन तभी संभव है जब पश्चिम के आकाश में काले-काले मेघ घिर रहे हों और उनके बीच में से लाल-लाल सुंदर सूर्य का बिंब निकलता दिखाई दे।

विशेषता : रमणी के मुख के लिए 'अरुण रवि' और काले बादल के लिए 'घनश्याम' कहा गया है। रमणी अर्थात श्रद्धा का मुख सूर्य मंडल की भांति जगमगा रहा था। वस्तुत्प्रेक्षा अलंकार है। कुछ विद्वान इसे अद्भुतोपमा कहते हैं, और कुछ अतिशयोक्ति भी कहते हैं। "आह वह मुख" : मनु का विस्मय सूचक है।

बोध प्रश्न

- 'अरुण रवि-मंडल' से क्या अभिप्राय है?

या कि, नव इंद्रनील लघु श्रृंग फोड़ कर धधक रही हो कांत-

एक लघु ज्वालामुखी अचेत माधवी रजनी में अश्रांत।

शब्दार्थ : इंद्रनील = नीलम का रत्न। लघु = छोटी। श्रृंग = पहाड़। फोड़ = चीरना/तोड़ना। धधक= अंगारे की भांति। अचेत = सुप्त। माधवी = बसंत। अश्रांत = न थकी, निरंतर। रजनी = रात्रि।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित आधुनिक हिंदी महाकाव्य 'कामायनी' के श्रद्धा सर्ग से उद्धृत किया गया है।

प्रसंग : श्रद्धा की सुंदरता के वर्णन में कवि कल्पना लोक में विचरने लगता है और अलग-अलग उपमा ढूँढकर लाता है। उसकी सुंदरता का वर्णन करते हुए कवि का शायद मन नहीं भरा हो।

व्याख्या : अथवा, मनु को यौवन की शोभा से आलोकित श्रद्धा का मुख ऐसा लग रहा था मानो वह कोई नीलम का रत्न हो जो छोटे से पहाड़ को भेदती हुई बसंत ऋतु की रात में फूट रही कोई ज्वालामुखी की लपटें हों जो अंदर ही अंदर धधक रही हों।

विशेषता : छोटा पहाड़ उसकी आयु की ओर इंगित करता है, जो कि कम उम्र की है। कवि की कल्पना अप्रतिम है ज्वालामुखी पर्वत तो प्रसिद्ध है, परंतु नीलम का शिखर प्रसिद्ध नहीं। नीले बालों से घिरा सिर ही नीलम के शिखर के रूप में कल्पित है। उसके मुख का उज्ज्वल भाग ज्वालामुखी की फूटी ज्वाला है। नायिका का शेष शरीर वसंत ऋतु की चांदनी रात के रूप में संभावित है। यहां भी पूर्ववत असंबंध में संबंध-रूपा अतिशयोक्ति है। अभी तक कवि ने केशों का वर्णन नहीं किया है, हो सकता है इसके आगे के छंदों में हो। श्रद्धा के रूप का इससे सुंदर वर्णन प्राय: ही संभव हो। ज्वालामुखी-प्रतीकात्मक है, अर्थात स्त्री की सुंदरता हमेशा से ही आग लगा देने का कार्य करती है। यहाँ श्रद्धा न केवल आग लगाने का काम कर रही है बल्कि ज्वालामुखी सा मनु के मन को पूरी तरह से अपनी ओर खींच रही है।

बोध प्रश्न

- इंद्रनील का क्या अर्थ है?

10.4 पाठ सार

जयशंकर प्रसाद ने पूरे विश्व को मानवता का संदेश दिया है। मानव को अपना जीवन किस प्रकार व्यतीत करना चाहिए, इसका प्रतिपाद्य 'कामायनी' में हुआ है। इच्छा, ज्ञान और क्रिया का संतुलन अनिवार्य है, तभी जीवन में समरसता की स्थापना हो सकती है। आनंद के बिना मनुष्य का जीवन शून्य के बराबर है। सुख-सुविधा के सारे साधन उपलब्ध होने पर भी यदि जीवन में आनंद नहीं हो तो ऐसे सुख सुविधा के होने का क्या लाभ। हृदय और बुद्धि का संतुलन आवश्यक है। मानव संवेदनशील होकर अपना जीवन व्यतीत करें, मानव कुल की रक्षा तभी संभव है। आपसी प्रेम, सौहार्द, भाईचारे से ही वसुधैव कुटुम्बकम की स्थापना की जा सकती है। आपसी भेदभाव को मिटाकर एक दूसरे के साथ समरस पूर्ण जीवन कामायनी का मूल प्रतिपाद्य है।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'कामायनी' जयशंकर प्रसाद का प्रतिनिधि महाकाव्य है।

2. इसमें मनु, श्रद्धा और इडा के पौराणिक आख्यान के माध्यम से मनुष्य जाति और मनुष्यता के मनोवैज्ञानिक विकास की गाथा कही गई है।
3. 'कामायनी' के तीनों केंद्रीय पात्र क्रमशः मन, रागात्मक वृत्ति और व्यावसायिक बुद्धि के प्रतीक हैं। इन तीनों का सामंजस्य ही इस काव्य का मूल उद्देश्य है, जिसे समरसता कहा गया है।
4. चिंता सर्ग में कवि ने देव जाति के अबाध भोग-विलास के कारण हुई जल प्रलय के बाद बचे रह गए मनु के मानसिक द्वंद्व का चित्रण किया है।
5. श्रद्धा सर्ग में मनु की भेंट काव्य नायिका श्रद्धा से होती है, जो मनु को मानसिक द्वंद्व और अकर्मण्यता छोड़कर सकारात्मकता का संदेश देती है।

10.6 शब्द संपदा

1. इंगित करना = सूचित करना
2. प्रत्यभिज्ञा दर्शन = काश्मीरी शैव दर्शन की एक शाखा, शाब्दिक अर्थ- पहले से देखे हुए को पहचानना
3. महाचिति = आत्मा (प्रत्यभिज्ञा दर्शन के अनुसार)
4. लाक्षणिक = लक्षणा शब्द शक्ति, जिससे लक्षण प्रकट हो
5. वक्रता = कुटिलता और धूर्तता
6. शैथिल्य = शिथिल, नष्ट
7. हृदयांतराल = हृदय के अंदर

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'कामायनी' का कथानक अपने शब्दों में लिखिए।
2. चिंता सर्ग का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।

3. प्रसाद ने श्रद्धा सर्ग में कामायनी की सुंदरता का वर्णन किस प्रकार किया है? अपने शब्दों में लिखिए।
4. 'कामायनी' शीर्षक आपके अनुसार क्या ठीक है? या कोई अन्य नाम दिया जा सकता था? तर्क सहित उत्तर लिखिए।
5. 'कामायनी' की काव्यगत सौंदर्य पर प्रकाश डालिए।
6. क्या 'कामायनी' को आधुनिक युग के महाकाव्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है? कारण स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मनु की चिंता का मूल कारण क्या है?
2. मनु का चरित्र वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. इडा के बारे में अपने शब्दों में लिखिए।
4. श्रद्धा सर्ग की विशेषताओं को अपने शब्दों में लिखिए।
5. ओ चिंता की पहली रेखा, अरी विश्व-वन की व्याली,/ ज्वालामुखी स्फोट के भीषण प्रथम कंप-सी मतवाली! इन पंक्तियों की व्याख्या कीजिए।
6. विस्मृति आ, अवसाद घेर ले, नीरवते ! बस चुप कर दे,/ चेतनता चल जा, जड़ता से आज शून्य मेरा भर दे। इन पंक्तियों की व्याख्या कीजिए।
7. कौन तुम? संसृति-जलनिधि तीर-तरंगों से फेंकी मणि एक,/ कर रहे निर्जन का चुपचाप प्रभा की धारा से अभिषेक॥ इन पंक्तियों की व्याख्या कीजिए।
8. नील परिधान बीच सुकुमार खुल रहा मुदुल अधखुला अंग,/ खिला हो ज्यों बिजली का फूल मेघवन बीच गुलाबी रंग॥ इन पंक्तियों की व्याख्या कीजिए।
9. चिंता सर्ग की कथा को अपने शब्दों में लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. श्रद्धा का शाब्दिक अर्थ - ( )

(अ) इच्छा का घर (आ) गर्भवती स्त्री (इ) दोनों

2. कामायनी का अर्थ - ( )

(अ) इच्छा का घर (आ) नदी का तट (इ) कोई नहीं

3. घनश्याम ( )

(अ) काले-काले बादल (आ) सफेद बादल (इ) इनमें से कोई नहीं

4. कामदेव की पुत्री - ( )

(अ) कामायनी (आ) श्रद्धा (इ) दोनों

5. प्रत्यभिज्ञा दर्शन ( )

(अ) समरसता (आ) आनंदवाद (इ) दोनों

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. भारतीय मिथक के अनुसार ....प्रेम की देवता है।
2. मनु को.............................. ने शाप दिया।
3. मनु..........................के उत्तुंग शिखर पर बैठे थे।
4. मनु नीचे.........................को देख रहे थे।
5. जलप्रलय का मूल कारण .... की विलासपूर्ण जीवन था।

III. सुमेल कीजिए -

1. मनु	(अ) बुद्धि का प्रतीक
2. सारस्वत प्रदेश	(आ) कामायनी का अंतिम सर्ग
3. इडा	(इ) मन का प्रतीक
4. मानव	(ई) सरस्वती नदी का तट

5. आनंद (उ) श्रद्धा का पुत्र

10.8 पठनीय पुस्तकें

1. कामायनी : जयशंकर प्रसाद
2. प्रसाद और कामायनी (मूल्यांकन का प्रश्न) : नगेंद्र
3. कामायनी विमर्श : हरिचरण शर्मा
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : नगेंद्र
5. कामायनी - कामायनीकार का रचना जगत और प्रत्यय : सुरेंद्र

इकाई 11 : निराला : एक परिचय

रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 मूल पाठ : निराला : एक परिचय

11.3.1 जन्म, पालन-पोषण और विवाह

11.3.2 निराला का व्यक्तित्व

11.3.3 निराला की साहित्यिक यात्रा

11.3.4 निराला जी का रचना संसार

11.3.4.1 कृतित्व विवेचन

11.3.4.2 निराला : गीतकार

11.4 पाठ सार

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

11.6 शब्द संपदा

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

जीवनद्रष्टा अनेक हुए हैं, जीवन से निराश होकर मृत्यु को आमंत्रण देनेवालों की भी कमी नहीं हैं लेकिन मृत्यु से पंजा लड़ाकर, जीवन के अनेक कष्टों के सामने डटकर खड़े रहनेवालों की कमी तो हैं। इसी कारण से ऐसे मनुष्यों को ‘मृत्युंजय’ कहा जाता है। निराला ऐसे ही ‘मृत्युंजय कवि’ कहलाते हैं। श्रीमती महादेवी वर्मा ने कहा था ‘उनका व्यक्तित्व उनके काव्य से कम निराला नहीं है। वह अत्यंत जटिल और बहुत से विरोधों का सामंजस्य है।’ प्रस्तुत इकाई में आप

अध्ययन करेंगे कि निराला पर वेदांत और स्वामी विवेकानंद का कितना प्रभाव था? इसके साथ ही साथ उन्होंने तुलसीदास हो या कालिदास या फिर बंगाल के सुप्रसिद्ध कवि चंडीदास, कैसे इन सब कवियों को निराला ने अपनी मौलिकता के द्वारा भिन्न प्रकार से न केवल समझ बल्कि उसे पाठकों तक भी पहुँचाया।

11.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- निराला के व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- निराला के जीवन संघर्ष से अवगत हो सकेंगे।
- निराला की रचना-यात्रा को समझ सकेंगे।
- निराला के साहित्य की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में निराला के महत्व से परिचित हो सकेंगे।

11.3 मूल पाठ : निराला : एक परिचय

11.3.1 जन्म, पालन-पोषण और विवाह

भरे-पूरे परिवार में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' जी का जन्म हुआ था। अवध में अपना गाँव छोड़कर यह परिवार बंगाल की एक सियासत महिषादल में जाकर बस गया था। वन, प्रकृति, आम, नारियल, कटहल, बाँस के पेड़, तालाब, नदियां, बेला, जुही, हरसिंगार सब कुछ था लेकिन जनता भूखी थी। इसी स्थान पर वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में बालक सूर्यकुमार का जन्म हुआ था। उनके पिता का नाम पंडित रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमाण्डर जमादार थे। उनके पिता ने दो विवाह की था। दूसरी पत्नी से निराला का जन्म हुया था लेकिन बालक निराला केवल तीन वर्ष के ही थे उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित पिता के अत्यधिक कठोर अनुशासन में निराला का पालन-पोषण होने लगा। डॉ. रामविलास शर्मा ने अपनी 'निराला' नामक कृति में निराला जी की स्मृतियों का उन्हीं के मुख से वर्णन करवाते हुए लिखा है - 'मारते वक्त पिताजी इतने तन्मय हो जाया करते थे कि उन्हें भूल जाता था कि दो विवाहों के बाद पाए हूए एकलौते पुत्र को मार रहे थे। मैं स्वयं भी स्वभाव न बदलने के कारण मार खाने का आदि हो गया था। चार-पाँच साल की उम्र में अब तक

एक ही प्रकार के प्रहार पाते-पाते सहनशील हो गया था और प्रहार की हद भी मालूम हो गई थी।' पिता से निराला को भले ही कठोर अनुशासन मिला पर यह नहीं कहा जा सकता कि पिता ने उनका ध्यान नहीं रखा। महिषादल राज्य बांग्ला-भाषी-प्रदेश था इसी कारण से निराला की आरंभिक शिक्षा बांग्ला भाषा में ही शुरू हुई। शिक्षा के साथ-साथ निराला जी को व्यायाम करने और कुश्ती लड़ने का भी शौक था। वे घुड़सवारी भी किया करते थे।

बंगाल की धरती का एक विशेष गुण है वहाँ की संगीत साधना। निराला में भी इस विशेष गुण का संचार बचपन से ही होने लगा था। वे संगीत साधना भी करते थे। बालक निराला रामायण की चौपाईयाँ अपने सैनिक साथियों के साथ गा-गाकर पढ़ने में पारंगत हो चुके थे। निराला जी के स्वभावगत वैचित्र्य के संबंध में डॉ. विश्वम्भरनाथ उपाध्याय लिखते हैं, 'वैचित्र्य निराला जी की मुख्य पहचान है। जो इन्हें स्वभावतः जन्म से ही प्राप्त हुआ। शरीर, मेधा, साधना सब वैचित्र्यपूर्ण। जो बालक परीक्षा की कापी पर पद्माकर के चुहचुहाते छन्द लिख सकता है, पिता द्वारा बार-बार पिटे जाने पर भी दुराग्रह की रक्षा कर सकता है, जिसने जीवन में कविता के क्षेत्र में क्या कुश्ती के अखाड़े में भी कभी मुँह की न खाई, जो शिशु अवस्था में ही सारे वातावरण के लिए कौतूहल का विषय बनता है, जो एक साथ संगीतज्ञ, पहलवान, कवि, भाषाविद और दार्शनिक के ढाँचे में डाला नहीं जाता है, वह व्यक्तित्व असाध ही होगा'। इतना सब कुछ भी होने के बाद भी निराला ने कक्षा 9 के आगे पढ़ाई नहीं की। निराला ने स्वयं इस बारे में स्वयं ही लिखा है, 'मैं कवि हो चल था। फलतः पढ़ने की आवश्यकता न थी। प्रकृति की शोभा देखता था। कभी-कभी लड़कों को भी समझाता था कि इतनी बड़ी किताब सामने पड़ी है... किताब उठाने पर और भी होता था, रख देने पर दुने दबाव से फेल हो जाने की चिंता, फलतः कल्पना पृथ्वी-अंतरिक्ष पार करने लगी। कल्पना की वैसी उड़ान आज तक नहीं उठी।'

निराला का विवाह केवल 14 वर्ष की अवस्था में ही हो गया था। इनकी पत्नी का नाम मनोहरा देवी था। पत्नी के कारण से निराला के व्यक्तित्व में काफी परिवर्तन आया। हिंदी काव्य रचना के क्षेत्र में अपनी पत्नी की प्रेरणा से ही वे आए थे। डॉ. बच्चन सिंह का लिखना है, 'सूर्यकांत त्रिपाठी को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में रत्नावली का'। पर दुखद बात यह है कि निराला केवल 21 वर्ष के थे उसी समय एक पुत्र और पुत्री उपहार स्वरूप

देकर एनफ्लुएंजा की बीमारी में उनकी पत्नी का देहांत हो गया। इसके बाद से ही निराला के जीवन का असली संघर्ष शुरू हुआ और यह संघर्ष जीवन भर चलता रहा।

बोध प्रश्न

- निराला के पिता का नाम क्या था?
- निराला का जन्म किस दिन हुआ?
- निराला का पत्नी का नाम क्या था?
- हिंदी काव्य क्षेत्र में किसके प्रेरणा से निराला का पदार्पण हुआ?

11.3.2 निराला का व्यक्तित्व

निराला का जन्म ऐसे घर में हुआ था जहाँ लोग राम और कृष्ण के उपासक थे। सामाजिक बंधनों और नियमों को महत्व प्रदान किया जाता था और किसी भी प्रकार के विद्रोहों से यह परिवार बहुत दूर रहता था। लेकिन 'निराला' में बचपन से ही जिज्ञासा, विद्रोह और नवीन के प्रति आकर्षण के कोई कमी नहीं थी। सन् 1920 तक रवींद्रनाथ ठाकुर केवल बंगाल में ही नहीं समूचे भारत में महाकवि और विश्व कवि के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। बंग-भंग आंदोलन का रवींद्रनाथ पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। वे नए राष्ट्रीय आंदोलन के समर्थक थे और चाहते थे कि सभी साहित्यकार नए राष्ट्रीय आंदोलन को आगे बढ़ाए। 'निराला' पर रवींद्रनाथ के विचारों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सहयोग से 'समन्वय' का संपादकत्व प्राप्त करने के बाद निराला ने राम कृष्ण परमहंस की 'भाव-साधना' और विवेकानंद के व्यावहारिक अद्वैतवाद का गहन अध्ययन किया था। एक और रवींद्रनाथ की राष्ट्रीय विचारधारा तो दूसरी ओर परमहंस और विवेकानंद की दार्शनिकता का प्रभाव सब कुछ मिलाकर निराला का व्यक्तित्व अपने आप में अनोखा बन चुका था। डॉ. धनंजय वर्मा जी का निराला के व्यक्तित्व के बारे में कहना था कि, 'प्रतिभा, पांडित्य, तर्क-शक्ति और संगीत के साथ सुदृढ़, सबल और ऊंचा सुंदर शरीर जैसा विवेकानंद का था उससे काम निराला का नहीं। स्वामी जी अपने शैशवावस्था में जीवन के स्वच्छंद, अविराम प्रवाह के हिमायती थे और निराला का तो यह जन्म-जात स्वभाव रहा है'।

साहित्यकार के रूप में भी निराला मस्त मौला और फक्कड़ थे। साहित्य उनकी आजीविका का साधन भी थी लेकिन उन्होंने अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए साहित्य साधन की

गुणवत्ता के साथ समझौता नहीं किया। उन्होंने इस विषय में स्वयं ही लिखा है, 'साहित्य मेरे जीवन के उद्देश्य है, जीने का नहीं। यह सच है कि मैं जीता भी अपने साहित्य से हूँ, किंतु वह मेरे जीवन का साधन मात्र नहीं। जो मैं नहीं लिखना चाहता, वह चाहे भूखों मार जाऊँ, नहीं लिखूँगा और जो मैं लिखना चाहता, वह लाखों रुपए के बदले में भी उसे न लिखने की बात न सोचूँगा'। साहित्यकार के रूप में उनकी सबसे पहली विशेषता है- उनका निर्माणकौशल। किसी भी रोमांटिक कवि में विषय वस्तु पर ऐसा दृढ़ नियंत्रण न मिलेगा, जैसा निराला में देखने को मिलता है। चाहे छोटा गीत हो, चाहे मुक्तक या फिर 'राम की शक्तिपूजा' जैसी नाटकीय कविता, उनका विषय निर्वाह देखते ही बनता है। 'जुही की कली में' जुही के स्नेह-स्वप्नमग्न होने से लेकर 'खिली खेल रंग, प्यारे संग' की परिणति का पूरा चित्र है। साहित्यकार के रूप में उनकी दूसरी विशेषता है- उनकी चित्रमयता। उनकी भाषा भले ही जहाँ-तहाँ कठिन हो लेकिन जहाँ वे चीते आँकते हैं वहाँ उनकी रूपरेखा बहुत ही स्पष्ट और सौंदर्य आकर्षक बनने लग जाता है। इन चित्रों में प्रकृति के दृश्य, नारी-पुरुष की भंगिमाएँ, मत आदि के प्रतीक सभी अपनी रूपमयता से पाठक को मुग्ध करने में सक्षम है। साहित्यकार के रूप में उनकी तीसरी विशेषता है- न्यूनतम रूप सामग्री का उपयोग। निराला ने अपनी रचनाओं में कहीं भी बात को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं कहा। गद्य हो चाहे पद्य उनकी शब्द योजना हमेशा गठी हुई रही। निराला ने कल्पना और यथार्थ दोनों का सहारा लिया लेकिन विषय को अकारण जटिल नहीं बनने दिया। निराला ने साहित्यकार के रूप में हिंदी भाषी जनता को जिस प्रकार से सांस्कृतिक विकास के साथ जोड़ा यह उनका युगांतकारी योगदान ही है। निराला के रचनाकाल के समय में दूसरी भाषाओं के लोगों से अक्सर यह सुनने को मिलता था 'हिंदी में क्या है?' निराला ने इस मनोवृत्ति के विरुद्ध संघर्ष किया। उन्होंने नवीन शैलियों की सृष्टि की। जहाँ उन्होंने 'जुही की कली' में 'मुक्त छंद' को अपनाया वहीं 'गीतिका' में ऐसे गीतों को लिखा जहाँ पाठक को प्रत्येक शब्द के साथ धीरे-धीरे आगे बढ़ना होता है। जैसे एक पंक्ति देखिए-

'प्रात तव द्वार पर,
आया जननि नैश अंध पथ पार कर'-

अंग्रेजी में 'एनजैबमेंट' की एक परंपरा है अर्थात, एक पंक्ति से दूसरी पंक्ति में बिना विराम पहुँच जाना, निराला ने इस शैली को भी अपनाया। जिससे हिंदी कविता की दिशा ही बदल गई। 'सरोज स्मृति' की निम्न पंक्तियों को यहाँ देखना तर्कसंगत होगा-

'इससे पहले आत्मीय स्वजन

सस्नेह कह चुके थे, जीवन

सुखमय होगा, विवाह कर लो

जो पढ़ी-लिखी हो-सुंदर हो'।

उन्होंने हिंदी साहित्य को समृद्ध करने के लिए नए प्रयोग तो किए ही साथ ही साथ उन्होंने अपने ही देश के उन नेताओं के साथ भी लोहा लिया जो हिंदी को घृणा की दृष्टि से देखते थे। निराला विद्रोह और परिवर्तन के कवि रहें व्यक्तिगत जीवन को या साहित्यिक उन्होंने अन्याय, अविचार आदि के सामने कभी अपना सर नहीं झुकाया।

बोध प्रश्न

- निराला के घर के वातावरण कैसा था?
- निराला का स्वभाव बचपन से ही कैसा था?
- निराला किनके विचारों से प्रभावित थे?
- साहित्यकार के रूप में निराला का व्यक्तित्व कैसा था?

11.3.3 निराला की साहित्यिक यात्रा

विद्यार्थियो! अभी ऊपर के खंड में हमने पढ़ा निराला अपनी जीविका के लिए साहित्य रचना पर निर्भर थे लेकिन अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वे साहित्य रचना के साथ समझौता करने को तैयार नहीं थे। ऐसे में आसानी से यह समझा जा सकता है कि जब उन्होंने साहित्य साधना के क्षेत्र में प्रवेश किया तो उन्हें कितने संघर्षों का सामना करना पड़ा होगा। उनकी रचना 'जूही की कली' को प्रतिष्ठित संपादकों ने कई बार अस्वीकृत कर दिया। सन् 1935 में निराला ने सुमित्रानंदन पंत के ऊपर बड़ा सुंदर लेख लिखा था लेकिन वह कभी छप नहीं सका। इसी तरह से पं. महावीरप्रसाद द्विवेदी पर भी उनके द्वारा लिखित संस्मरणात्मक

आलेख सदा के लिए बिना छपे ही नष्ट हो गया। संपादकों द्वारा वापस किए गए रचनाओं का जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा है -

“लौटी रचना लेकर उदास,
ताकता हुआ मैं दिशाकाश,
बैठ प्रांतर में दीर्घ प्रहर,
व्यतीत करता था गुण गुण कर,
संपादक के गुण; यथाभ्यास,
पास की नोचता हुआ घास,
अज्ञात फेंकता इधर-उधर,
भाव की चढ़ी पूजा उन पर”

सन् 1920 की ‘सरस्वती’ में बांग्ला और हिंदी व्याकरण पर उनका एक तुलनात्मक आलेख प्रकाशित हुआ था। यह अपने आप में परिमार्जित पुष्ट आलेख था। यहाँ से निराला जी को पहचान मिली। इसके बाद ज्ञान-मंडल काशी में काम दिलाने के लिए सन् 1921 में महावीरप्रसाद द्विवेदी जी ने कोशिश की थी। इसलिए निराला के साहित्य जीवन का आरंभ सन् 1920 से मानना गलत न होगा। सन् 1923 में ‘मतवाला’ निकला और उसमें वे ‘निराला’ नाम के साथ ही साथ श्रीमान गरगजसिंह वर्मा, साहित्य शार्दूल, जनाबआली नाम से रचनाएँ लिखा करते थे। कवि सम्मेलनों में भी वे अब जाने लगे थे। सुधा, माधुरी आदि के कारण उन्हें पारिश्रमिक भी मिलने लगा था लेकिन फिर भी उनकी मौलिक पुस्तकें अभी तक नहीं आई थी। उनकी पहले कविता संग्रह सन् 1929 में प्रकाशित हुई। इस तरह से सन् 1919 से 1929 तक उन्हें 10 साल पुस्तक प्रकाशन के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ी। डॉ. रामविलास शर्मा ने निराला के काव्य साधना को लेकर ‘राग-विराग’ नामक पुस्तक का संपादन किया था। शर्मा जी ने कविवर निराला की समूची काव्य यात्रा को प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से तीन भागों में विभाजित किया था। सन् 1921 से लेकर सन् 1936 तक पहला पड़ाव।

दूसरा पड़ाव सन् 1937 से लेकर सन् 1946 तक चलता रहा। 1946 से लेकर 1950 तक के समय में निराला ने कुछ समय तक साहित्य रचना से अवकाश लिया। सन् 1950 से लेकर 1961 तक का कालखंड उनका तीसरा पड़ाव रहा। सन् 1931 के आरंभ में निराला का पहला उपन्यास 'अप्सरा' प्रकाशित हुआ। 'अप्सरा' में आजकल के सिनेमा-कथानकों के बहुत से गुण मौजूद है। रोमांस के साथ देश सेवा का भाव भी विद्यमान है। विरोधियों के विरोध के बाद भी 'अप्सरा' को काफी लोकप्रियता मिली। दूसरे महायुद्ध का समय निराला जी के प्रयोगों का समय रहा है। इस काल सम्पूर्ण विश्व और भारत ने बहुत कुछ देखा। बंगाल में ऐसा अकाल पड़ा जो कभी किसी ने न देखा और न सुना। सन् 1942 में अंग्रेजों ने कांग्रेसी नेताओं को जेलों में ठूसना शुरू किया, साहित्यकारों पर भी पावंदी बढ़ने लगी। बहुत सारे साहित्यकारों ने लिखना भी बंद कर दिया और कुछ नए प्रयोग करने लगे। ऐसे समय 'निराला' कैसे लिखना बंद कर सकते थे। उन्होंने भी 'व्यंग्यात्मक शैली' में शुरू किया। उनकी व्यंग्यात्मक शैली में रचित रचनाओं में 'कुकुरमुत्ता' की विशेष चर्चा हुई। उनसे पहले किसी ने 'कुकुरमुत्ता' को विषय बनाकर न तो लिखने के बारे में सोच और न ही 'कुकुरमुत्ता' को शीर्षक बनाने का साहस किसी ने दिखाया। यह काम तो केवल 'निराला' ही कर सके। देखिए पंक्तियाँ -

'एक थे नव्वाब,
फ़ारस से मंगाये थे गुलाब।
बड़ी बाड़ी में लगाए
देशी पौधे भी उगाए
रखे माली कई नौकर
गज़नवी का बाग मनहर
लग रहा था'

'मैं कुकुरमुत्ता हूँ,
पर बेन्ज़ाइन वैसे
ओमफलस और ब्रह्मावर्त

वैसे ही दुनिया के गोले और पर्त
जैसे सिकुड़न और साड़ी,
ज्यों सफाई और माड़ी
कास्मोपालीटन और लीटन।
जैसे फ्रायड और लीटन।
फेलसी और फलसफा।
जरूरत हो और रफ।
सरसता में फ्राड
केपीटल में जैसे लेनिनग्राड
सच समझ जैसे रकीब
लेखकों में लंठ जैसे खुशनसीब'।

इतना ही नहीं इलाहाबाद में विद्यार्थियों पर पुलिस का आक्रमण होने पर उन्होंने कजली गीत लिखी -

'युवक जनों की है जान खून की होली जो खेली'।

यह गीत इस बात का भी संकेत है कि वे एक सफल जनगीतकार भी थे। 'यद्यपि निराला जी युद्धकालीन नई रचनाओं में पहले के स्केचों और कहानियों जैसे स्पष्टता नहीं है, फिर भी राजनीतिक उलझन में कवि की चेतना किसका साथ दे रही है और किस जीवन को अपने साहित्य का लक्ष्य बना रही है, यह स्पष्ट है।' निराला जी के साहित्य को देखकर यह कहना गलत न होगा कि 'निराला जी के विकास की समूची परंपरा हमें सिखाती है कि इस ज्वार के साथ बढ़कर परिवर्तन की शुभ घड़ी लाने के लिए हिंदी लेखकों और कवियों को आगे बढ़ना है'।

ये तो हुई पद्य की बात। निराला का गद्य साहित्य भी विविधता से भरा हुआ है। यहाँ इस विषय को बताना आवश्यक है कि निराला के गद्य लेक उनकी कविताओं से पहले ही प्रकाशित होने लगे थे। 'सरस्वती' में बांग्ला और हिंदी के व्याकरण की तुलना करते हुए उन्होंने इस बात

की पहले ही सूचना दे दी थी कि बंगला के माधुरी प्रशंसक होते हुए भी वे हिंदी के सम्मान की बराबर रक्षा करेंगे। उनका दूसरा महत्वपूर्ण गद्य लेख बंगाल के ही एक कवि श्री चंडीदास पर था। 'प्रबंध प्रतिमा' में इसका रचनाकाल सन् 1920 दिया गया है। निराला के गद्य में एक ओर छायावादी रोमांटिक भाव बोध है तो दूसरी ओर प्रगतिशील चेतना के यथार्थवादी प्रवृत्ति का संस्कार भी है। निराला का गद्य अन्य छायावादी कवियों के गद्य से अलग है। निराला का गद्य बुद्धिप्रवण और तर्कमूलक है। रामविलास शर्मा का इस संदर्भ में कहना है कि, 'गद्य लेखक निराला ने बालमुकुंद गुप्त और प्रेमचंद की परंपरा को और ऊँचा उठाया है। उसने गद्य लेखन को काव्य रचना के समान ही सरस और कलापूर्ण बना दिया है। हिंदी भाषा की नई क्षमता निराला के गद्य में पर हुई'। निराला के गद्य साहित्य में बंगाल के नवजागरण के चेतना के प्रभाव को स्वाभाविक रूप में देखा जा सकता है।

शिवकुमार मिश्र ने अपने लेख 'निराला और नवजागरण' में लिखा है, 'हिंदी में नवजागरण की चेतना के सबसे पहले प्रवक्ता थे भारतेंदु हरिश्चंद्र और कहना न होगा कि बंगाल के सारे प्रभावों के बावजूद निराला हिंदी के उन रचनाकारों में पहली पंक्ति के हकदार हैं, जिन्होंने अपनी जमीन, अपनी रचनात्मक संवेदना और अपने औजारों के बल पर नवजागरण की भारतेंदुकालीन चेतना को एक विरासत के रूप में न केवल संरक्षित किया है, अपने समय की चिंताओं और मुक्ति आंदोलन से जोड़ते हुए उसे समृद्ध और विकसित भी किया है'। निराला के गद्य में भारतेंदु की नवजागरणकालीन चेतना का विकास किस प्रकार से हुआ उसका अंदाज़ा उनके द्वारा समय-समय पर लिखे गए - युगवतर भगवान श्री रामकृष्ण, वर्णाश्रम धर्म की वर्तमान स्थिति, कला और देवियाँ, हिंदू विधवाओं पर अनाधिकार चर्चा, वतर्माण अंडों में महिलाएँ आदि लेखों को पढ़ने से स्वतः ही समझ आ जाता है। निराला ने अपने गद्य साहित्य के द्वारा परंपरा के रूढ़िगत और जड़ पक्ष पर जमकर प्रहार किया। निराला ने समाज में फैले जाति प्रथा का जमकर विरोध किया। 'बिल्लेसुर बकरिहा' उपन्यास के नायक को ब्राह्मण होने के बावजूद उन्होंने बकरी का व्यापार करते हुए दिखाया। निराला ने केवल कथा को लिखा नहीं बल्कि अपने पात्रों के माध्यम से उन्होंने अपने द्वारा झेले गए सामाजिक कुप्रथाओं का नग्न चित्रण करवाया। यह उनके गद्य साहित्य की अपनी अलग विशेषता है।

निराला की कहानियों की चर्चा करते हुए गोपाल राय ने लिखा, 'निराला की कहानियाँ बेहद आत्मपरक हैं। आत्मवृत्ति में कल्पना की चाशनी डालकर समकालीन जीवन पर व्यंग्य करना निराला की अपनी विशेषता कही जा सकती है'। 'चतुरी चमार' कहानी को ही लीजिए। आत्मवृत्त शैली में लिखी गई इस कहानी में निराला ने बेबाक तरीके से सामाजिक रूढ़ियों का पर्दाफाश किया है। निराला ने अपने पात्र से ये कहलवाया, 'समय-समय पर प्यासी, धोबी और चमारों का ब्रह्मा भोज भी चलता रहा। घृतपक्व मसालेदार मानस के खुशबू से जिसकी भी लार टपकी, आप निमंत्रित होने को पूछा। इस तरह मेरा मकान साधारण जनों का अड्डा, बल्कि house of commons हो गया'। निराला ने अपने गद्य साहित्य के द्वारा स्त्री के सबल रूप को अंकित करने का प्रयास बारम्बार किया। 'अलका', 'अप्सरा' आदि उपन्यासों की नायिकाएँ जाने कैसी-कैसी विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हुए अंत में विजयी अवश्य हुई है। यह केवल उनकी विजय नहीं सदियों से कुंठित भारतीय स्त्रियों की ही तो विजय है। यह कहना गलत न होगा कि, 'हिंदी कथा साहित्य में निराला ने छायावादी हीरोइनों का प्रवेश करवाया था।'

बोध प्रश्न

- निराला का पहली कविता संग्रह कब प्रकाशित हुआ?
- निराला जी का पहला उपन्यास कब प्रकाशित हुआ?
- 'राग-विराग' पुस्तक का संपादन किसने किया?

11.3.4 निराला जी का रचना संसार

निराला जी छायावादी काव्य चेतना के प्रमुख आधार स्तंभों में से एक थे। छायावादी काव्य चेतना को अनेक आलोचकों ने इस धरती की वस्तु नहीं माना। पर निराला की रचनाएँ इस धरती की ही वस्तु थी। वास्तव में उनका समस्त व्यक्तित्व उनके व्यापक कृतित्व में समाहित होकर रह गया है। आचार्य नंददुलारे वाजपेयी जी निराला के कृतित्व के समूचे आयाम को एक दृष्टि में देखते हुए विभिन्न चरणों में उसका विभाजन एवं मूल्यांकन इस प्रकार से किया है। वे लिखते हैं, 'निराला जी का काव्य-विकास 'परिमल-गीतिका' तक एक विशेष दिशा का निर्देशक है। उनकी 'राम की शक्ति-पूजा' और 'तुलसीदास आदि वृहत्तर काव्य-रचनाएँ एक दूसरे उत्थान की प्रतिनिधि हैं। 'कुकुरमुत्ता' से लेकर 'बेला' और 'नए पत्ते' निराला जी का काव्य हास्य-व्यंग्य और प्रयोग की धाराओं में प्रवाहित हुआ है। उनका काव्य-निर्माण शांत-रस की भूमिका पर चल

रहा है। भाषा के प्रयोग में भी अनेक परिवर्तन निराला जी ने किए हैं, यद्यपि उनकी एक शृंखला भी बनी हुई है। इन समस्त भिन्नताओं के रहते हुए निराला का काव्य-वैशिष्ट्य किसी सूक्ष्मदर्शी समीक्षक द्वारा ही आकलित हो सकता है। प्रायः लोग उनकी सम्पूर्ण रचनाओं का तारतम्य नहीं जान पाते। विविधता में एकता की पहचान नहीं हो पाती’।

11.3.4.1 कृतित्व विवेचन

‘गीतिका’ और ‘परिमल’ में उनकी प्रारंभिक उपलब्ध कृतियाँ हैं। निराला की कविताएँ केवल गीतात्मक नहीं हैं बल्कि उन्होंने हिंदी गीतों को नई परंपरा प्रदान की है। ‘परिमल’ की रहस्यवादी कविताओं को पढ़ने से विवेकानंद और रवींद्रनाथ का निराला पर कितना प्रभाव था। इसे हम स्वतः देख समझ सकते हैं -

‘कहाँ -

मेरा अधिवास कहाँ?

क्या कहा? -

रुकती है गति जहाँ?

भला इस गति का शेष

संभव है क्या,

करुण स्वर का जब तक मुझमें

रहता है आवेश’?

‘यह मतवाला-निराला’ इस शीर्षक से हरिवंशराय बच्चन ने ‘साप्ताहिक हिंदुस्तान’ और अपने निबंध संग्रह ‘नए-पुराने झरोखे’ में आलेख प्रकाशित किया। इस आलेख के द्वारा बच्चन जी ने निराला के कृतियों का विस्तार से विश्लेषण किया। निराला के प्रथम कविता संग्रह ‘अनामिका’ के बारे में बच्चन जी ने लिखा कि, ‘अनामिका में निराला दो सुस्पष्ट, विभिन्न परंपराओं के अंतर्गत सृजन करते दिखाई पड़ते हैं- एक समृद्ध, परिपक्व, सुस्थिर, दूसरी निस्तेज कल की ओर प्रयोगात्मक एक बंगाली साहित्य की परंपरा, जिसमें रवींद्र और नजरुल रचनाएँ कर रहे थे और दूसरी द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता - जिसका परिचय उन्होंने ‘सरस्वती’ से प्राप्त किया था’।

बच्चन जी ने निराला और पंत के लेखकीय गुणों के बीच तुलनात्मक अध्ययन भी किया और निष्कर्ष रूप में उन्होंने यह कहा भी कि छायावाद काल में भले ही पंत सबके लोकप्रिय कवि रहे हो लेकिन निराला ने छायावाद से बाहर आकर जिस प्रकार से प्रगतिवाद की जड़ों को सबल बनाया उसके लिए प्रत्येक प्रगतिवादी कवि उनका चिर ऋणी रहेगा। निराला विप्लव के भी कवि रहें। उनके विप्लव में वेदान्त की झलक को भी देखा जा सकता है। निराला ने मायारूपी संसार पर सबसे पहले विजय पाने की बात कही। इस संदर्भ में विप्लवी बादल की ओर हाथ उठाए खड़े कृषक के चित्र को देखना तर्कसंगत होगा -

'जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ विप्लव के वीर'!

'सरोज स्मृति' में जिन लौटी रचनाओं को लेकर घास नोचने का जिक्र है, उन रचनाओं में 'जूही की कली' का नाम प्रमुखता के साथ लिया जाता है। लखनऊ रेडियो से अपना पहला गद्य लेख विस्तार करते हुए उन्होंने उन परिस्थितियों का वर्णन किया था, जिनमें यह कविता लिखी गई थी। इस रचना में नवयुवक कवि का एक मनोरम सौंदर्य-स्वप्न अंकित है। इस तरह का भुलावा जीवन में अनेक बार नहीं आता। जिसकी आयु कुछ घंटों में गिनी जा सकती है, उसे वर्ष भर पत्रांक में रखने पर भी तरुणी रूप में कल्पित किया है-

'विजन-वन-वल्लरी पर
सोती थी सुहाग-भरी-स्नेह-स्वप्न-मग्न-
अमल-कोमल-तनु तरणी-जूही की कली,
दृग बंद किये,शिथिल,-पत्रांक में,
वासन्ती निशा थी;
विरह-विधुर-प्रिया-संग छोड़
किसी दूर देश में था पवन
जिसे कहते हैं मलयानिल'।

'निर्दय उस नायक ने
निपट निठुराई की
कि झोंकों की झड़ियों से
सुंदर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,
मसल दिये गोरे कपोल गोल;
चौंक पड़ी युवती-
चकित चितवन निज चारों ओर फेर,
हेर प्यारे को सेज-पास,
नम्रमुख हँसी-खिली,
खेल रंग, प्यारे-संग'।

निराला जी ने अपनी रचनाओं के द्वारा प्राचीन हिंदी की रक्षा करने का प्रयास भी लगातार किया। साथ ही नई हिंदी के विकास के लिए भी वे सचेत थे। 'पल्लव' की भूमिका पर उनका मूल आक्षेप यही था कि पंत जी ने इस गौरव का निरादर किया है। लेकिन इस गौरव के बहाने जो लोग नई प्रगति का विरोध करते थे। निराला जी ने उन्हें साफ कहा, 'पुराना साहित्य हिंदी का बहुत अच्छा था, पर नया और अच्छा होगा, इस दृष्टि से उसकी साधना की जाएगी'।

विविधता निराला के व्यक्तित्व की एक प्रमुख विशेषता रही है। छायावाद के अध्यात्म एवं दर्शन का पूर्ण ऊर्जस्वित समन्वय निराला जी के रचनाओं की विशेषता रही है। फिर भी उनके कृतित्व पर मात्र दार्शनिकता का आरोप लगाना गलत होगा। उन्होंने साहित्य को हमेशा 'शक्ति' के रूप में देखा। ऐसी शक्ति जिसके द्वारा सत्य का संधान, विश्वकल्याण आदि महत्वपूर्ण कार्य हो सकते हैं। अपनी रचना 'प्रबंध-पद्म' में उन्होंने लिखा है कि, 'हम साहित्य में बहुत दिनों की भूली हुई उस शक्ति को आमंत्रित करना चाहते हैं जो अव्यक्त रूप में सब व्यक्त अपनी ही आँखों से विश्व को देखती हुई अपने ही भीतर उसे ढाले हुए है। पानी की तरह सहसा ज्ञान-धाराओं में बहती हुई स्वतंत्र किरण की तरह सब पड़ती हुई मधुर, उज्ज्वल, अम्लान, मृत्यु की

तरह नवीन जन्मदात्री, सर्वशाखाओं की तरह अगणित प्रकार से फैली हुई प्रत्येक मूर्ति में चिर कमनीय हैं'।

स्पष्ट है कि काव्य-सृजन के क्षणों में निराला की दृष्टि व्यक्ति पर केंद्रित न रहकर समष्टिगत रही है। उन्होंने कवि को भावनाओं का गायक और संस्कृति का अग्रदूत स्वीकार किया है।

बोध प्रश्न

- किन कृतियों में निराला की प्रारंभिक रचनाएँ उपलब्ध हैं?
- निराला के व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषता क्या रही?
- 'परिमल' की रहस्यवादी रचनाओं को पढ़ने से क्या समझ में आता है?
- काव्य सृजन के क्षणों में निराला की दृष्टि किस पर केंद्रित रही?

11.3.4.2 निराला : गीतकार

निराला की रचनाओं के बारे में बात हो और उनके गीतों की अलग से बात न हो यह कैसे हो सकता है? अभी आपने ऊपर पढ़ा कि 'परिमल' और 'गीतिका' में संकलित उनकी कविताओं में गीतात्मकता अधिक है। सन् 1926 के बाद से ही उन्होंने गीत लिखने की चेष्टा प्रारंभ कर दिया था। 'गीतिका' की भूमिका में उन्होंने अपना विचार रखा है, 'हिंदी गवैयों का सम पर आना मुझे ऐसा लगता था, जैसे मजदूर लकड़ी का बोझ मुकाम पर लाकर धम्म से फेंककर निश्चिंत हुआ'। उन्हें गीतों की प्रस्तुति इस प्रकार से अच्छी नहीं लगती थी। उन्होंने अपने गीतों का निर्माण इस प्रकार से किया कि उनमें स्वर-विस्तार के साथ-साथ सौंदर्य का विशेष महत्व रहा। निराला का गीतों का समाज के साथ सीधा संबंध रहा। क्योंकि उनका मानना था साहित्य के समान ही गीतों का भी समाज के प्रति एक व्यक्ति के साथ सीधा संबंध है। दुख के क्षण में दो पंक्ति गीत गुनगुनाकर कोई भी व्यक्ति अपने दुख को कुछ समय के लिए ही सही भूल सकता है। जिस तरह से रीतिकालीन परम्परा को तोड़कर छायावाद ने एक नई सजीव साहित्यिक धारा को जन्म दिया था उसी प्रकार से निराला के गीतों ने भी पुरानी गायिकी के स्थान पर नवीन गीत शैली को जन्म दिया जो काफी लोकप्रिय भी रहा।

'प्रेम चयन के उठा नयन नव

विधु चितवन, मन में मधु कलरव

मौन पान करती अधरासव

कण्ठ लगी उरगी।

मधुर स्नेह के मह प्रखरतर

वरस गए रस निर्झर झर-झर

उगा अमर अंकुर उर भीतर

सन् सृति भीती भगी'।

उपर्युक्त गीत को देखिए, हिंदी में ऐसे गीत कम लिखे गए है जहाँ रूप में इतनी पूर्णता हो, जहाँ भावों में ऐसी संबद्धता हो और मनुष्य की भावनाओं को इतना ऊँचा स्थान दिया गया हो। हिंदी गीत परंपरा को इस शिखर तक ले जाने के श्रेय निराला को देना गलत नहीं होगा। 'जूही की कली' की शृंगारिक पंक्तियों की चर्चा किए बिना तो निराला के गीत शैली की गंभीरता को समझा ही नहीं जा सकता-

'विजन – वन – वल्लरी पर

सोती थी सुहाग – भरी – स्नेह – स्वप्न – मग्न –

अमल - कोमल - तनु तरुणी - जूही की कली,

दृग बंद किए, शिथिल, - पत्रांक में,

वासंती निशा थी;

विरह - विधुर - प्रिया - संग छोड़

किसी दूर देश में था पवन

जिसे कहते है मलयानिल।'

रीतिकालीन कवियों ने नारी को अपदस्थ करके उसे मनोरंजन के लिए प्रस्तुत दासी बना दिया था, आध्यात्मिक कवियों ने कभी नारी को माया कहा तो कभी देवी स्वरूपा, छायावादी कवियों ने भी नारी को अप्सरा रूप में ही प्रस्तुत किया, कहीं-कहीं पुरुष की शक्ति के रूप में भी

दिखाया लेकिन निराला के गीतों में नारी उसके नारीत्व के साथ न्याय करने का पूर्ण अवसर मिला।

बोध प्रश्न

- निराला ने गीत लिखने का प्रयास कब से प्रारंभ किया?
- गीतकार के रूप में निराला को क्या प्राप्त नहीं हुआ?
- रीतिकालीन कवियों ने स्त्री को किस रूप में प्रस्तुत किया?

11.4 पाठ सार

छात्रो! प्रस्तुत इकाई को पढ़ते हुए आप सब ने निराला के जन्मस्थान, पालन पोषण, विवाह् आदि के बारे में जानकारी प्राप्त किया। आपने पढ़ा कैसे माँ की मृत्यु के बाद निराला का जीवन पिता के कठोर अनुशासन में बीता। यह अनुशासन मौखिक न रह् कर शारीरिक दंड के रूप में भी निराला को प्राप्त हुआ। मनोहरा देवी जी के साथ विवाह् के बाद निराला का मानो पुनर्जन्म हुआ। पत्नी से न केवल उन्हें प्रेम प्राप्त हुआ बल्कि उनके भीतर के साहित्यकार को भी नई दिशा प्राप्त हुई। परंतु निराला का जीवन तो उनके नाम के समान ही निराला था तभी तो मात्र 21 वर्ष के आयु में उनकी पत्नी एक पुत्र और एक पुत्री उन्हें उपहार स्वरूप देकर स्वर्ग लोग सिधार गई और अब निराला जीवन युद्ध में बिल्कुल अकेले रह गए। कभी अकेले श्मशान में भटकते तो कभी अपनी साहित्यिक कृतियों को छपवाने के लिए संपादकों के दरवाजे में भटकते। धैर्य का ही सहारा था। इसी धैर्य के सहारे निराला की साहित्यिक यात्रा का प्रारंभ सन् 1920 से शुरू हुआ। इस यात्रा को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है - (1.) सन् 1921 - सन् 1936, (2.) सन् 1937 - सन् 1946 और (3.) सन् 1950 - सन् 1961। सन् 1946 के कुछ समय से लेकर सन् 1950 तक के कुछ समय तक निराला ने साहित्य रचना से अवकाश लिया था इसलिए इस समय को उनके रचना यात्रा में नहीं जोड़ा जाता।

छात्रो! आप सब ने पढ़ा कि कैसे निराला के ऊपर स्वामी विवेकानंद, परमहंस और रवींद्रनाथ का प्रभाव रहा। साथ ही हरिवंश राय बच्चन ने निराला के साहित्यिक यात्रा को लेकर किस प्रकार से विश्लेषण किया इसकी भी विस्तृत जानकारी अपने प्राप्त की। वे स्वयं छायावादी युग के एक आधार स्तंभ रहे लेकिन इसके बाद भी कुकुरमुत्ता को लेकर प्रयोग करने से भी वे कभी पीछे नहीं हटे। वे एक सफल जन-गीतकार भी रहें। उनकी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना,

मानवीय चेतना, दार्शनिक चेतना, रहस्यवादी चेतना और सौंदर्यवादी चेतना का स्वर हमेशा मुखरित रहा।

'तोड़ती पत्थर' कविता के द्वारा उन्होंने स्त्री सौंदर्य को केवल शारीरिक सौंदर्य से बाहर निकालकर उसकी परिश्रम, त्याग आदि के सौंदर्य के साथ जोड़ा। यह केवल निराला के लिए ही नहीं हिंदी साहित्य के लिए भी महान उपलब्धि नहीं रही। आपने निराला के पद्य साहित्य के साथ ही साथ उनके गद्य साहित्य की भी जानकारी प्राप्त की। साथ ही साथ सन् 1926 के बाद से निराला ने गीत लिखने का प्रयास कैसे शुरू किया और गीतकार के रूप में उनकी क्या सफलताएँ रहीं और कितना वे असफल रहें इन दोनों तथ्यों की विस्तृत जानकारी आपने प्राप्त की। आपको अब यह पता है कि निराला के गद्य साहित्य का प्रकाशन उनके काव्य साहित्य से पहले ही शुरू हो चुका था। अपने यह भी पढ़ा कि कैसे उन्होंने साहित्यकार के रूप में न केवल हिंदी भाषा को विकसित किया बल्कि हिंदी भाषी जनता को भी उन्होंने सांस्कृतिक विकास के साथ जोड़ा।

साहित्यकार के रूप में निराला की विशेषताओं का भी गहन अध्ययन आप विद्यार्थियों ने किया। आपने इस बात को अवश्य ही समझा कि बांग्ला भाषा के साथ जुड़े रहने के बाद भी हिंदी के सम्मान की रक्षा उन्होंने हमेशा की अंग्रेजी भाषा का भी उन्हें ज्ञान था तथा अंग्रेजी साहित्य से भी वे परिचित थे तभी तो वे अंग्रेजी साहित्य के 'एनजैबमेंट' को हिंदी साहित्य में नवीन प्रयोग के रूप में स्थापित कर सकें। इतना सब करने के बाद हिंदी के सम्मान की रक्षा के लिए वे अपने ही देश के उन नेताओं के विरुद्ध खड़े होने से भी पीछे नहीं हटे जो संकुचित मानसिकता और राजनीतिक लाभ के लिए हिंदी के विकास में बाधा उत्पन्न करते थे। निराला ने जहाँ पुस्तकों से बहुत कुछ सीखा, वहीं उन्होंने बिल्लेसुर, चतुरी, कुल्ली, देवी आदि साधारण नर-नारियों से भी बहुत कुछ सीखा। इसी कारण से निराला के साहित्य की जड़ें देश की धरती और देश की साधारण जनता में जीवित है।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला आधुनिक हिंदी काव्य के सचमुच निराले और विरले कवि हैं।

2. निराला का निजी जीवन अत्यंत विषम और संघर्षपूर्ण था, लेकिन उन्होंने व्यापक जन-जीवन की पीड़ा में निजी पीड़ा को विलीन करके महान रचनाएँ प्रस्तुत की।
3. निराला का रचना काल छायावाद और प्रगतिवाद से होता हुआ प्रयोगवाद तक के क्षेत्र में हस्तक्षेप करता है।
4. निराला गीतिकाव्य के साथ-साथ महाकाव्यात्मक चेतना के रचनाकार थे। 'राम की शक्तिपूजा' उनकी महाकाव्यात्मक चेतना का प्रतीक है।
5. वे प्रेम, सौंदर्य, माधुर्य और ओज के अलावा व्यंग्य के भी अद्‌भुत चितेरे थे।

11.6 शब्द संपदा

1.	अवरोध	=	परेशानी
2.	कृतित्व	=	रचनाएँ
3.	गुरु	=	भारी
4.	मनमौजी	=	अपनी इच्छा अनुसार काम करने वाला
5.	वैचित्र्य	=	विविधता
6.	शुभ्र	=	सफेद, साफ
7.	सीकर	=	पसीना

11.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. निराला के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. निराला के कृतित्व का विवेचन कीजिए।
3. निराला की साहित्यिक यात्रा पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. निराला का बचपन कहाँ और कैसे बीता?
2. विवाह के बाद निराला के जीवन में क्या परिवर्तन आया?
3. गीतकार के रूप में निराला के योगदान पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'मृत्युंजयी कवि' के रूप में कौन जाने जाते हैं? ( )
   (अ) प्रसाद (आ) निराला (इ) पंत (ई) महादेवी
2. इसमें कौन सी रचना निराला की नहीं है? ( )
   (अ) कुकुरमुत्ता (आ) सरोज स्मृति (इ) राम की शक्तिपूजा (ई) झरना
3. 'तोड़ती पत्थर' में निराला स्त्री सौंदर्य को किसके साथ जोड़ा? ( )
   (अ) श्रम (आ) देह आकर्षण (इ) मांसल वृत्ति (ई) बुद्धि बल

II. रिक्त स्थान भरें -

1. 'राम की शक्तिपूजा' निराला की .... चेतना का प्रतीक है।
2. निराला ने 'जुही की कली' में .... छंद को अपनाया।
3. निराला का पहला उपन्यास ....है।
4. निराला की साहित्य रचना का पहला पड़ाव ....।

III. सुमेल कीजिए -

1. कुकुरमुत्ता	(अ) उपन्यास
2. अप्सरा	(आ) कुकुरमुत्ता
3. शोषक	(इ) शोषित
4. गुलाब	(ई) कविता

11.8 पठनीय पुस्तकें

1. निराला : सं. रामविलास शर्मा
2. राग-विराग : निराला

इकाई 12 : 'राम की शक्तिपूजा'

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 मूल पाठ : 'राम की शक्तिपूजा'

12.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

12.3.2 अध्येय कविता

12.3.3 विस्तृत व्याख्या

12.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

12.3.5 'राम की शक्तिपूजा' का संदेश

12.4 पाठ सार

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

12.6 शब्द संपदा

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप महाकवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला के व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में जान चुके हैं। साहित्यकार के रूप में निराला मस्त मौला और फक्कड़ थे। साहित्य उनकी आजीविका का साधन भी था, लेकिन उन्होंने अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए साहित्य साधना की गुणवत्ता के साथ समझौता नहीं किया। उन्होंने इस विषय में स्वयं ही लिखा है, 'साहित्य मेरे जीवन का उद्देश्य है, जीने का नहीं। यह सच है कि मैं जीता भी अपने साहित्य से हूँ, किंतु वह मेरे जीवन का साधन मात्र नहीं। जो मैं नहीं लिखना चाहता, वह चाहे भूखों मार

जाऊँ, नहीं लिखूँगा और जो मैं लिखना चाहता हूँ, लाखों रुपए के बदले में भी उसे न लिखने की बात न सोचूँगा'। साहित्यकार के रूप में उनकी सबसे पहली विशेषता है- उनका निर्माण-कौशल। किसी भी स्वच्छंदतावादी कवि में विषय वस्तु पर ऐसा दृढ़ नियंत्रण न मिलेगा, जैसा निराला में देखने को मिलता है। चाहे छोटा गीत हो, चाहे मुक्तक, या फिर 'राम की शक्तिपूजा' जैसी नाटकीय कविता, उनका विषय निर्वाह देखते ही बनता है। साहित्यकार के रूप में दूसरी विशेषता है- उनकी चित्रमयता। उनकी भाषा भले ही जहाँ-तहाँ कठिन हो, लेकिन जहाँ वे चित्र आँकते हैं, वहाँ वे बहुत ही स्पष्ट और आकर्षक हैं। उनकी तीसरी विशेषता है- न्यूनतम रूप सामग्री का उपयोग। निराला ने अपनी रचनाओं में कहीं भी बात को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं कहा। गद्य हो चाहे पद्य, उनकी शब्द योजना हमेशा गठी हुई रही। निराला ने कल्पना और यथार्थ दोनों का सहारा लिया, लेकिन विषय को अकारण जटिल नहीं बनने दिया। निराला ने साहित्यकार के रूप में हिंदी भाषी जनता को जिस प्रकार से सांस्कृतिक विकास के साथ जोड़ा यह उनका युगांतरकारी योगदान है। इस इकाई में आप उनकी प्रसिद्ध प्रबंधात्मक कविता 'राम की शक्तिपूजा' का अध्ययन करेंगे। इस कविता में आप निराला के साहित्य की ये सारी विशेषताएँ देख सकेंगे।

12.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- 'राम की शक्ति पूजा' शीर्षक कविता की विषय वस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- इस कविता के निर्धारित अंशों की सप्रसंग व्याख्या कर सकेंगे।
- इस कविता के काव्य सौंदर्य से परिचित हो सकेंगे।
- निराला की रचनाओं में 'राम की शक्तिपूजा' के महत्व से अवगत हो सकेंगे।
- 'राम की शक्तिपूजा' में निहित निराला की विश्व दृष्टि से परिचित हो सकेंगे।

12.3 मूल पाठ : 'राम की शक्तिपूजा'

12.3.1 अध्येय कविता का सामान्य परिचय

'राम की शक्तिपूजा' केवल एक कविता नहीं है बल्कि निराला के व्यक्तित्व से सराबोर उनके जीवन की एक महत्वपूर्ण रचना है। निराला जी ने अपने जीवन में जो दो-तीन प्रबंधात्मक

और महाकाव्य की चेतना से पूर्ण रचनाएँ रचीं, उनमें से 'राम की शक्तिपूजा' सर्वाधिक महत्वपूर्ण कृति है। सन् 1936 में रची गई इस कविता का विषय राम-रावण-युद्ध की पृष्ठभूमि है। कवि ने प्रस्तुत कविता में सहज मनोविज्ञान का सहारा लेकर इस पौराणिक और ऐतिहासिक युद्ध के नायक राम को आधुनिक मानवीय पर्यावरण में बड़ी कुशलता से स्थापित किया है। किसी भी युग को संदेश देने की अद्‌भुत क्षमता भी प्रस्तुत कविता में है। प्रस्तुत इकाई में आपको 'राम की शक्ति पूजा' की 64 पंक्तियों का अध्ययन करना है। इन पंक्तियों में आपको निराला की भाषा शैली के औदात्य रूप को देखने का अवसर मिलेगा।

12.3.2 अध्येय कविता

1. रवि हुआ अस्त : ज्योति के पत्र पर लिखा अमर
   रह गया राम-रावण का अपराजेय समर
   आज का, तीक्ष्ण-शर-विधृत-क्षिप्र-कर, वेग-प्रखर,
   शतशेलसम्वरणशील, नील नभ गर्ज्जित-स्वर,
   प्रतिपल-परिवर्तित-व्यूह-भेद-कौशल-समूह, -
   राक्षस-विरुद्ध प्रत्यूह,-क्रुद्ध-कपि-विषम-हूह,
   विच्छुरितवह्नि-राजीवनयन-हत लक्ष्य-बाण,
   लोहितलोचन-रावण-मदमोचन-महियान,
   राघव-लाघव-रावण-वारण-गत-युग्म-प्रहर,
   उद्धत-लंकापति मर्दित-कपि-दल-बल-विस्तर,
   अनिमेषराम-विश्वजिददिव्य-शर-भंग-भाव,-
   विद्धांग-बद्ध-कोदंड-मुष्टि-खर-रुधिरस्राव,
   रावण-प्रहार-दुर्वार-विकल वानर-दल-बल,-
   मूर्छित सुग्रीवांगद-भीषण-गवाक्ष-गय-नल,-
   वारित-सौमित्र-भल्लपति-अगणित-मल्ल-रोध,

गर्ज़्जित-प्रल्याबद्धि-क्षुब्ध-हनुमतकेवल-प्रबोध,
उद्गीरित-वह्नि-भीम-पर्वत-कपि-चतुःप्रहर,-
जानकी-भीरु-उर-आशाभर-रावण-सम्वर।

2. लौटे युग-दल। राक्षस-पतदल पृथ्वी टलमल,
बिंध महोल्लास से बार-बार आकाश विकल।
वानर-वाहिनी खिन्न, लख निज-पति-चरण-चिन्ह
चल रही शिविर की ओर स्थविर-दल ज्यों विभिन्न;
प्रशमित है वातावरण, नमित-मुख सांध्य कमल
लक्ष्मण चिंता-पल, पीछे वानर-वीर सकल;
रघुनायक आगे अवनी पर नवनीत-चरण,
श्लथ धनु-गुण है, कटिबन्ध स्त्रस्त तूणीर-धरण,
दृढ़ जटा-मुकुट हो विपर्यस्त प्रतिलट से खुल
फैला पृष्ठ पर, बाहुओं पर, वक्ष पर, विपुल
उतरा ज्यों दुर्गम पर्वत पर नैशान्धकारं,
चमकतीं दूर ताराएं ज्यों हो कहीं पार।

3. आए सब शिविर, सानु पर पर्वत के, मंथर
सुग्रीव, विभीषण, जांबवान आदिक वानर,
सेनापति दल-विशेष के, अंगद, हनुमान,
नल, नील, गवाक्ष, प्रात के रण का समाधान
करने के लिए, फेर वानर- दल आश्रय-स्थल।
बैठे रघु-कुल-मणि श्वेत शिला पर; निर्मल जल
ले आये कर- पद - क्षालनार्थ पटु हनूमान;

अन्य वीर सर के गये तीर संध्या-विधान-
वंदना ईश की करने को, लौटे सत्वर,
सब घेर राम को बैठे आज्ञा को तत्पर;
पीछे लक्ष्मण, सामने विभीषण, भल्लधीर,
सुग्रीव, प्रांत पर पाद-पद्म के महावीर;
यूथपति अन्य जो, यथास्थान, हो निर्निमेष
देखते राम का जित-सरोज-मुख-श्याम-देश।

4. है अमानिशा, उगलता गगन घन अंधकार;
खो रहा दिशा का ज्ञान; स्तब्ध है पवन-चार;
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अंबुधि विशाल
भूधर ज्यों ध्यान-मग्न; केवल जलती मशाल।
स्थिर राघवेंद्र को हिला रहा फिर-फिर संशय,
रह-रह उठता जग जीवन में रावण-जय-भय;
जो नहीं हुआ आज तक हृदय रिपु-दम्य-श्रांत,
एक भी, अयुत-लक्ष में रहा जो दुराक्रांत,
कल लड़ने को हो रहा विकल बार-बार
असमर्थ मानता मन उद्यत हो हार-हार।
ऐसे क्षण अंधकार घन में जैसे विद्युत
जागो पृथ्वी-तनया-कुमारिका-छबि, अच्युत
देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का,-प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का-नयनों से गोपन-प्रिय संभाषण,

पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान-पतन,

काँपते हुए किसलय, झरते पराग-समुदय,

गाते खग-नव-जीवन-परिचय,तरु मलय-वलय,

ज्योतिःप्रपात स्वर्गीय, ज्ञात छबि प्रथम स्वीय,

जानकी-नयन-कमनीय प्रथम कंपन तुरीय।

निर्देश : इन पंक्तियों का सस्वर वचन कीजिए।

इस कविता का मौन वाचन कीजिए।

12.3.3 विस्तृत व्याख्या

रवि हुआ अस्त: ज्योति के पत्र पर लिखा अमर .... जानकी-भीरु-उर-आशाभर-रावण-सम्वर।

शब्दार्थ : ज्योति के पत्र पर = दिन के हृदय पर। अपराजेय समर = अनिर्णीत युद्ध। तीक्ष्णशर विधृत = धनुष पर चढ़ाए तेज बाण। राजीवनयन = कमल के समान आँखें। रावणमद-मोचन = रावण के घमंड का नाश। अनिमेष = एकटक। भीम = भयानक। रुधिर स्राव = खून बहना।

संदर्भ : वसंत पंचमी के दिन सन् 1886 में सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म हुआ था। उनके बचपन का नाम सूर्यकुमार था। उनके पिता का नाम पं. रामसहाय त्रिपाठी था। वे महिषादल राज्य के सिपाहियों के कमांडर जमादार थे। उनके पिता ने दो विवाह किया था। दूसरी पत्नी से निराला का जन्म हुआ था लेकिन बालक निराला केवल तीन वर्ष के थे जब उनकी माता की मृत्यु हो गई। माँ के स्नेह से वंचित निराला का बचपन पिता के कठोर अनुशासन में बीतने लगा। निराला का विवाह केवल 14 वर्ष की अवस्था में ही हो गया था। इनकी पत्नी का नाम मनोहरा देवी था। निराला का विवाह जब 14 वर्ष की अवस्था में मनोहरा देवी के साथ हुआ तब उनकी जीवन को एक नई दिशा प्राप्त हुई। उनके भीतर के हिंदी साहित्यकार को जागृत करने का काम पत्नी मनोहरा देवी ने ही किया। इस विषय में डॉ. बच्चन सिंह का कहना है, 'श्री सूर्यकांत त्रिपाठी को 'निराला' बनाने में उनकी पत्नी का उतना ही हाथ है जितना कालिदास को कालिदास बनाने में विद्योत्तमा का और तुलसीदास को तुलसीदास बनाने में रत्नावली का'। अप्सरा, जूही की

कली, सरोज-स्मृति, गीत गाने दो मुझे, कुकुरमुत्ता, नए-पत्ते, मरण-दृश्य, अपराजिता आदि है। निराला की मृत्यु सन् 1661 में हुई।

प्रसंग : ये पंक्तियाँ कविवर निराला की प्रबंधात्मक रचना 'राम की शक्तिपूजा' के आरंभ से ली गई है। प्रस्तुत पंक्तियों में राम-रावण-युद्ध को पृष्ठभूमि के रूप में चित्रण करते हुए कह रहे हैं।

व्याख्या : दिन भर के भयानक युद्ध के बाद शाम हो गई। सूरज अस्त हो गया। अस्त होते दिन के हृदय पर जैसे आज के राम रावण का युद्ध जो कि किसी परिणाम के बीना ही समाप्त हुआ लेकिन वह इतिहास बनकर रह गया। आगे युद्ध की भयावहता का वर्णन का हुए कवि कहते हैं - राम-रावण दोनों पक्षों के योद्धा बड़ी तेजी से धनुषों पर बाण चढ़ाकर उन्हें शत्रु पक्ष पर चला रहे थे। उनकी गति में अत्यधिक तीव्रता थी। सैंकड़ों भालों को भी रोक पाने की सामर्थ्य उन बाणों में मौजूद थी। दोनों और से शत्रुओं के व्यूह और युद्ध कौशल को नष्ट करने का प्रयास किया जा रहा था। भयानक स्वरों में गरजते क्रुद्ध वानर सेना राक्षस सेना पर निरंतर आक्रमण कर रहे थे। अपने वाणों को अप्रभावित होता देखकर कमल-नयन राम की आँखें आग उगलने लग थीं। वे रक्त नयनों से आगे बढ़कर रावण के अहंकार को नष्ट कर देना चाहते थे। पर आगे बढ़कर आक्रमण करते राम के प्रयत्नों को रावण बढ़ी चतुराई से नष्ट कर देता था। इस प्रकार निरंतर युद्ध होता रहा। दो पहर बीत गए। दुस्साहसी रावण बढ़ी तीव्रता से वानर सेना की शक्ति को नष्ट कर रहा था। राम विश्वविजेता होने के बाद भी असमर्थ आँखों से सब कुछ देख रहें थे। रावण के तीखे वाण प्रहार से राम का शरीर बिंध गया था। वे रक्त से सने हुए हाथों से अपने धनुष वान को पकड़े हुए थे। आज रावण का युद्ध इतना कौशलपूर्ण था कि राम अपने को चोटों से बचा नहीं पा रहें थे। राम के चोटों को देखकर वानर सेना अत्यधिक व्याकुल हो उठी। प्रमुख सेनानायक - सुग्रीव, अंगद, गवाक्ष, गय, नल-नील, आदि सभी कठिन प्रहारों से बेहोश हो गए थे। युद्ध क्षेत्र में मचनेवाला शोर प्रलय - सागर का स्मरण कर रहा था। केवल महावीर हनुमान ही उस शोर-शराबे में सचेत थे। उन्हें देखकर लगता था जैसे विराट ज्वालामुखी पर्वत से आग की ज्वालाएं निकलकर सभी को निगल जाना चाहती हो। इस प्रकार महावीर निरंतर चारों पहरों तक रावण के साथ युद्ध करते रहे। उनका युद्ध सशंकित सीता के हृदय में आशा का संचार करता रहा। सीता को यह विश्वास होने लगा कि हनुमान के प्रयास से ही उसे रावण की कैद से मुक्त मिल सकेगी।

विशेषता : कवि ने समास शैली में युद्ध के दृश्य का बड़ा ही सजीव और मार्मिक चित्रण किया है। युद्ध के सजीब स्वाभाविक वर्णन होने के कारण यहाँ 'स्वाभावोक्ति' अलंकार है। भाषा-शैली में ओज गुण का औदात्य स्पष्ट है। 'हनुमत् केवल प्रबोध' वाक्य से कवि की हनुमान के प्रति अपार श्रद्धा-भक्ति व्यक्त होती है।

बोध प्रश्न

- कौन-कौन बेहोश हो गए थे?
- सीता के में किसे देखकर विश्वास था?
- प्रस्तुत पंक्तियों में कौन सा अलंकार है?

लौटें युग-दल। राक्षस-पतदल पृथ्वी टलमल, ... चमकतीं दूर ताराएं ज्यों हो कहीं पार।

शब्दार्थ : युग दल = दोनों पक्षों की सेनाएँ। टलमल = कंपन। महोल्लास = महान प्रसन्नता। वाहिनी = सेना। लख = देखकर। श्लथ = ढीला। नवनीत-चरण = माखन के समान कोमल चरण। धनु-गुण = धनुष की डोरी। नैशान्धकार = रात का अंधेरा।

प्रसंग : आज का दिन बहुत खराब गया। राम की सेना पराजित होने के बाद दुखी मन और शिथिल शरीर के साथ विश्राम शिविर में आ पहुँचे हैं। वहाँ का वातावरण कैसा था यही इन पंक्तियों का वर्णित विषय है।

व्याख्या : अंत में दिन ढलने पर युद्ध बंध हो गया। राम-रावण दोनों के सेना-समूह लौट पड़े। आज की अपनी विजय के दंभ के कारण चलते हुए राक्षस अपने भारी पगों से पृथ्वी को कंपा रहे थे। उनके विजय हर्ष के कोलाहल से आकाश भी जैसे आज व्याकुल हो रहा था। इधर वानर-सेना अपनी पराजय के कारण खिन्न थी। अपने स्वामी राम के शिथिल चरण चिह्नों को देखती वानर-सेना अपने शिविर की और बिखरी-बिखरी-सी इस प्रकार चल रही थी जैसे संसार से विरक्त बौद्ध-भिक्षुओं का दल बिखरा-बिखरा-सा चल रहा हो। सारा वातावरण एकदम शांत था। झुके मुखवाले कमल संध्या के समय मुरझाकर झुक जानेवाले कमलों के समान मुँह लटकाए लक्ष्मण के पीछे सारी वानर-सेना चल रही थी। उनके आगे माखन जैसे कोमल पग टेकते राम चल रहे थे। उनके धनुष की डोरी इस समय ढीली पढ़ रही थी। तरकश को धारण करने वाला कमरबंध भी एकदम ढीला-ढीला हो गया था। उनकी जटाओं का दृढ़ मुकुट भी जैसे अस्त-व्यस्त

होकर उससे निकलकर बालों की लटें उनके मुख पर फैल रही थी, पीठ पर बिखर रही थीं। इस प्रकार मुख, पीठ और बाहों पर फैल रही थी, पीठ पर बिखर रही थी। इस प्रकार मुख, पीठ और बाँहों पर फैल रही लटों के कारण राम इस समय ऐसे प्रतीत हो रहें थे जैसे किसी कठोर पर्वत पर रात्री का अंधकार उतर आया हो। उस अंधकार में राम की उदास आँखें ऐसे चमक रही थी जैसे तारें दूर से झिलमिलातें हुए दिखाई दे रहे हो। भाव यह है की अस्त-व्यस्त और खिन्न होने पर भी राम के नयनों में भी अभी एक आशा की चमक बाकी थी। सुग्रीव, विभीषण, जांबवान आदि वानर, विशेष दलों के सेनापति, अंगध हनुमान सब लोग चलते हुए पहाड़ की चोटी पर बसे अपने शिविर में आए।

विशेषता : पराजित लौटें राम के व्यक्तित्व के चित्रण कवि ने मार्मिक ढंग से किया है। संध्या का वातावरण मनोद्वंद्व के सर्वथा अनुकूल है। दुर्गम पर्वत पर रात के अंधकार का उतरना एक श्रेष्ठ , विराट अनुभूति को जगानेवाला है। सभी कुछ मनोविज्ञान सम्मत है।

बोध प्रश्न

- सारा वातावरण कैसा था?
- आकाश क्यों व्याकुल हो रहा था?
- राम की आँखें किसके समान चमक रही थी?
- राम के नयनों का चमकना किस बात का प्रतीक था?

आए सब शिविर, सानु पर पर्वत के, मंथर ...... देखते राम का जित-सरोज-मुख-श्याम-देश।

शब्दार्थ : सानु = चोटी। रघु-कुल-मणि = रघुवंश के श्रेष्ठ राम, श्वेत-शीला = सफेद पत्थर। क्षालनार्थ = धोने के लिए। पटु = चतुर। सर के तीर = सरोवर के किनारे पर। सत्वर = शीघ्र। भल्ल्धीर = धैर्यशील जांबवान। प्रांत पर = एक तरफ, समीप ही। पाद-पद्म = चरण कमल। यूथपति = सेना-नायक।

प्रसंग : पर्वत के शिखर पर बसे शिविर के बाहर अपने समस्त प्रखर सेनानायकों आदि के साथ, कल के युद्ध के बारे में विचार-विमर्श के लिए राम बैठे, इस प्रसंग का वर्णन करते हुए कवि निराला कह रहे हैं -

व्याख्या : रघुवंश के श्रेष्ठ राम एक श्वेत पत्थर आसन पर बैठ गए। उसी क्षण स्वभाव के चतुर हनुमान उनके हाथ-पाँव धोने के लिए स्वच्छ पानी ले आए। बाकी के सभी वीर योद्धा संध्याकालीन पूजन-पाठ आदि करने के लिए पास वाले सरोवर के किनारे पर चले गए। वे लोग अपने संध्या-कर्मों से जल्दी ही निवृत्त होकर वापस लौट आए। राम की आज्ञा को तत्परता से सुनने के लिए सभी लोग उन्हें घेर कर बैठ गए। लक्ष्मण राम के पीछे बैठे थे। विभीषण मित्र-भाव के सामने बैठा था और धैर्यवान जांबवान भी उनके साथ ही बैठा था। राम के एक तरफ सुग्रीव थे और चरण-कमलों के पास महावीर हनुमान विराजमान थे। बाकी के सभी सेनानायक अपने-अपने उचित और योग्य स्थानों पर बैठ कर रात के नीले कमल के समान विकसित होकर सबके हृदय को जीत लेने वाले राम के श्याम-मुख को देख रहे थे।

विशेषता : कवि ने पौराणिक भक्ति-चेतना और राजनीति से संबंधित अनुशासनों को ध्यान में रखकर सबके बैठने के उचित स्थानों की व्यवस्था की है। 'पाद-पद्म के महावीर' पद में दास्य भक्ति भाव को स्थापित किया है। विभीषण को राम का मात्र शरणागत न दिखाकर उनका मित्र दर्शाया गया है।

बोध प्रश्न

- रघुवंश के श्रेष्ठ राम कहा बैठे थे?
- हनुमान का स्वभाव कैसा था?
- हनुमान कहा बैठे थे?
- राम के मुख की तुलना किसके साथ की गई है?

है अमानिशा, उगलता गगन घन अंधकार; .... जानकी-नयन-कमनीय प्रथम कंपन तुरीय।

शब्दार्थ : अमानिश = अमावस्या की रात। घन = गहरा। स्तब्ध = जड़। पवन-चार = हवा का बहना। अप्रतिहत = आबाद भाव से। भूधर = पर्वत। पृथ्वी-तनया-कुमारिका-छवि = पृथ्वी की बेटी कुमारी सीता की छवि। अयुत = दस हज़ार। कमनीय = सुंदर। तुरीय = एक समाधि की अवस्था।

प्रसंग : अगले दिन का युद्ध कैसे होगा इस पर विचार विमर्श करने के लिए सभा बैठी है, रात का प्राकृतिक दृश्य मनोरम है। इसके साथ ही साथ रावण से विजय पराजय के द्वंद्व में उलझे राम के मन में सीता से प्रथम-मिलन का दृश्य उभर आया है।

व्याख्या : अमावस्या की गहरी रात है लगता है कि जैसे आकाश गहरा अंधकार उगल रहा है। उस अंधेरे के कारण कौन सी दिशा किधर है इसका भी ज्ञान नहीं हो पा रहा है। वायु भी इस समय लगता है कि एकदम शांत हो गई है। हिंद महासागर गर्जना कर रहा है। राम योगी के समान ध्यानमग्न होकर विशाल पर्वत पर बैठे हुए हैं। राम का मन जो कभी किसी शत्रु से नहीं डरा आज व्याकुल है। न जाने क्यों राम का हृदय पराजित होने के डर से आतंकित हो रहा था। उसी क्षण जैसे अंधेरे में सहसा बिजली की चमक उजागर हो उठती है। राम के मन-नयन में कुमारी सीता की प्रथम-मिलन की छवि सहसा जाग उठी। राम उसे एकटक नयनों से अनवरत देखते रहें। उन्हें राजा जनक का उपवन स्मरण हो आया कि जिसकी लताओं के झुरमुट में राम और सीता का प्रथम स्नेहिल मिलन हुआ था। पहली बार दोनों की पलकें एक-दूसरे की पलकों पर उठकर झुक गई थीं। उपवन के पक्षी जैसे नवजीवन का परिचय पाकर विभोर से होकर गाने लगे थे। चंदन के वृक्षों के झुरमुट झूम उठे थे। प्रातःकालीन सूर्य की सुंदर ज्योति को देखकर लगता था कि जैसे आकाश से प्रकाश का झरना झरने लगा हो। उस सुंदर वातावरण में ही राम और सीता ने पहली बार अपने-अपने सौंदर्य का ज्ञान प्राप्त किया था। इस प्रथम दर्शन-मिलन के प्रभाव से रोमांचित सीता के नयनों में एक प्रकार का भाव उत्पन्न होने लगा था। उस भाव का आनंद योग की समाधि से कम नहीं था अर्थात राम और सीता एक दूसरे में तल्लीन हो गए थे।

विशेषता : कवि ने राम को यह ब्रह्म न मान कर मानवीय गुणों से सुशोभित दिखाया है। यहाँ राम के माध्यम से कवि की अपनी प्रिया-विरह की वेदना को भी रूपाकार मिल सका है, इस दृष्टि से कवि का व्यक्तित्व भी हमारे सामने आया है।

बोध प्रश्न

- आकाश क्या उगल रहा था?
- कौन गर्जना कर रहा था?
- राम को क्या स्मरण हो आया?
- राम-सीता पहली बार कहाँ मिले थे?

12.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

काव्य सृजन के दो महत्वपूर्ण पक्ष होते हैं- भाव तथा रस। छायावादी कवि निराला के व्यक्तित्व की झलक उनकी सभी रचनाओं में दिखाई पड़ती है। पंत ने निराला के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए कहा था, 'प्रसाद का शैव-व्यक्तित्व हिमालय के शुभ्र शिखर-स था तो निराला का शक्ति की झंझा से उत्ताल, दुर्लभ्य तरंगों में आंदोलित व्यक्तित्व एक विशाल समुद्र-सा, जिसके उद्याम फेनिल ज्वारों के ऊपर सूर्य का आलोक जाज्वल्य आलोक रंग-विरंगी ज्वालाओं में सुलग कर, दृष्टि को चमत्कृत कर देता है। निराला छायावाद युग के पुरुष-प्रकाश के स्तंभ हैं। वह अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व में अद्वितीय हैं'। पंत का यह वक्तव्य 'राम की शक्तिपूजा' के संदर्भ में बिल्कुल सही सिद्ध होती है। निराला ने 'राम की शक्तिपूजा' में जिस प्रकार का भाव और रस विधान किया हैं, उसमें उनके व्यक्तित्व की झलक तो लगातार दिखाई पड़ती है। आइए छात्रो! 'राम की शक्तिपूजा' के भाव और रस विधान को विस्तार से समझेंगे।

निराला ने 'राम की शक्तिपूजा' की रचना केवल राम भक्ति को प्रचारित करने के लिए नहीं किया और न ही राम के चरित्र की उदात्तता को दर्शाने के लिए रचा इसके विपरीत उन्होंने तत्कालीन समाज को सचेत करने के लिए प्रस्तुत रचना को रचा। राम को अपने आप को धिक्कार कर यह कहना -

'धिक् जीवन जो पाता ही आया विरोध
धिक् साधन जिसके लिए सदा ही किया शोध।

केवल राम का स्वयं को धिक्कार नहीं है बल्कि उस समाज को धिक्कार है जहाँ अन्याय, नए को लगातार हराने की क्षमता रखता है। ऐसे समाज में रहनेवाले मनुष्यों के मन में संशय की भावना का आना तो स्वाभाविक ही है। राम के मन में आने वाला संशय केवल उनका संशय नहीं है, बल्कि वह तो युगीन संशय है जिसको कवि ने ऐसे अभिव्यक्त किया है-

'स्थिर राघवेंद्र को हिला रहा फिर-फिर संशय,
रह-रह उठता जग-जीवन में रावण-जय-भय'।

फिर भी मनुष्य चिरंतन बुराई को हराकर अच्छाई को जिताने का ही प्रयास करता है। राम ऐसे ही मनुष्यों का प्रतीक है। कवि की निम्न पंक्तियाँ इसी बात का संकेत देती है -

'वह एक और मन रहा राम का जो न थका,

जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय

कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जय'।

रावण के नाश में सभी का सहयोग वास्तव में अधर्म के प्रति धर्म के विजय के लिए राम को मिलने वाला जातीय भावना का सहयोग है। कवि ने 'राम की शक्तिपूजा' में कवि ने कोमल भावनाओं को भी महत्व प्रदान किया है। कवि ने छायावादी काव्य-चेतना के आधार पर ही नारी को प्रेरक शक्ति के रूप में चित्रित किया है। तभी तो भावना में भी सीता के दर्शन करके राम की आँखें और होंठ मुस्करा उठते हैं-

'फूटी स्मिति सीता-ध्यान-लीन राम के अधर

फिर विश्व-विजय भावना हृदय में आई भर'।

'राम की शक्तिपूजा' की भाव व्यंजना की प्रशंसा करते हुए कवि सुमित्रानंदन पंत ने लिखा है, 'सूक्ष्म-जटिल कलाकारिता तथा संकल्प-शक्ति की द्योतक, अपनी अबाध शिल्प-शक्ति के अदम्य वेग तथा पौरुष-सौंदर्य-क्षमता के कारण वह हिंदी में एक अभूतपूर्व लंबी कविता है'। पंत की विचारधारा को बिल्कुल सही कहा जा सकता है।

'राम की शक्तिपूजा' का प्रधान रस वीर रस है। प्रणत वीर रस के साथ-साथ काव्य में रौद्र, शृंगार, वात्सल्य, शांत जैसे रसों को भी प्रमुखता से स्थान मिला है। काव्य का आरंभ वीर रस के साथ हुआ है लेकिन अंत शांत रस के साथ हुआ है। वीर रस को प्रस्तुत करने के लिए जिस रोमांच की आवश्यकता होती है उसका ध्यान कवि ने प्रारंभ से लेकर अंत तक किया है-

'प्रतिपल-परिवर्तित-व्यूह,-भेद-कौशल-समूह,

राक्षस-विरुद्ध प्रत्यूह,-क्रुद्ध कपि-विषम-हूह,

लोहितलोचन-रावण-मदमोचन-महियान...'।

कवि ने रस के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग किया है। 'जनक-वाटिका' के लताओं के बीच राम-सीता का प्रथम मिलन होता है। विशुद्ध शृंगार रस अभिव्यक्ति का अवसर बन जाता है

कवि निराला ने भी इस परिस्थति के साथ पूर्णतया न्याय किया है। निम्न पंक्तियाँ इस विषय का उदाहरण है-

'जागी पृथ्वी-तनय-कुमारिका-छवि, अच्युत
देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का, प्रथम स्नेह का लतान्तराल मिलन
नयनों का-नयनों से गोपन-प्रिय संभाषण
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान-पतन....'

कवि ने वात्सल्य रस की बहुत सुंदर अभिव्यंजना 'राम की शक्तिपूजा' में की है। हनुमान के क्रोध और रौद्र रूप को देखकर शिव भी डर जाते हैं तब वे पार्वती को कहते हैं कि वे हनुमान को बल से नहीं बल्कि बुद्धि से पराजित करें। तब पार्वती हनुमान की माता अंजना का रूप धरकर हनुमान से कहती हैं-

'बोली माता-तुमने रवि को जब लिया निगल
तब नहीं बोध था तुम्हें; रहे बालक केवल,
यह वही भाव कर रहा तुम्हें व्याकुल रह-रह,
यह लज्जा की है बात कि मन कहती सह-सह'।

डॉ. रामविलास शर्मा ने 'राम की शक्तिपूजा' की रस व्यंजना का विश्लेषण करते हुए लिखा है, 'राम की शक्तिपूजा में दो कविताओं का सार-तत्व है - तुलसीदास और सरोज स्मृति का और इनके अलावा उसमें नई सामग्री है - एक पराजित मन और दूसरे अपराजित मन के अस्तित्व की अनुभूति'। स्पष्ट है कि इस अनुभूति में ही काव्य की भावाभिव्यक्ति और रस-व्यंजना की दृष्टि से पूर्ण सफलता और सार्थकता है।

बोध प्रश्न

- राम किसे धिक्कार रहे थे?
- निराला ने छायावादी काव्यधारा के आधार पर नारी को किस रूप में प्रस्तुत किया है?
- 'राम की शक्ति पूजा' का प्रधान रस क्या है?

12.3.5 'राम की शक्तिपूजा' का संदेश

सन् 1936 में निराला ने 'राम की शक्तिपूजा' की रचना की। 'राम की शक्तिपूजा' का मूल कथानक पौराणिक मान्यताओं पर आधारित है। कुछ लोग यह मानते हैं कि इसके कथानक का मूल स्रोत बंगाल में होनेवाली शक्तिपूजा को मानते हैं तो कुछ लोग मानते हैं कि इस काव्य का सृजन 'देवी भागवत पुराण' या शिव महिमा स्तोत्र के आधार पर किया है। लेकिन अब विभिन्न शोधों के द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि इस रचना के कथानक का मूल आधार बांग्ला के पंडित कृतिवास ओझा रचित रामायण है। 'राम की शक्तिपूजा' कविवर महाप्राण निराला की महकाव्यात्मक औदात्य से संयत सर्जना है। महकाव्यात्मक औदात्य से परिपूर्ण रचनाओं में जहाँ भाषा-शैली, छंद-विधान और विशिष्ट अलंकारों का महत्व होता है वहीं ऐसी रचनाओं में व्याप्त संदेश का भी अपना एक अलग महत्व होता है। ऐसे काव्यों में सार्वदेशिक और सार्वकालिक संदेश रहते हैं। 'राम की शक्तिपूजा' में भी यही सारे गुण व्याप्त हैं। कवि ने इतिहास, पुराण, प्रत्यक्ष अनुभव और कल्पना के औदात्य का समावेश करके ही प्रस्तुत काव्य की वस्तु-योजना की है और उसे अपनी अनुभूतियों के मिश्रण से पूर्णतया विकसित भी किया है। कवि की चेतना अप्रत्यक्ष रूप से महाकवि तुलसीदास की चेतना से भी प्रभावित हैं।

कथानक के विकास के लिए कवि ने अनेक स्थानों पर मनोविज्ञान का सहारा लिया है और अपनी मौलिकता के सहारे अपनी रचना को नया रूप भी प्रदान किया है। परंपरा की दृष्टि से विभीषण राम का शरणागत और मित्र है, पर प्रस्तुत काव्य में विभीषण मित्रता के बंधन में बंधा राम का मित्र, सहायक, और परामर्शदाता भी है। कवि ने मानवता को एक शाश्वत संदेश देने के लिए विष्णु का अवतार माने जाने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम राम को सहज मानवता के धरातल पर उतारा है। उसे सहज मानवीय सुख-दुख की भावना से परिपूर्ण किया है। 'राम की शक्तिपूजा' में कहीं-कहीं अलौकिक घटनाओं को भले ही स्थान मिल है लेकिन उसमें सहज मानवीयता की भावना अत्यधिक मुखरित रूप में दिखाई पड़ती है। जैसे अपने युग में कवि निराला स्वयं वैयक्तिक धरातल पर अपने अभावों को पराजित करने के लिए संघर्षरत थे, उनका सम-सामयिक युग स्वतंत्रता-प्राप्ति के लक्ष्य को पाने के लिए अनवरत युद्ध और संघर्ष में तल्लीन था, उसी प्रकार 'राम की शक्तिपूजा' के राम रावण के साथ लगातार अपने मान-सम्मान की रक्षा के लिए, सीता की मुक्ति के लिए अनवरत युद्ध में लगे हुए थे। कठिन से कठिन

परिस्थिति में भी आशा, कल्पना, उत्साह आदि भावनाएँ ही मनुष्य को आगे बढ़ने की प्रेरणा प्रदान करता है। राम को कठिन परिस्थितियों में भी आशावान होकर रावण को हराने की योजना बनाते हुए दिखाकर कवि निराला ने भारतीयों के मन में अपनी खोई प्रतिष्ठा को फिर से पाने की इच्छा जगाते हुए दिखाया है। उन्होंने सीता को बंदिनी भारत मन के प्रतीक, राम को उसे स्वतंत्र करानेवाले नेता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। यह भी दर्शाया है कि केवल स्वतंत्रता प्राप्त कर लेना काफी नहीं है उसकी रक्षा भी आवश्यक है। कवि ने राम की संघर्षरत चेतना के साथ युग की संघर्षमयी चेतना और अपनी व्यक्तिगत संघर्ष की चेतना को निम्न पंक्तियों के द्वारा उजागर किया है-

'रघुकुल-गौरव, लघु हुए जा रहे तुम इस क्षण,
तुम फेर रहे हो पीठ हो रहा जब जय रण!
कितना श्रम हुआ व्यर्थ, आया जब मिलन-समय,
तुम खींच रहे हो हस्त जानकी से निर्दय'!

कवि को यह भी ठीक नहीं लगा कि आसुरी-शस्त्रों/ शक्तियों से संपन्न विदेशी शासन का सामना सत्याग्रह आंदोलन जैसे निरीह शस्त्रों से किया जाए। रावण के माया के सामने राम के बाणों को कवि ने निम्न रूप में व्यर्थ होते हुए दिखाया है-

'शत-शुद्धि-बोध-सुक्षमातिसूक्ष्म मन का विवेक,
जिनमें है क्षात्र-धर्म का घृत पूर्णाभिषेक,
जो हुए प्रजापतियों के संयम से रक्षित,
वे शर हो गए आज रण श्रीहत, खंडित'।

शरों का खंडित होना वास्तव में गांधीवादी सिद्धांतों की पराजय ही है। पर कवि न तो राम को पराजित होते हुए दिखाना चाहते थे और न ही वे देश को पराधीन होते हुए देख सकते थे। शक्ति का उत्तर शक्ति से ही दिया जा सकता है। जीवन शक्ति का खेल है, यह बात राम को निम्न पंक्तियों के द्वारा राम को समझ आता है-

'रावण अधर्मरत भी अपना; मैं हुआ अपर,

यह रहा शक्ति का खेल समर, शंकर, शंकर'।

यहाँ इस तथ्य को ध्यान में रखना भी आवश्यक है कि कवि ने ऊपर की पंक्तियों के द्वारा यह भी स्पष्ट कर दिया है कि वास्तविक शक्ति पाने के लिए सामान्य स्वार्थ, पाशविक प्रवृत्तियों, से मुक्ति पाने का प्रयास अनवरत करना चाहिए। अपनी शक्ति का ज्ञान मनुष्य को तभी हो सकता है जब वह अपनी कुंठाओं और निराशाओं से मुक्त हो पाता है, साथ ही साथ विघ्न-बाधा उपस्थित होने पर बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान करने के लिए भी मनुष्य को प्रस्तुत रहना चाहिए। राम को ही देखिए- देवी द्वारा कमल चुरा लेने की स्थिति में राम अपनी आँख का बलिदान देने के लिए भी तैयार दिखाई पड़ते हैं। जो व्यक्ति मरण नहीं जनता, वह किसी को मार भी नहीं सकता। राम के आँख बलिदान की तत्परता का चित्रण त्याग और बलिदान की इसी भावना का संदेश देता है।

इस दृष्टि से कवि यहाँ पर राष्ट्र को संदेश दे रहें हैं कि यदि अपने अस्तित्व, अपनी स्वतंत्रता, अपनी शुभ संस्कृति के मूल्यों की रक्षा चाहते हो तो सभी प्रकार के सदगुणों को अपने भीतर संचित करो, तभी अंतिम विजय तुम्हारी होगी। किसी भी युग में शक्ति साधना का संचय निरंतर किए बिना अपने जीवन, समाज और राष्ट्र के मूल्यों की रक्षा नहीं हो सकती।

बोध प्रश्न

- 'राम की शक्तिपूजा' किस रचना से प्रभावित किया है?
- शरों का खंडित होना किस विचारधारा के पराजय का प्रतीक है?
- राम क्या बलिदान देने के लिए तैयार हो जाते हैं?

12.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! प्रस्तुत इकाई में आपने 'राम की शक्ति पूजा' की 64 पंक्तियों का अध्ययन किया। इस रचना को कवि निराला ने सन् 1936 में रचा था। कवि ने सहज मनोविज्ञान का सहारा लेकर इस पौराणिक और ऐतिहासिक युद्ध के राम को आधुनिक मानवीय पर्यावरण बड़ी कुशलता से प्रदान किया है। 'राम की शक्तिपूजा' एक ऐसी ही रचना है। प्रस्तुत रचना में विद्रोही उन्होंने राम को केवल ईश्वर के रूप में नहीं दिखाया बल्कि राम के मानवीय गुणों, मानसिक द्वंद्व आदि का बहुत मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया। पहली पंक्ति से ही देखिए कवि कह रहे हैं -

आज का दिन बिना किसी हार-जीत के समाप्त हो गया। सूर्य अस्त हुआ पर अस्त होते-होते दिन के हृदय में राम-रावण का अनिर्णीत अमर युद्ध उसने स्वर्णिम अक्षरों में लिख दिया। राम-रावण के बीच भयंकर युद्ध हुआ। भयानक स्वरों में गरजते हुए वानर-सेना, राक्षस-सेना पर लगातार आक्रमण कर रहे थे। दो पहर बीत गए। दुःसाहसी रावण बड़ी तीव्रता से वानर-सेना को नष्ट कर रहा था। एक समय ऐसा भी आया जब सुग्रीव, अंगद, विभीषण आदि सब बेहोश हो गए लेकिन महावीर हनुमान निरंतर चारों पहर रावण के साथ युद्ध करते रहें। सीता के मन में हनुमान की वीरता को देखकर ही यह आशा बंधी हुई थी कि रावण की कैद से उन्हें मुक्ति मिल ही जाएगी। युद्ध समाप्त होने के बाद जब सर वातावरण शांत हो गया तब दोनों सेनाएं अपने-अपने शिविर में लौट आयें। सबका मन मुरझाया हुआ था। राम के तरकश को बाँधने वाला कमरबंध भी ढीला पड़ गया था। उनकी जटाओं का दृढ़ मुकुट भी जैसे अस्त-व्यस्त होकर उससे निकलकर बालों की लटें उनके मुख पर फैल रही थी, पीठ पर बिखर रही थी। इस प्रकार मुख, पीठ और बाँहों पर फैल रही लटों के कारण राम इस समय ऐसे प्रतीत हो रहे थे कि जैसे किसी कठीन पर्वत पर रात्री का अंधकार उतर आया हो। रघुवंश के श्रेष्ठ राम श्वेत आसन पर बैठ गए। चतुर हनुमान उनके पाओ धोने के लिए स्वच्छ पानी ले आए। लक्ष्मण राम के पीछे बैठे थे। विभीषण मित्र-भाव से सामने बैठे थे और धैर्यवान जांबवान भी उनके सामने ही बैठे ही बैठे थे। बाकी के सभी सेनानायक अपने-अपने उचित और योग्य स्थानों पर बैठ कर रात के नीले कमल की सुंदरता को भी जीत लेनेवाले राम के श्याम-मुख को देख रहे थे। अमावस्या की गहरी काली रात में आकाश अंधकार उगल रहा था। उस अंधेरे के कारण कौन सी दिशा किधर है इसका भी ज्ञान नहीं हो पा रहा था। वायु भी शांत हो गई थी। विशाल हिंद महासागर लगातार गर्जना कर रहा था। राम पर्वत पर योगी के समान बैठे हुए थे। उस अंधकार को भेदती केवल एक ही मशाल जल रही थी। राम जिसने अनेक शत्रुओं को बिना किसी भय के पराजित किया था। परंतु आज उनका मन भी विचलित था। मानसिक द्वंद्व के इस समय अचानक राम के मन-नयन में कुमारी सीता की प्रथम-मिलन की छवि सहसा जाग उठी। उन्हें राजा जनक का उपवन स्मरण हो आया जहाँ लताओं के बीच में राम और सीता एक दूसरे से मिले थे। पहली बार दोनों की पलकें उठकर फिर गिर गई थी क्योंकि उनके मन में लज्जा का भाव जन्म लेने लगा था। उस सुंदर वातावरण में ही राम और सीता ने अपने-अपने सौन्दर्य का ज्ञान प्राप्त किया था। सीता की रोमांचित आँखों ने जिस आनंद का अनुभव किया वह किसी योग समाधि के आनंद से कम नहीं था।

तो देखा छात्रो! 'राम की शक्तिपूजा' का मूल-कथानक पौराणिक मान्यताओं पर आधारित है, लेकिन यहाँ राम के ब्रह्म रूप से अधिक उनके मानवीय रूप को प्रधानता कवि निराला ने प्रदान किया है। कुछ लोग यह मानते हैं कि इसके कथानक का मूल स्रोत बंगाल में होनेवाली शक्ति पूजा को मानते हैं तो कुछ लोग मानते हैं कि इस काव्य का सृजन 'देवी भागवत पुराण' या शिव महिमा स्तोत्र के आधार पर किया है। लेकिन अब विभिन्न शोधों के द्वारा यह प्रमाणित हो चुका है कि इस रचना के कथानक का मूल आधार बांग्ला के पंडित कृतिवास ओझा रचित रामायण है। 'राम की शक्ति पूजा' कविवर महाप्राण निराला की महकाव्यात्मक औदात्य से संयत सर्जना है। महकाव्यात्मक औदात्य से परिपूर्ण रचनाओं में जहाँ भाषा-शैली, छंद-विधान और विशिष्ट अलंकारों का महत्व होता है वहीं ऐसी रचनाओं में व्याप्त संदेश का भी अपना एक अलग महत्व होता है। ऐसे काव्यों में सार्वदेशिक और सार्वकालिक संदेश रहते हैं। 'राम की शक्ति पूजा' में भी यही सारे गुण व्याप्त है। कवि ने इतिहास, पुराण, प्रत्यक्ष अनुभव और कल्पना के औदात्य का समावेश करके ही प्रस्तुत काव्य की वस्तु-योजना की है और उसे अपनी अनुभूतियों के मिश्रण से पूर्णतया विकसित भी किया है। कवि की चेतना अप्रत्यक्ष रूप से महाकवि तुलसीदास की चेतना से भी प्रभावित हैं। कथानक के विकास के लिए कवि ने अनेक स्थानों पर मनोविज्ञान का सहारा लिया है और अपनी मौलिकता के सहारे अपनी रचना को नया रूप भी प्रदान किया है। परंपरा की दृष्टि से विभीषण राम का शरणागत और मित्र है, पर प्रस्तुत काव्य में विभीषण मित्रता के बंधन में बंधा राम का मित्र, सहायक, और परामर्शदाता भी है।

कवि ने मानवता को एक शाश्वत संदेश देने के लिए विष्णु का अवतार माने जाने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम राम को सहज मानवता के धरातल पर उतारा है। उसे सहज मानवीय सुख-दुख की भावना से परिपूर्ण किया है। 'राम की शक्तिपूजा' में कहीं-कहीं अलौकिक घटनाओं को भले ही स्थान मिल है लेकिन उसमें सहज मानवीयता की भावना अत्यधिक मुखरित रूप में दिखाई पड़ती है। जैसे अपने युग में कवि निराला स्वयं वैयक्तिक धरातल पर अपने अभावों को पराजित करने के लिए संघर्षरत थे, उनका सम-सामयिक युग स्वतंत्रता-प्राप्ति के लक्ष्य को पाने के लिए अनवरत युद्ध और संघर्ष में तल्लीन था, उसी प्रकार 'राम की शक्तिपूजा' के राम रावण के साथ लगातार अपने मान-सम्मान की रक्षा के लिए, सीता की मुक्ति के लिए अनवरत युद्ध में लगे हुए थे। कठिन से कठिन परिस्थिति में भी आशा, कल्पना, उत्साह आदि भावनाएँ ही मनुष्य को आगे बढ़ने की प्रेरणा प्रदान करता है। राम को कठिन परिस्थितियों में भी आशावान होकर

रावण को हराने की योजना बनाते हुए दिखाकर कवि निराला ने भारतीयों के मन में अपनी खोई प्रतिष्ठा को फिर से पाने की इच्छा जगाते हुए दिखाया है। उन्होंने सीता को बंदिनी भारत मन के प्रतीक, राम को उसे स्वतंत्र कराने वाले नेता के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है। यह भी दर्शाया है कि केवल स्वतंत्रता प्राप्त कर लेना काफी नहीं है उसकी रक्षा भी आवश्यक है। काव्य सृजन के दो महत्वपूर्ण पक्ष होते हैं- भाव तथा रस। छायावादी कवि निराला के व्यक्तित्व की झलक उनकी सभी रचनाओं में दिखाई पड़ती है। पंत ने निराला के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए कहा था, 'प्रसाद का शैव- व्यक्तित्व हिमालय के शुभ्र शिखर-स था तो निराला का शक्ति की झंझा से उत्ताल, दुर्लभ तरंगों में आंदोलित व्यक्तित्व एक विशाल समुद्र-सा, जिसके उद्याम फेनिल ज्वारों के ऊपर सूर्य का आलोक जाज्वल्य आलोक रंग-बिरंगी ज्वालाओं में सुलग कर, दृष्टि को चमत्कृत कर देता है। निराला छायावाद- युग के पुरुष-प्रकाश के स्तंभ हैं। वह अपने व्यक्तित्व तथा कृतित्व में अद्वितीय हैं'। पंत का यह वक्तव्य 'राम की शक्तिपूजा' के संदर्भ में बिल्कुल सही सिद्ध होती है। निराला ने 'राम की शक्तिपूजा' में जिस प्रकार का भाव और रस विधान किया हैं, उसमें उनके व्यक्तित्व की झलक तो लगातार दिखाई पड़ती है। 'राम की शक्ति पूजा' की भाव व्यंजना की प्रशंसा करते हुए कवि सुमित्रानंदन पंत ने लिखा है, 'सूक्ष्म-जटिल कलाकारिता तथा संकल्प-शक्ति की द्योतक, अपनी अबाध शिल्प-शक्ति के अदम्य वेग तथा पौरुष-सौंदर्य-क्षमता के कारण वह हिंदी में एक अभूतपूर्व लंबी कविता है'।

रस-व्यंजना की दृष्टि से 'राम की शक्ति पूजा' में रौद्र, शृंगार, वात्सल्य और शांत रसों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। राम के मानसिक द्वंद्व के सहारे कवि ने अपने मानसिक द्वंद्व को भी निश्चय ही अभिव्यंजित किया है। इस ओर इंगित करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा 'राग-विराग' की भूमिका में लिखते हैं, 'रावण, शक्ति, अंधकार ये सब मिलकर राम को पराजित कर देते हैं। शक्ति की साधन राम को ही करना है और वह साधन सफल होती है। निस्संदेह निराला ने कल्पना के सहारे अपने विजयी होने की आकांक्षा पूरी की है'।

यहाँ इस तथ्य को ध्यान में रखना भी आवश्यक है कि कवि ने प्रस्तुत रचना के द्वारा यह भी स्पष्ट कर दिया है कि वास्तविक शक्ति पाने के लिए सामान्य स्वार्थ, पाशविक प्रवृत्तियों, से मुक्ति पाने का प्रयास अनवरत करना चाहिए। अपनी शक्ति का ज्ञान मनुष्य को तभी हो सकता है जब वह अपनी कुंठाओं और निराशाओं से मुक्त हो पाता है, साथ ही साथ विघ्न-बाधा

उपस्थित होने पर बड़े से बड़ा त्याग और बलिदान करने के लिए भी मनुष्य को प्रस्तुत रहना चाहिए। राम को ही देखिए- देवी द्वारा कमल चुरा लेने की स्थिति में राम अपनी आँख का बलिदान देने के लिए भी प्रस्तुत दिखाई पड़ते हैं। जो व्यक्ति मरण नहीं जनता, वह किसी को मार भी नहीं सकता। राम के आँख बलिदान की तत्परता का चित्रण त्याग और बलिदान की इसी भावना का संदेश देता है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि निराला की 'राम की शक्ति पूजा' को आप पूर्णतया समझ सकें हैं।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'राम की शक्तिपूजा' कथ्य और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से अनूठी रचना है। इसका अनुकरण नहीं किया जा सकता है।
2. इस कविता में निराला की महाकाव्यात्मक उदात्त प्रतिभा अपने चरम पर दिखाई देती है।
3. निराला के राम ईश्वर के अवतार अवश्य है, लेकिन मानवीय गुणों और मानसिक द्वंद्व के कारण वे पाठक को अधिक विश्वसनीय लगते हैं।
4. 'राम की शक्तिपूजा' हताशा और पराजय बोध पर आत्मविश्वास और सकारात्मक चेतना की विजय का प्रतीक है।

12.6 शब्द संपदा

1. अलौकिक = जो इस लोक का न हो
2. आलोक = प्रकाश
3. कुंठा = निराशाजन्य अतृप्त भावना
4. द्वंद्व = मानसिक संघर्ष
5. पाशविक = जो पशु जैसा आचरण करें
6. बलिदान = किसी उच्च उद्देश्य के लिए प्राण देना, त्याग
7. हताशा = निराशा

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'राम की शक्ति पूजा' की विषय वस्तु पर प्रकाश डालिए।
2. 'राम की शक्तिपूजा' में चित्रित राम-रावण युद्ध का वर्णन कीजिए।
3. 'राम की शक्तिपूजा' की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. रवि हुआ अस्त: ज्योति के पत्र पर लिखा अमर .... जानकी-भीरु-उर-आशाभर-रावण-सम्वर। संदर्भ सहित व्याख्या लिखिए
2. लौटें युग-दल। राक्षस-पतदल पृथ्वी टलमल, ... चमकतीं दूर ताराएं ज्यों हो कहीं पार। संदर्भ सहित व्याख्या लिखिए
3. आए सब शिविर, सानु पर पर्वत के, मंथर .... देखते राम का जित-सरोज-मुख-श्याम-देश। संदर्भ सहित व्याख्या लिखिए

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'राम की शक्तिपूजा' में बंदिनी भारत मन के प्रतीक कौन हैं? ( )

(अ) राम (आ) सीता (इ) लक्ष्मण (ई) हनुमान

2. 'राम की शक्तिपूजा' का अंत किस रस के साथ हुआ? ( )

(अ) ओज (आ) करुण (इ) रौद्र (ई) शांत

3. 'राम की शक्तिपूजा' के कथानक का मूलाधार क्या है? ( )

(अ) मानस (आ) वाल्मीकि रामायण (इ) कृतिवास रामायण (ई) महाभारत

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'राम की शक्तिपूजा' का मूल-कथानक .... मान्यताओं पर आधारित है।
2. 'राम की शक्तिपूजा' .... और .... चेतना की विजय का प्रतीक है।
3. राम शक्ति के चरणों में .... अर्पित करने के लिए तैयार होते हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. हनुमान	(अ) जनक उपवन
2. चरण-कमल	(आ) भक्त
3. अमानिशा	(इ) राम
4. राम-सीता	(ई) अमावस्या

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. राग-विराग : सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
2. निराला : सं. रामविलास शर्मा

इकाई 13 : सुमित्रानंदन पंत : एक परिचय

रुपरेखा

13.1 प्रस्तावना

13.2 उद्देश्य

13.3 मूल पाठ : सुमित्रानंदन पंत : एक परिचय

13.3.1 सुमित्रानंदन पंत का जीवन परिचय

13.3.2 सुमित्रानंदन पंत की रचना यात्रा

13.3.3 सुमित्रानंदन पंत की छायावादी कविताओं का परिचय

13.3.4 हिंदी साहित्य में सुमित्रानंदन पंत का स्थान एवं महत्व

13.4 पाठ सार

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

13.6 शब्द संपदा

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का आरंभ भारतेंदु युग (1868-1900ई.) से हुआ। इसे हिंदी साहित्य का पुनर्जागरण-काल कहा गया। इसके बाद द्विवेदी युग आया जिसे जागरण-सुधार काल नाम दिया गया। इस युग की कविताओं में विषय की विविधता तो रही पर उसकी प्रस्तुति में इतिवृत्तात्मकता और नैतिकता प्रधान हो गई जिससे कविता के सूक्ष्म तत्व का ह्रास हुआ। इस क्षतिपूर्ति के लिए व्यक्ति की अंतःअनुभूति, उसके राग, उसकी सौंदर्य लिप्सा, उसके प्रणय भाव और वैश्विक प्रेम जैसी सूक्ष्म अनुभूतियों को अपनी कल्पना शक्ति से कवियों ने शब्दबद्ध किया। उनकी यही लयात्मक शब्दबद्धता छायावादी कविता कहलाई जिसे विद्वानों ने स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह कहा है। "स्थूल शब्द बड़ा व्यापक है। इसकी परिधि में सभी प्रकार

के बाह्य रूप-रंग, घड़ियाँ आदि सन्निहित हैं। और इसके प्रति विद्रोह का अर्थ है उपयोगितावाद के प्रति भावुकता का विद्रोह, नैतिक रूढ़ियों के प्रति मानसिक स्वातंत्र्य का विद्रोह और काव्य के बंधनों के प्रति स्वच्छंद कल्पना और टेकनीक का विद्रोह।" (नगेंद्र)

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वातंत्र्य चेतना, विविधता, भावुकता, कल्पना और विद्रोह इत्यादि तत्व छायावादी कविता में प्रमुख रहे हैं। साथ ही अंतश्चेतना से साक्षात्कार करना कवियों का मुख्य भाव रहा है। इस कविता की एक अनन्य विशिष्टता है मनुष्य के साथ प्रकृति का तादात्म्य बिठाना। छायावाद के बृहतत्रयी (प्रसाद, निराला, पंत) और कवि चतुष्ट्य (बृहतत्रयी के साथ महादेवी वर्मा) में यह विशिष्टता सर्वाधिक सुमित्रानंदन पंत में देखने को मिलती है। इन्हें 'प्रकृति के सुकुमार कवि' के रूप में जाना जाता है। इस इकाई में आप हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के अंतर्गत छायावादी काव्यधारा के एक प्रमुख कवि सुमित्रानंदन पंत के बारे में पढ़ेंगे।

13.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- सुमित्रानंदन पंत के व्यक्तित्व को जान सकेंगे।
- उनके कृतित्व का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- उनकी छायावादी रचनाओं का विस्तार से परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- उनकी साहित्यिक चेतना के विकास क्रम से अवगत हो सकेंगे।
- उनकी कविताओं के कला पक्ष (भाषा-शैली) के बारे में जान सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : सुमित्रानंदन पंत : एक परिचय

13.3.1 सुमित्रानंदन पंत का जीवन परिचय

सुमित्रानंदन पंत (1900-1977) का जन्म अल्मोड़ा जिला के कौसानी गाँव में हुआ था। अल्मोड़ा पहले उत्तरप्रदेश का हिस्सा था। 2001 में जब उत्तराखंड राज्य बना तब यह इसके हिस्से में आ गया। इन्हें जन्म देने के छः घंटे बाद ही इनकी माँ स्वर्ग सिधार गई। माँ के स्नेह से वंचित इस शिशु का पालन-पोषण पिता और प्रकृति के संरक्षण में हुआ। इनकी माँ का नाम

'सरस्वती' और पिता का नाम 'गंगादत्त पंत' था। इनके घर का वातावरण धार्मिक था जिसका इनके जीवन पर भी प्रभाव पड़ा। प्रकृति से इनका लगाव अधिक गहरा था। इस दुधमुहें बालक ने माँ के स्नेहास्पर्श की अनुभूति अपनी दादी और फूफी के साथ ही प्रकृति की गोद में भी पाई। इस निस्संग राग और संग से ही इस बालक का व्यक्तित्व निर्मित हुआ। कवि पंत और उनके विराट कवित्व की मुख्य प्रेरक शक्ति यह प्रकृति है। नगेन्द्र पंत का रूपचित्र खींचते हुए लिखते हैं, "गौर वर्ण, मांसल-सा शरीर, घुंघराले रेशमी बाल और गंभीर मंथन आकृति वाला यह नवयुवक कवि एक विशेष कवित्वपूर्ण व्यक्तित्व रखता है जिसका प्रभाव देखने वाले पर अनिर्वच और स्थायी होता है। पंतजी स्वभाव से ही संकोचशील और मितभाषी हैं। उनकी आँखों में एक स्निग्ध स्वच्छता है जो उनकी मननशील निर्मल आत्मा का परिचय देती है।"

पं. शांतिप्रिय द्विवेदी ने उनकी उन विशेषताओं का उल्लेख किया है जो उन्हें 'चिर मोह के प्रबल बंधन लगे', द्रष्टव्य है - संगीतमय सुमधुर स्वर, निर्विकार दृष्टि निमेष, विनम्र, निश्छल वार्तालाप इत्यादि। एक पूर्ण मनुष्य के रूप में पंत सदा आत्मविश्वास से पूर्ण और अभिमानशून्य रहे। सभी के प्रति विनम्रता और आदर का भाव रखना भी उनकी एक विशिष्टता है। संस्कृत, बंगला और अंग्रेजी भाषा का इन्होंने स्वतंत्र रूप से अध्ययन किया। इस अध्ययन का आधार उन भाषाओं की काव्यशालाएँ भी रहीं। विधिवत विद्यालय की भी शिक्षा इन्होंने ली पर प्रकृति की पाठशाला में स्वाध्याय और चिंतन से अधिक सीखा। औपचारिक शिक्षा के साथ संगीत की शिक्षा भी इन्होंने पाई। अपने एकांतप्रेमी और जनभीरु व्यक्तित्व का उल्लेख करते हुए स्वयं पंत लिखते हैं, "प्रकृति के साहचर्य ने जहाँ एक ओर मुझे सौंदर्य, स्वप्न और कल्पनाजीवी बनाया वहां दूसरी ओर जनभीरु भी बना दिया। यही कारण है कि जन समूहों से अब भी मैं दूर भागता हूँ, और मेरे आलोचकों का यह कहना कुछ अंश तक ठीक ही है कि मेरी कल्पना लोगों के सामने आने में लजाती है।" उनका विपुल साहित्य संसार इस बात का प्रमाण है कि उन्होंने अपनी जन भीरुता का त्याग किया।

1919 में पंत प्रयाग आए विद्याध्ययन के लिए और 1929 तक वहीं रहे। इस अवधि में उनहोंने पाश्चात्य साहित्यकारों का गहन अध्ययन किया। इसी अवधि में उन्होंने शेली, कीट्स और टेनिसन जैसे कवियों को पढ़ा। कालिदास कृत रघुवंश के साथ ही रवींद्रनाथ टैगोर और सरोजिनी नायडू के गीतों का विशेष अध्ययन इन्होंने किया। मैथिलीशरण गुप्त की भारत

भारती, जयद्रथ वध इत्यादि इनकी प्रिय रचनाएँ हैं। लेखन और पाठन का क्रम संग-संग चलता रहा।

बोध प्रश्न

- सुमित्रानंदन के व्यक्तित्व की क्या विशेषता है?
- सुमित्रानंदन पंत ने अपने अध्ययनकाल में किन विद्वानों की रचनाओं का अध्ययन किया?

13.3.2 सुमित्रानंदन पंत की रचना यात्रा

हिंदी साहित्य में किशोरावस्था से ही पंत रचना करने लगे। रचना करने की प्रेरणा उन्हें प्रकृति से मिली। उनके शब्दों में, "कविता करने की प्रेरणा मुझे सबसे पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली है, जिसका श्रेय मेरी जन्मभूमि कूर्माचल प्रदेश को है।" अल्मोड़ा की खूबसूरत-मनमोहक वादियों में कविकंठ से मधुमय गान सहसा फूट पड़ा। इनकी आरंभिक रचनाएँ गिरजा का घंटा, कागज के फूल और सिगरेट का धुआं है। इनमें क्रमशः उन्होंने जिन भावों को प्रकट किया है वे हैं- '1) प्रभु ही पापमुक्त करता है। यह गिरजे का घंटा हम नींद में सोए बेखबर लोगों को जगाकर; उस गिरजाघर में जाने के लिए प्रेरित करता है। 2) कागज के फूल कृत्रिम हैं। इनका रूप निखर हुआ लगता है पर ये मधु, सुगंध और कोमल स्पर्श आदि गुणों से शून्य हैं। भौंरा इनकी ओर किस आशा से आएगा। प्रेम मिलन के लिए स्वभाविकता अनिवार्य है। कृत्रिमता हृदय को स्पंदित नहीं कर सकता है। 3) 'धुआं' को कवि ने स्वतंत्रता का प्रेमी और पुजारी माना है। वह उस हृदय में भी नहीं रहना चाहता जहाँ ईश्वर का निवास है। वह उड़ जाता है।' बहुत छोटी उम्र में इन्होंने एक उपन्यास लिखा 'हार' (1916-17)। इसका प्रकाशन उस समय नहीं करवाया। यह उपन्यास 1960 में प्रकाशित हुआ। इसी वर्ष उनकी आत्मकथा 'साठ वर्ष : एक रेखांकन' भी प्रकाशित हुआ। गद्य साहित्य के अंतर्गत उनकी 'पाँच कहानियाँ' 1936 में प्रकाशित हुई।

आलोचना के क्षेत्र में भी पंत का योगदान रहा। इस क्षेत्र की उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं- गद्यपथ (1953), शिल्प और दर्शन (1961) तथा छायावाद : पुनर्मूल्यांकन (1965)इत्यादि। काव्य के क्षेत्र में उन्होंने विपुल लेखन किया। उनकी कुछ प्रमुख काव्यकृतियों का नामोल्लेख यहाँ किया जा रहा है, देखें- वीणा (1927), ग्रंथि (1929), पल्लव (1926), गुंजन (1932), ज्योत्सना (1934), युगांत (1936), युगवाणी (1939), ग्राम्या (1940), स्वर्णकिरण (1947), स्वर्णधूलि (1947), मधु ज्वाल, उमर खैय्याम का भावानुवाद, खादी के फूल (1948), युगपथ

(1949), उत्तरा (1949), रजत शिखर (1952), शिल्पी, अतिमा (1955), सौवर्ण (1956), वाणी (1958), कला और बूढा चाँद (1959), लोकायतन (1964), सत्यकाम (1975) इत्यादि। पंत का पहला महाकाव्य 'लोकायतन' है। इसके बाद भी लगातार कई काव्य संग्रह आए, जैसे- किरण वीणा, पुरुषोत्तम राम, गीत हंस, पौ फटने से पहले, पतझर, एकभाव क्रांति, शंख ध्वनि (1971), शशि की तरी, समाधिता, आस्था, संक्रांति, सत्यकाम और गीत-अगीत (1977)। पंत की काव्यकला का चरमोत्कर्ष 'पल्लव' में ही देखने को मिलता है। अलौकिकता से लौकिकता की ओर बढ़े। इन्होंने 1938 में 'रूपाभ' पत्रिका का संपादन भी किया। इनकी कृति चिदंबरा के लिए इन्हें 1969 में भारतीय ज्ञानपीठ से सम्मानित किया गया। इससे पूर्व 1961 में उन्हें भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण की उपाधि से नवाजा गया था।

बोध प्रश्न

- सुमित्रानंदन पंत की आरंभिक रचनाओं का परिचय दें।
- पंत की काव्यकला का चरमोत्कर्ष किस रचना में देखने को मिलता है?

13.3.3 सुमित्रानंदन पंत की छायावादी कविताओं का परिचय

वीणा (1927)

वीणा काव्य संग्रह की कविताओं का रचनाकाल 1918-20 का है। अधिकांश कविताएँ 1918-19 की ही हैं। बहुत कम कविताएँ 1920 की हैं। इस युवा कवि का 'माँ' के प्रति अनुराग भरा गान है 'वीणा'। यह माँ कभी परमात्मा बन जाती है तो कभी प्रियतम है। यह 'माँ' वीणावादिनी है जिन्हें कवि अपनी कृति वीणा समर्पित करते हैं, देखें- "यह तो तुतली बोली में है/ एक बालिका का अधिकार;/ यह अति अस्फुट, ध्वन्यात्मक है,/ बिना व्याकरण, बिना विचार!/ इस बोली में कौन सुनेगा/ इसकी वीणा को निस्सार?/ ताल लय रहित मेरी वीणा/ वीणा वादिनी, कर स्वीकार!"(पंत:1918, उत्सर्ग)।

कवि ने अपनी वीणा को अत्यंत साधारण और समस्त गुणहीन कहा है। यह कवि की विनम्रता है। अपनी गुणहीन रचना को उन्होंने माँ सरस्वती को अर्पित किया है। इसमें एक सामान्य मनोविज्ञान भी है कि माँ अपनी संतान को बिना गुण-दोष का आंकलन किए स्वीकार करती है। विद्या और कला की विराट देवी सरस्वती को अपना बाल प्रयास अर्पण करने से पूर्व कवि उनका गुणगान करते हैं। इस कविता की जो 'बालिका' है वह कवि स्वयं हैं। यह अपने कंठ

से निरंतर माँ का गुणगान करना चाहती है। दिव्यता का दिव्य गान उसकी पूर्णता में कर सकने में मर्त्य मनुष्य किस हद तक सक्षम हो सकता है! अपने सुत की व्याकुलता को समझ और उसकी आत्मिक शुचिता को जानकर माँ ने उसे आश्वस्त किया कि वह उसे अपने गीत, ताल-छंद सब बतला देंगी, देखें- “बोली थी-मैं बतलाऊँगी/ तुझको अपने गीत पुनीत/ नूपुर ध्वनि कर श्रुति सुखकर!/ ....जीवन भर भी माँ! मैं पूरे/ गा न सकूँगी तेरे गीत/ अपनी वाणी में स्वर भर!” (पंत:1919, वीणा)। कविता के इस अंश की अग्रिम पंक्तियाँ कवि की कल्पना हैं। विराट सत्ता सत्य है। उसकी अनुभूति की जा सकती है। उसके साक्षात्कार की चरम अनुभूति कठिन साधना खोजती है। रामकृष्ण परमहंस की सी साधना। यहाँ कवि ने दिखाया है कि माँ से साक्षात सहज संभव है और वह अपने संतान की विकलता को हरने के लिए सदा आतुर रहती है। उसके स्वरूप की विराटता का ज्ञान होते ही कवि को अपनी सीमा का भी ज्ञान हो जाता है।

‘वीणा’ के माध्यम से कवि ने सृष्टि के असीम और अमर्त्य सौंदर्य एवं गुण का प्रेममय प्रार्थनागान किया है। वह बालिका इन गीतों को गा-गाकर खेलती थी। उसके बालमन में जब चिंता व्यापी कि मेरे सारे गीत जब खत्म हो जाएँगे तब मैं क्या गाकर खेलूँगी? तब माँ ने उसे अपने विद्या-वैभव को सिखलाने का वचन दिया। उसकी इस चिंता को हरने के लिए माँ ने यह वचन दिया। माँ कितनी स्नेही होती है और बच्चे कितने निश्छल! विराटता निश्छलता के समीप सहज ही वास करती है। माँ के प्रति उनके प्रार्थना गीतों में प्रकृति का बहुत सुंदर चित्र छाया है। उस प्रकृति का एक अंग बनकर शोभित होने की कवि कामना करते हैं। “नव वसंत का विकसित वन,/ मधुमय मन मृदु सुरभित तन/ एक कुसुम कलिका उस तन की/ मुझको भी कहलाने दो।” प्राकृतिक आपदा और मानवजन्य आपदा का भी संक्षिप्त चित्रण किया गया है।

दुनिया में अंधकार छाया है। यहाँ जो दीखता है वह नहीं होता है। जो केवल सीधा देखना जानता है वह इस मायाजाल में उलझ ही जाता है। इस ‘तिमिर त्रास’ को हरने के लिए ‘माँ की उस आभा’ को कवि पाना चाहता है जिसका उनके हृदय में स्वतः निवास है। भौतिक जीवन में जिस माँ का खालीपन कवि ने महसूस किया है उसी को अपनी साहित्य साधना और आध्यात्मिक चेतना में भरने का प्रयास उनकी कविताओं में दिखाई देता है। सबको सबकुछ देने का आग्रह करते हुए कवि माँ का सानिध्य पाना चाहते हैं। कविता को उन्होंने अपनी प्रेयसी कहकर संबोधित किया है। वे वेदना को भी अपने गीतों से जीवन देना चाहते हैं। उसे जिलाना

चाहते हैं। एक दार्शनिकता का पुट भी यहाँ मिलता है। कभी-कभी निराशाएँ उन्हें घेरती हैं पर तुरंत ही वे सचेत होकर आशा के गीत गाने लगते हैं। विशिष्ट, सामान्य से विशिष्ट क्यों? इस समस्या का चित्र खींचा गया है। साथ ही निदान भी कर दिया गया कि विशिष्टता का वह विशिष्ट सम्मान सामान्य जन की उनके प्रति भक्ति का सूचक है। इस संग्रह के गीत द्वैतरहित प्रेम की भावना का पोषण करते हैं। एक भिक्षुक को भिक्षा भी प्रेम से देना है। वीणा की कविताओं में प्रसाद गुण की प्रधानता है। छंद, अलंकार और शब्द विन्यास की योजना प्रभावी है। प्राकृतिक उपमानों की झड़ी लगी हुई है।

ग्रंथि (1929)

प्रेमकाव्य 'ग्रंथि' 1920 के जनवरी महीने में लिखी गई। यह मनुष्य लोक की विशुद्ध प्रेम गाथा है। यह स्वयं कवि के प्रेम और विरह की कहानी है। अपनी प्रेमकथा और जीवन व्यथा को उन्होंने कविता की पंक्तियों में व्यक्त भी किया है। उनके प्रेम की कथा बहुत छोटी है। एक बार संध्या के समय नाव से कहीं जाते हुए; कवि की नाव डूब गई थी। वे किसी तरह किनारे लग गए थे। जब उनकी आँख खुली तो उन्होंने अपने सिर को किसी पर्वतीय सुंदरी की जाँघ पर रखा पाया। वे अपनी स्थिति समझ पाते उससे पहले ही उनका नयन मिलाप उस कन्या से हो चुका था। नयनों का यह प्रथम स्पर्श उन्हें प्रेमानुभूति करा गई। वे दोनों ही प्रेम बंधन में बांध गए। यह प्रेम सात फेरों के गठबंधन तक नहीं पहुँच सका। इसके पीछे कुछ सामाजिक कारण रहे होंगे। समाज को उनका साथ स्वीकार नहीं हुआ। उस सुंदरी का किसी और के साथ विवाह संपन्न हो गया। इस कृति में यह उल्लेख है कि अपनी प्रेमिका के विवाह के दिन कवि बहुत व्याकुल थे। कवि का यह प्रेम, आजीवन के विरह में परिणत हो गया था। कवि का यह विरह हिंदी साहित्य के लिए वरदान बना और हिंदी के साहित्य भंडार में प्रेमगीत का आविर्भाव हुआ। यदि अपने को विरह की ग्रंथि में वे समेटे रहते तो उनका ही अस्तित्व नहीं बचता! फिर दुनिया उनसे क्या पाता! बिना रुके लगातार आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा भी यहाँ है। विद्वानों ने इस पर संस्कृत काव्य की आलंकारिक प्रणाली का प्रभाव देखा है। शृंगार रस के अंतर्गत संचारी भाव और वियोग शृंगार का भावमय चित्रण किया गया है।

प्रेम: बस, बिना सोचे, हृदय को छीनकर/ सौंप देते हो अपरिचित हाथ में!

विरह: उठ किसी निर्जन विपिन में बैठकर। अश्रुओं की बाढ़ में अपनी बिकी/ भग्न भावी को डुबा दे आँख सी!

परिहास: "तीसरी बोली,'बहुत दिन से'/ बंधे हृदय में संयम गोपन से पला/ प्रेम संप्रति फूटना चाहता है।"

प्रणय: "जब प्रणय का प्रथम परिचय मूकता।/ दे चुकी थी हृदय को तब यत्न से।

आशा: "अमृत आशा! चिर दुःख की सहचरी/ नित नई मिति सी मनोरम रूप सी।"

अश्रु: "ओस जल से सजल मेरे अश्रु हैं/ पलक दल में दूब के बिखरे पड़े!"

वेदना: "वेदना! – कैसा करुण उद्गार है!/ वेदना ही है अखिल ब्रह्मांड यह।"

उन्माद: "आह, उस सर्वोच्च पद की कल्पना/ विश्व का कैसा उपल उन्माद है।"

व्यंग्य: "सुहृदवर! कंगाल, कृश कंकाल सा,/ भैरवी से भी सुरीला है अहा।"

कंगाल घर-बार हीन होता है। प्रेमवंचित लोगों को भी कवि ने इसी श्रेणी में रखा है। चित्रभाषा का प्रयोग आदि से अंत तक देखने को मिलता है। "गर्व सा गिर उच्च निर्झर स्रोत से/ स्वप्न सुख मेरा शिलामय हृदय में/ घोष भीषण कर रहा है वज्र सा,/ वात सा, भूकंप सा, उत्पात सा!/ तारकों के अचल पुलकों से विपुल/ मौन विस्मय छीन कर मेरा पतन/ निर्निमेष विलोकता है विश्व की/ भीरुता को चंद्रमा की ज्योति में!" यहाँ अपनी भावनाओं को प्रकट करते हुए, उससे मेल खाते प्रकृति का चित्र खींचा गया है। इससे कविता का कथ्य प्रभावी हुआ है। समाज की जिन रूढ़ मान्यताओं के सम्मुख व्यक्ति की सु-आशा को तिलांजलि दी जाती है; वह वास्तव में 'विश्व की भीरुता' है। यह विश्व कवि के अनुसार विधाता की मनोहर भूल है। संसार की ऐसी मधुर दुर्बलताएँ उसकी लीला में सहायक होती हैं। मनुष्य यदि अपनी रोजमर्रा पर ध्यान दे तो उसे खुद नहीं पता रहता है कि वास्तव में उसे क्या चाहिए! वह किन चीजों के पीछे किसलिए भाग रहा है! अपनी भावनाओं को रूप देते हुए प्रकृति के साथ उसका तादातम्य बिठाते हुए; बहुत सी गूढ़ बातों की ओर इशारा किया गया है। तीन सखियों के वार्तालाप से इस प्रेमकाव्य का आरंभ होता है। तीसरी सखी अपने प्रणय की स्मृतियों को सुनाती है। प्रियतम को खोजती उस सखी के प्रणय गान पर मुग्ध होकर पहली सखी उसे प्रेम का मर्म बतलाती है जिसे सुनकर तीसरी सखी कह उठती है तुमने मेरी सरस कथा को धूल में मिला दिया। तब आते हैं, 'अब इधर'

कहते हुए कवि अपने आत्मकथ्य के साथ। आखिर में इन्होंने 'प्रेमवंचित' का विश्लेषण किया गया है।

वीणा की भांति इसमें सीधे-सहज तरीके से भावों को व्यंजित न करते हुए, उनकी वक्र व्यंजना की गई है। विविध भावों को दर्शाने के लिए उपमाओं का चित्रमय प्रयोग बहुलता में किया गया है। श्लेष, मानवीकरण, विशेषण विपर्यय और विरोधाभास इत्यादि अलंकारों का भी प्रयोग किया गया है।

पल्लव (1926)

ग्रंथि', 'उच्छवास' और 'आँसू' स्वतंत्र और स्वयं में पूर्ण प्रेमकाव्य हैं। 'पल्लव' के आरंभ में 'उच्छवास' और 'आँसू' को संकलित किया गया है। इन प्रेम कविताओं का आधार संग्रह की पहली कविता का शीर्षक 'पल्लव' ही है। इसमें 'पल्लव' की सार्थकता पर प्रकाश डाला गया है। "हृदय के प्रणय कुञ्ज में लीन/ मूक कोकिल की मादक गान/ बहा जब तन, मन, बंधन-हीन/ मधुरता से अपनी अनजान;/ खिल उठी रोओं सी तत्काल/ पल्लवों की यह पुलकित-डाल!" नए पल्लव का आना वसंत के आगमन का सूचक है। वसंत में प्रकृति का शृंगार ये नव पल्लव, नव कोंपल, नए फूल- ये सब मिलकर करते हैं। यह शृंगार जब कोयल की सुरीली मदहोश करने वाली आवाज को सुनता है तब झूम उठता है। कोयल की कूक के साथ सारी प्रकृति झूम उठती है। पर कोयल अपनी मधुर आवाज के गुण को नहीं जानती है। वह नहीं जानती कि उसकी आवाज के जादू से ही इन पल्लवों का रोम-रोम हर्षित हो रहा है। ये पल्लव कवि की स्वतः स्फूर्त कविताएँ हैं जो जग-जीवन में नया संचार करने आई हैं। कवि प्रकृति से प्रेम करता है। इसीलिए उसे सरलता प्रिय है। इसीसे उसे बचपन प्रिय है। भोले और निष्पाप बचपन को उन्होंने अपनी 'शिशु' कविता के माध्यम से दिखाया है।

कवि का प्रेम भी तो निष्पाप था और उसकी प्रेयसी भोली, जो आज भी उनकी यादों में रहती है। "सरल-शैशव की सुखद-सुधि-सी वही/ बालिका मेरी मनोरम मित्र थी।" कवि का हृदय प्रेम के टूटने के दंश से व्यथित है। अपनी वेदना में उसे यह संसार सभी निरपराधों के लिए एक जेल की तरह लगता है। मनुष्य अपनी दुनिया में एक कैदी है। उसे अपना जीवन अपनी पसंद से जीने की भी स्वतंत्रता नहीं है। "अभी पल्लवित हुआ था स्नेह,/ लाज का भी न गया था राग;/ पड़ा पाला-सा हा! संदेह/ कर दिया वह नव राग विराग।" (उच्छवास)। पुनः उनकी वेदना फूटती

है और वे कह उठते हैं, "आह, यह मेरा गीला-गान!/ वर्ण-वर्ण है उर का कंपन,/ शब्द-शब्द है सुधि का दंशन;/ चरण-चरण है आह/ कथा है कण-कण करुण अथाह;/ बूंद में है बाडव का दाह।" (आँसू)। एक-एक शब्द वेदना का साकार रूप बन सम्मुख खड़े हैं। और भी बहुत सी कविताएँ हैं। प्रकृति चित्रण भी विशिष्ट है। बादल, झरना, फूल, हिलोरें मारती लहरें, तारें, उल्लू, झींगुर, पपीहा, पत्ते, कांटे, अंधकार, अवसाद, वसंत - इन सबका अनेकानेक शब्दमय चित्र यहाँ सुलभ है। इसके साथ दार्शनिक चिंतन, रहस्यवाद, ब्रह्म, माया और जीवन का सार जैसे गंभीर विषय भी हैं। जीवन का गान क्या है? यह सुख के आरंभ और अंत का ही गान है। इसकी चर्चा अगली इकाई में विस्तार से की जाएगी।

गुंजन (1932)

इस काव्यसंग्रह को पंत अपने प्राणों का उन्मन गुंजन कहते हैं। इसमें उन्होंने जीवन गान संबंधी कविताओं को संकलित किया है। संसार में सुख-दुःख, फूल-शूल, मिलन-विरह सबकुछ है। किसके हृदय में क्या है यह देखने की कोशिश में वे पाते हैं कि सबका जीवन सुख-दुःख का मिलाजुला रूप है। सुख से दुःख को अपनाने की कला जिसको आती है वही सुखमय जीवन जी पाता है। आत्मा, जीवन और सुख-दुःख जैसे भावों का दार्शनिक विवेचन किया गया है। इनकी अंतरंगता को खोजते हुए भी प्रकृति नहीं छूटती। भावी पत्नी के प्रति शीर्षक कविता में कवि की स्त्री के प्रति भावनाएँ उजागर हुई हैं। आज रहने दो गृह काज में भी उन्होंने 'प्राण' शब्द से पत्नी को संबोधित किया है। मधुबन, विहग, चाँदनी, तारा, अप्सरा और नौका विहार को संबोधित करते हुए गीत भी हैं। तप, आत्मसंयम और सुख-दुःख के प्रति तटस्थता वाला जीवन दर्शन यहाँ दिखाई देता है। कवि सौंदर्यसाधक एवं सौंदर्याभिलाषी हैं। इसीसे वे जीवन की सुंदरता की कल्पना करते हैं, "मेरा प्रतिपल सुंदर हो/ प्रतिदिन सुखकर सुंदर हो/ यह पल-पल का लघु जीवन/ सुंदर सुखकर, शुचितर हो!" यह 1926-31 के मध्य का मधु संचय है। जीवन में सुख हो, सुंदरता हो और पवित्रता हो। जीवन विकृतिहीन और प्रेममय हो।

ज्योत्सना (1934)

यह काव्य नाटिका है। इसमें पाँच अंक हैं। संध्या और छाया की परस्पर बातचीत के माध्यम से यह सूचना प्रसारित होती है कि इंद्र धरती पर सुव्यवस्था कायम करने के लिए ज्योत्सना को शासन की शक्ति थमाता है। ज्योत्सना, पवन और सुरभि तीनों पृथ्वी पर हैं। पृथ्वी

का आधुनिक काल अपने चरम पर है। चारों ओर शक्ति का बोलबाला है। धर्म, नीति और सदाचार दुबके पड़े हुए हैं। अंधविश्वास और रूढ़ियों के अंधानुकरण से मानव जीवन का सौंदर्य मंद पड़ गया है। उनके चेतनाविहीन जीवन में नव चैतन्य का संचार करने के लिए ज्योत्सना कला का मार्ग ढूढ़ती है। यह कला काव्य और संगीत है जो मानव के मन में स्वप्न और कल्पना के सहारे प्रवेश पाते हैं। ठीक वैसे जैसे पवन और सुरभि मानव काया में प्रवेश पा सकते हैं। इसी से कवि ने पवन और सुरभि को स्वप्न और कल्पना का रूपक बनाया है। इनके प्रयास से ही संसार आभा को पा सकता है और उसकी जड़ चेतना मिट सकती है। मनुष्य के भीतर आलोकित उसकी नव भावनाएँ उसके अंतःकरण के साथ बाह्य वातावरण को भी प्रकाशित कर सकता है। विश्वबंधुत्व के स्वप्न को साकार करने के लिए मानव समाज के तमाम सद्‌गुणों की कवि ने मानव मन में प्रतिष्ठा की है। समानता, प्रेम, दया, भक्ति, करुणा, शक्ति, दया, निष्काम कर्म इत्यादि सद्‌गुणों के छा जाने से तमाम कुवृत्तियां और दुर्गुण अंधकार में खो जाते हैं। अब सारी धरा पर प्रकाश-ही-प्रकाश है।

नाटकीयता का तत्व कम होने से भी यह एक सफल काव्य नाटिका के रूप में हिंदी साहित्य में समादृत है। इसका सिद्धांत संपन्न भावना चित्र मनुष्यता का पक्षधर है। इस पर शेली के नाटकों का प्रभाव देखा गया है। मानव जीवन के विकास बिंदुओ को एक क्रम में देखने की चेष्टा यहाँ दिखाई देती है साथ ही 'मानव मंगल' के साथ समस्त भूमंडल की एकात्मकता की कामना भी।

युगांत (1936)

इस संग्रह की कविताओं को कवि ने स्वयं अपना नया प्रयास कहा है जो पल्लव से एकदम अलग है। इसका विषय और प्रतिपादन शैली पल्लव से अलग है। इसीसे इसका नाम भी सार्थक लगता है कि यह एक युग के अंत का सूचक है। पल्लव जिसे छायावाद की उत्कृष्ट कृति माना गया; उससे नितांत भिन्न रूप में युगांत की रचनाओं को रचा गया। हर परिवर्तन या नयापन कुछ समय गतिमान रहने के बाद कुछ रुढियों में जकड़ जाता है जिससे स्थिरता पैदा होती है। स्थिरता अंत का पर्याय है। नया जीवन आता रहे, संसार चलता रहे इसलिए कवि कोयल से अग्निकण बरसाने को कहते हैं। वे अग्निकण पुरानी रूढ़ियों का अंत करेंगें और नया मानवपन

संसार में लाएँगे। “गा कोकिल बरसा पावक कण/ नष्ट-भ्रष्ट हो जीर्ण पुरातन,/ ध्वंस-भ्रंश जग के जड़ बंधन!/ पावक पग धर आवे नूतन,/ हो पल्लवित नवल मानवपन!”

इस संसार में नए वसंत का प्रभात लाना चाहता है। यह वसंत केवल मानव जीवन में नहीं प्रकृति का भी स्वर्गिक शृंगार करे। “कलि के पलकों में मिलन स्वप्न,/ अलि के अंतर में प्रिय गान/ लेकर आया, प्रेमी वसंत-/ आकुल जड़-चेतन स्नेह-प्राण!” प्रकृति चित्रण भी यहाँ भरपूर किया गया है। इसमें और पूर्व के प्रकृति चित्रण की भिन्नता यह है कि पहले प्रकृति का चित्रण करते हुए कवि उसे अपनी भावनाओं का व्यंजक बनाता था पर इस बार प्रकृति का प्रयोग कर वे मानव जीवन में भाव भर रहे हैं; उसे प्रेरित कर रहे हैं। इस प्रेरित करने के भाव को उस युग की आवश्यकता के अनुरूप देख सकते हैं। प्रकृति का हर अंग, हर कण सुंदरतम है पर मानव का जीवन मलिन है। यह देखकर कवि पूछते हैं, “क्यों म्लान तुम्हारे कुंज, कुसुम, आतप, खग?/ जो एक असीम अखंड मधुर व्यापकता/ खो गई तुम्हारी वह जीवन सार्थकता!/ लगती विश्री औ’ विकृत आज मानव कृति/ एकत्व शून्य है विश्व मानवी-संस्कृति!” पशु-पक्षी संग-संग गुंजार कर रहे हैं। सारा संसार ऐसे खिला है मानो सौ दलों वाला कमल हो पर मनुष्य श्रीहीन और तेजहीन हो गया है। अपने संस्कारों से च्युत वह प्रभाहीन और स्वघाती हो गया है। इस मानव की खोई हुई एकता को वापस लाना इन कविताओं का एक ध्येय रहा है। मानव जीवन की विकृतियों के कारणों की खोज भी की गई है। प्रथम मिलन और प्रेम की भी कुछ कविताएँ हैं। मुख्य स्वर मानवतावाद ही रहा है। जीवन की दुर्दशा पर कवि का क्षोभ उनकी ताज कविता में भी प्रकट हुआ है, “मानव! ऐसी भी क्या विरक्ति जीवन के प्रति?/ आत्मा का अपमान प्रेत औ छाया से रति!!”तितली और संध्या का संक्षिप्त शब्द चित्र बनाते हुए कवि ने एक लंबी कविता लिखी है ‘बापू के प्रति’। इसमें देश और समाज के हित में बापू के द्वारा किए गए कार्यों का कवित्वपूर्ण उल्लेख है। असहयोग आंदोलन के दौरान एक बार कवि ने महात्मा गांधी का व्याख्यान सुना था। ये उनसे अवश्य प्रभावित हुए थे, तभी बापू के लिए लिख सके, “तुम रक्तहीन तुम मांसहीन/ हे अस्थिशेष तुम अस्थिहीन।” पंत ने बापू का विराट महामानव की तरह चित्र खींचा है।

बोध प्रश्न

- ‘वीणा’ की रचनाओं में कवि ने क्या भाव भरे हैं?
- ‘ज्योत्सना’ काव्य नाटक में कितने अंक हैं?

13.3.4 हिंदी साहित्य में सुमित्रानंदन पंत का स्थान एवं महत्व

हिंदी साहित्य में पंत का रचना काल छायावाद से आरंभ होकर नई कविता तक छाया रहा। युग की आवश्यकता और चेतना के अनुरूप इनके साहित्य का स्वर भी परिवर्तित होता रह। अपनी बेजोड़ कल्पना के लिए उनके समृद्ध शब्द ज्ञान के लिए उनके सहयोगी उन्हें 'मशीनरी ऑफ़ वड्र्स' कहते थे। काव्य के क्षेत्र में उन्होंने भाषा में कोमलता डाली। ब्रजभाषा से सीधे खड़ीबोली हिंदी में कविता करना साहित्य के मानकों पर उचित था। ब्रज की जिस मिठास का आदी साहित्य समाज रहा उसकी खड़ी बोली में तब कमी महसूस हुई। इस कमी को पाटने के लिए और काव्य भाषा को लालित्यपूर्ण रखने की सोच के साथ ही कवियों ने कई प्रयोग किए। शब्द और भाषा पर किए गए पंत के प्रयोगों का भी मूल आशय यही रहा। भले इससे शब्द का आडंबर बढ़ा हो पर ध्येय आडंबर को जन्म देना नहीं था।

खड़ी बोली के काव्यात्मक प्रयोग में लालित्य और मिठास बरक़रार रखना ही अभीष्ट था। राहुल सांकृत्यायन के शब्दों में, "एक सच्चे पारखी की तरह पंत ने त्रिकाल से मौजूदा शब्दों को सेर छटांक में नहीं, रत्ती और परमाणुओं के भार में तौलकर उनके मोल को बड़ी बारीकी से आँका, और उसे किसी यूनानी प्रस्तर-शिल्पी की भांति अपनी छेनी और हथौड़े के बहुत कोमल और दृढ़ हाथों से काटा-छांटा, उसे सुंदर भावों के प्रगट करने का माध्यम बनाया। शब्दों के सुंदर निर्माण और विन्यास में पंत अद्वितीय हैं।" हिंदी में सुंदर शब्दों का निर्माण और प्रयोग, पंत की मौलिक देन है। ऐसा शब्द विन्यास उनके समकालीनों में भी देखने को नहीं मिला। भाषा के रुढ स्वरूप को गतिमान किया। इसके लिए भाषा की लाक्षणिक शक्ति का विकसित होना जरुरी था। इस समस्या की पूर्ति के लिए पश्चिम के अलंकारों (विशेषण विपर्यय, मानवीकरण, ध्वनि चित्रण) को अपनाया गया। अलंकारों को भी लाक्षणिक रूप में प्रयोग किया जाने लगा। अन्योक्ति और समासोक्ति; दृष्टांत से अधिक प्रिय हो गए। साहित्य रचना में मानसिक स्वतंत्रता का वरण किया। छंद और अलंकार के प्रेमी होते हुए भी स्वच्छंद छंद में काव्य रचना का प्रयास भी उल्लेखनीय है।

हिंदी में मुक्त शैली के प्रणयनकर्ताओं में से पंत भी एक हैं। "पंतजी ने हिंदी के कोमल छंदों को चुनकर संगीत और गति का पूर्ण ध्यान रखते हुए भावानुकूल परिवर्तन करते हुए इस कला

को विकसित किया। लय और ताल के आधार पर निराला जी ने स्वच्छंद छंद की सृष्टि की।" आचार्य शुक्ल ने लाक्षणिकता के प्रयोग में घनानंद के बाद पंत को ही सिद्धहस्त माना है।

बोध प्रश्न

- हिंदी भाषा को पंत की देन पर राहुल सांकृत्यायन के विचार को स्पष्ट कीजिए।
- पंत ने पश्चिम के किन अलंकारों को अपनाया?

13.4 पाठ सार

पहाड़ी वादियों के अनन्य अनुरागी पंत का व्यक्तित्व धीर-गंभीर था। उनकी वेश-भूषा कुछ अनूठी थी जिससे लोग उनका अनुकरण करना चाहते थे। उनके लंबे बालों ने लोगों को अधिक आकर्षित किया। 'महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ और महर्षि अरविंद'- इन सबका प्रभाव उनके जीवन पर पड़ा। उनकी व्यक्तित्व रचना में घर के धार्मिक वातावरण का भी अच्छा प्रभाव रहा। रचनात्मकता की प्रेरणा उन्हें प्रकृति की सुंदरता के सानिध्य में प्राप्त हुआ। गांधीजी का भाषण सुनने के बाद उन्होंने कॉलेज भी छोड़ दिया, भले यह संकोचवश किया। उनकी आरंभिक रचनाएँ उस समय की हस्तलिखित सुधाकर, मर्यादा और अल्मोड़ा अखबार इत्यादि में छपी थी। अब यह अप्राप्य होगी। उनकी प्रथम प्रकाशित कृति जो अब भी मिलती है; वह है, 'वीणा'। यह प्रार्थनापरक होते हुए भी भावना प्रधान है। इस संग्रह की 'प्रथम रश्मि', 'अंधकार', 'चेतक' , 'माँ' इत्यादि कविताएँ अपना ध्यान खींचती हैं। 'चेतक' कविता में ओज गुण है।

प्रथम रश्मि एक जागृति गान है। प्राकृतिक बिंबों से अपने भाव जगत को प्रकट करने में दक्ष कवि इस प्रकृति के हर कण के अंतः को जानने और समझने की दृष्टि रखता है। वह उसकी बाहरी सुंदरता पर ही नहीं रीझता उसके अंतर्मन की पकड़ रखता है। वीणा की भाषा सांकेतिक और लाक्षणिक है। ग्रंथि गीतिकाव्य है। प्रणय इसका केंद्रीय भाव है। एक अविवाहित युवक ने प्रणय के गूढ़ रहस्यों को इसमें खोलकर रख दिया है। अपनी प्रेयसी से बिछोह की ग्रंथि जो कवि के हृदय में बंधी हुई है; उसका 'आह गान' है यह गीतिकाव्य। विरहजन्य दुःख से ही कविता का वरदान मिलता है। इसमें कवि की आत्मकथा और उसकी वेदना के स्वर हैं। इसमें अलंकारों का सायास प्रयोग किया गया है। नगेंद्र के शब्दों में 'पल्लव का अल्हड़ कवि अब एक साथ बड़ा संयत और गंभीर हो गया है।' इस संग्रह की 'तप रे मधुर-मधुर मन' को ऊँची कविता कहा है।

पल्लव में प्रकृति चित्रण और कल्पना तत्व का समन्वय है। भाव, चिंतन और रहस्य को भी कवि ने गूंथा है। पर पहली नजर में केवल प्रकृति ही नजर आती है। 'गुंजन' कवि के जीवन का मधुसंचय है। ज्योत्सना काव्यनाटिका है। यह लोकमंगल के आदर्श से प्रेरित है। पूरे धरा को विकृतियों से मुक्त करके धरती पर स्वर्ग स्थापित करने का प्रयास इसमें दृष्टिगोचर हुआ है। 'युगांत' में मानवतावाद का स्वर तीव्र हुआ है और कवि ने अपना मूड यहाँ से बदलना आरंभ किया। छायावाद के अंत के साथ जिस नए काव्ययुग और युग के अनुकूल भाषा को गढ़ने और साहित्य रचने की ओर कवि एक बार फिर प्रवृत्त हुआ; युगांत को उसकी पृष्ठभूमि माना जा सकता है।

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. सुमित्रानंदन पंत छायावाद के अग्रणी रचनाकार हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उन्हें छायावाद का प्रथम कवि माना है।
2. पंत ने हिंदी काव्य-भाषा को द्विवेदीयुगीन इतिवृत्तात्मकता से मुक्त करके नए छायावादी प्रतीकों और बिंबों की स्थापना की।
3. अपनी कविताओं के लय-तान, सुर और सरसता को बनाए रखने के लिए पंत ने व्याकरण की लीक से हटने में भी संकोच नहीं किया। उन्होंने अपने नए प्रयोगों का उल्लेख अपनी कृतियों के प्रवेश भाग में स्वयं किया है।
4. पंत ने ऐसे प्रेमगीतों का सृजन किया जिनमें मनःतत्व प्रधान है। मनुष्य लोक का होते हुए भी यह प्रेम मांसल नहीं है।
5. पंत ने प्रार्थनागीतों की भी रचना की, जिनमें कवि की दार्शनिकता झलकती है।
6. पंत का जीवन दर्शन सुख-दुख के सामंजस्य पर टिका है।
7. पंत के मन में प्रकृति के साथ-साथ स्त्री के प्रति भी असीम अनुराग है। माँ, सखी, प्रेयसी, पत्नी और अप्सरा के रूप में स्त्री इनकी कविताओं में चित्रित है; जिनके प्रति कवि की अत्यंत कोमल भावनाओं का दर्शन होता है।

13.6 शब्द संपदा

1. च्युत = गिरा हुआ
2. तिमिर = अँधेरा
3. त्रास = डर, कष्ट
4. भीरुता = कायरता
5. विशेषण विपर्यय = विशेषण का उचित स्थान पर प्रयोग न करके किसी अमूर्त भाव की अभिव्यक्ति के लिए उसका अलग प्रयोग करना

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. पंत के व्यक्तित्व पर चर्चा कीजिए।
2. पंत की रचना यात्रा पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
3. हिंदी साहित्य को पंत की देन और साहित्य में उनका स्थान क्या है?
4. वीणा से पल्लव तक की रचनाओं में आप कवि की अनुभूति या रचना प्रक्रिया में क्या बदलाव पाते हैं, रेखांकित कीजिए।

खंड (ब)

(—)लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. पंत को रचना की प्रेरणा कहाँ से मिली?
2. 'गुंजन' काव्य संग्रह पर प्रकाश डालिए।
3. 'युगांत' का विवेचन-विश्लेषण कीजिए।

4. पंत की रचनाओं की भाषा-शैली पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. पंत का जन्म कब हुआ था? ( )

(अ) 1800 (आ) 1900 (इ) 1977 (ई) 1902

2. पंत को ज्ञानपीठ पुरस्कार कब मिला? ( )

(अ) 1969 (आ) 1959 (इ) 1926 (ई) 1960

3. उन्हें किस कृति पर ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला? ( )

(अ) वीणा (आ) गुंजन (इ) चिदंबरा (ई) पल्लव

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. ज्योत्सना ....है। इसमें ....अंक हैं।

2. वर्ष .... में पंत को भारत सरकार द्वारा पद्मभूषण सम्मान दिया गया।

3. पल्लव का ....कवि अब एक साथ बड़ा .... और .... हो गया है।

III. सुमेल कीजिए -

1. गुंजन	(अ) 1927
2. युगांत	(आ) 1929
3. वीणा	(इ) 1936
4. ग्रंथि	(ई) 1932

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. सुमित्रानंदन पंत : नगेंद्र
2. आधुनिक कवि(भाग-2) : देव पुरस्कार ग्रंथावली
3. सुमित्रानंदन पंत : रामरतन भटनागर
4. साठ वर्ष - एक रेखांकन : सुमित्रानंदन पंत
5. सुमित्रानंदन पंत : शचीरानी गुर्टू

इकाई 14 : 'पल्लव' : काव्यालोचन

रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना

14.2 उद्देश्य

14.3 मूल पाठ : 'पल्लव' : काव्यालोचन

14.3.1 'पल्लव' का सामान्य परिचय

14.3.2 'पल्लव' पर विभिन्न विद्वानों के दृष्टिकोण

14.3.3 'पल्लव' में वर्णित मुख्य विषय

14.3.4 'पल्लव' का कला पक्ष

14.4 पाठ सार

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

14.6 शब्द संपदा

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

14.8 पठनीय पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

'पल्लव' (1926) सुमित्रानंदन पंत की काव्यकृति है। इसमें 1918 से 1925 तक की हर वर्ष की दो-तीन कविताओं को संकलित किया गया है। इनमें से अधिकांश कविताएँ 'सरस्वती' एवं 'श्री शारदा' पत्रिका में पहले ही प्रकाशित हो चुकी थीं। 'पल्लव' के आरंभ में कविता की भाषा के रूप में खड़ीबोली हिंदी की समर्थता एवं अपनी कविता तथा काव्यकला के बाह्य अंग पर कवि ने 'प्रवेश' के अंतर्गत अपने विचार रखे हैं। कवि का यह आत्मकथ्य 'प्रवेश' 'पल्लव' की लंबी भूमिका है। 'पल्लव' को पढ़ने से पूर्व इसे पढ़ना आवश्यक है। इससे कवि का पाठ एवं उसकी दृष्टि दोनों को ही समझना आसन होगा। इस 'प्रवेश' से पूर्व कविता की चार पंक्तियाँ लिखी गई हैं जिनसे 'पल्लव' की रचना के पीछे कवि का सहज उद्देश्य प्रकट हो रहा है, वे

पंक्तियाँ इस प्रकार हैं- "जीर्ण-जग के पतझड़ में प्रात/ सजाती जो मधुऋतु की डाल,/ उसी का स्नेह-स्पर्श अज्ञात/ खिलावे मेरे 'पल्लव'-बाल!" 'पल्लव' के रूप में एक अज्ञात स्नेह-स्पर्श का प्रस्फुटन हुआ है।

14.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! खड़ीबोली के आधुनिक कवि सुमित्रानंदन पंत का परिचय आप पिछली इकाई में प्राप्त कर चुके हैं। इस इकाई में आप उनकी काव्यकृति 'पल्लव' का आलोचनात्मक अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- 'पल्लव' का विवेचन-विश्लेषण कर सकेंगे।
- 'पल्लव' में चित्रित प्राकृतिक सौंदर्य से अवगत हो सकेंगे।
- पंत के काव्य में निहित स्त्री सौंदर्य और प्रणय भाव से परिचित हो सकेंगे।
- पंत के जीवन दर्शन से परिचित हो सकेंगे।
- 'पल्लव' के कला पक्ष की विशेषताओं को समझ सकेंगे।

14.3 मूल पाठ : 'पल्लव' : काव्यालोचन

14.3.1 'पल्लव' का सामान्य परिचय

'पल्लव' कवि पंत की आरंभिक रचनाओं का प्रौढ़तम संग्रह है। प्रेम कविता 'आँसू' और 'उच्छवास' कविताएँ जो पहले स्वतंत्र रूप में प्रकाशित हुई थीं, उन्हें भी इस संग्रह में संकलित किया गया है। 'पल्लव' केवल 'पल्लव' है। 'पल्लव' में केवल प्रकृति गान नहीं है, इसमें प्रेम गान भी है। इसकी रचनाकाल की अवधि में पंत से प्रकृति की नैसर्गिक सुंदरता का साथ छूट गया था। वे अब उनकी स्मृतियों में निवास कर रहीं थी। 'पल्लव' पर अपना मत प्रकट करते हुए पंत लिखते हैं, "पल्लव की अधिकांश रचनाएँ प्रयाग में लिखी गई हैं। 1921 के असहयोग आंदोलन के साथ ही हमारे देश की बाहरी परिस्थितियों ने भी जैसे हिलना-डुलना सीखा है। युग-युग से जड़ीभूत उनकी वास्तविकता ने भी जैसे, हिलना-डुलना सीखा है। युग-युग से जड़ीभूत उनकी वास्तविकता में सक्रियता तथा जीवन के चिन्ह प्रकट होने लगे। उनके स्पंदन कंपन तथा जागरण के भीतर से एक नवीन वास्तविकता की रूपरेखाएँ मन को आकर्षित करने लगीं। मेरे मन के

भीतर वे संस्कार धीरे-धीरे संचित होने लगे, पर 'पल्लव' की रचनाओं में वे मुखरित नहीं हो सके। न उसके स्वर उस नवीन भावना को वाणी देने के लिए पर्याप्त तथा उपयुक्त प्रतीत हुए। 'पल्लव' की सीमाएँ छायावाद की अभिव्यंजना की सीमाएँ थीं, वह पिछली वास्तविकता के निर्जीव भार से आक्रांत उस भावना की पुकार थी, जो बाहर की ओर राह न पाकर 'भीतर' की ओर स्वप्न-सोपानों पर आरोहण करती हुई युग के अवसाद तथा विवशता को वाणी देने का प्रयत्न कर रही थी। और साथ ही काल्पनिक उड़ान द्वारा नवीन वास्तविकता की अनुभूति प्राप्त करने की चेष्टा कर रही थी।" यह कवि की आत्मस्फूर्ति का गान है जिसमें उनकी भावप्रवणता, कल्पनाप्रियता और कला के प्रति उनका मोह दिखाई देता है।

बोध प्रश्न

- 'पल्लव' की रचना के पीछे कवि का उद्देश्य क्या रहा?
- 'पल्लव' की रचनाकाल के दौरान देश की सामाजिक स्थिति और कवि की मनःस्थिति कैसी थी?

14.3.2 'पल्लव' पर विभिन्न विद्वानों के दृष्टिकोण

प्रकृति के प्रति दुर्निवार आकर्षण पंत में एकदम आरंभ से मिलता है। प्रकृति एक ओर, और मनुष्य दूसरी ओर, इनके समीकरण की चिंता सुमित्रानंदन पंत को पहले है। पर यह समीकरण क्रमशः बन नहीं पाता। प्रकृति-चित्रण और मानवीय नियति एक दूसरे से छूट जाते हैं; यह पंत की रचना-प्रक्रिया और समूचे छायावाद के लिए एक बड़ी काव्यात्मक दुर्घटना कही जा सकती है। (रामस्वरूप चतुर्वेदी)

रवीन्द्र की 'उर्वशी' एक उदात्त कृति है, क्योंकि उसमें उनका अनुभव पुंजीभूत रूप में व्यक्त हो सका है। शेली की 'पश्चिम प्रभंजन' और कीट्स की 'नाइटिंगेल' भी ऐसी ही रचनाएँ हैं। वड्र्सवर्थ की 'कोयल' जैसी गीतियों में गठन की वैसी ही दृढ़ता है। पंत की 'परिवर्तन' जैसी कुछ रचनाओं में ही यह गठन पाई जाती है। (डॉ. देवराज)

पंत की प्रसिद्ध कल्पनापूर्ण कविता 'बादल' शेली की 'क्लाउड' कविता से प्रेरित है। शेली ने बादल का भयंकर रूप चित्रित किया है पर पंत ने उसका मनोहर रूप चित्रित किया है। (इंद्रनाथ मदान)

पंत की अधिकांश कविताओं पर बंगला साहित्य एवं रवींद्रनाथ के गीतों का प्रभाव है। परिवर्तन को छोड़कर पंत जी की अन्यान्य कविताएँ जो 'पल्लव' में आई हैं, जितनी मधुर हैं, उतनी ओजस्विनी नहीं। जान पड़ता है, बाल-रचनाएँ हैं। पंखुड़ियों को खोलने की चेष्टा की गई है। हिंदी की मधुरता के साथ इस समय विशेष ओज की जरूरत है। विश्व साहित्य के कवि समाज पर उसी तरह के कवि का प्रकाश पड़ सकता है, जो भावना के द्वारा मन को आकर्षक रीति से उन्नत-से-उन्नत विचार कला के मार्ग से चलकर दे सके। (निराला)

छायावाद की कविता की पहली दौड़ तो बंग-भाषा की रहस्यात्मक कविताओं के सजीले और कोमल मार्ग पर हुई। पर उन कविताओं की बहुत कुछ गतिविधि अंग्रेजी वाक्य-खंडों के अनुवाद द्वारा संघटित देख, अंग्रेजी काव्यों से परिचित हिंदी कवि सीधे अंग्रेजी से ही तरह-तरह के लाक्षणिक प्रयोग लेकर उनके ज्यों के त्यों अनुवाद जगह-जगह अपनी रचनाओं में जोड़ने लगे। कनक प्रभात, विचारों में बच्चों की साँस, स्वर्ण समय, प्रथम मधुबाल, तारिकाओं की तान, स्वप्निल कांति ऐसे प्रयोग अजायबघर के जानवरों की तरह उनकी रचनाओं के भीतर इधर-उधर मिलने लगे। ...पंत जी अलबत्ता प्रकृति के कमनीय रूपों की ओर कुछ रुककर हृदय रमाते पाए गए। छायावाद के भीतर माने जाने वाले सब कवियों में प्रकृति के साथ सीधा प्रेम संबंध पंत जी का ही दिखाई देता है। प्रकृति के अत्यंत रमणीय खंड के बीच उनके हृदय ने रूप रंग पकड़ा है। 'पल्लव', 'उच्छवास' और 'आँसू' में हम उस मनोरम खंड की प्रेमार्द्र स्मृति पाते हैं।... (रामचंद्र शुक्ल)

बोध प्रश्न

- छायावाद काल में कवियों की साहित्यिक मनःस्थिति क्या थी?
- भाषा और रचना के पीछे छायावादी कवियों का रुझान किस तरह काम कर रहा था?
- पंत की कविता 'बदल' किसकी कविता से प्रेरित है?

14.3.3 'पल्लव' में वर्णित मुख्य विषय

'वीणा' और 'ग्रंथि' के बाद 'पल्लव' का प्रकाशन हुआ। साहित्य प्रेमियों ने अनुपम और उत्कृष्ट कलात्मक कृति कहते हुए इस कृति का स्वागत किया। कुछ विद्वानों के साथ स्वयं पंत ने भी इसकी सीमाओं का उल्लेख किया। 'पल्लव' शिशुओं के पवित्र प्रेम और वन की पंछियों का गान हैं। कोई मनुज सोते-सोते ही मानो मुस्काता हो; इस 'पल्लव' में उसकी स्वप्निल मुस्कान

जाग रही है। इसमें वेदना है, प्रणय है, आँसू है, हास है, रात-दिन-सांझ है, मधुमास है और है नवोढ़ा की लज्जा। ‘पल्लव’ प्रकृति की रूप छवियों के साथ अनेक भावों की मधुर प्रस्तुति है। जैसे कोमल पल्लव वैसे ही कोमल, मधुर और सुंदर ‘पल्लव’ के गीत।

प्रकृति चित्रण : प्रकृति की गोद में पले पंत का प्रकृति के संग जन्मजात संबंध है। प्रकृति के प्रति उनका यह अनुराग उनकी आरंभिक कविताओं में विशेष रूप से दिखाई देता है। काव्य संग्रह ‘पल्लव’ की पहली कविता का शीर्षक भी ‘पल्लव’ है। अपने इस काव्य संग्रह का परिचय देने के लिए उन्होंने इसी कविता की पंक्तियों का प्रयोग किया है- “न पत्रों का मर्मर संगीत,/ न पुष्पों का रस, राग, पराग।” ‘पल्लव’ का अर्थ है ‘नए हरे कोमल पत्ते’। ‘हरा’ हरियाली का द्योतक है। इससे विलग, इनके भीतर कोई रहस्य नहीं है। ये उतने ही हैं; जितने और जैसे दिखाई दे रहे हैं। प्रकृति के अपने बाह्य निरीक्षण का प्रकटीकरण यहाँ हुआ है। ये ‘पल्लव’ कब खिलते हैं? हर बंधन से आजाद, प्रेममग्न किसी कोयल का मदहोश कर देने वाला गान सुनाई देता है तब ये ‘पल्लव’ खिलते हैं! यहाँ विरोधाभास यह है कि वह कोयल मूक है फिर गाती भी है। भावार्थ यह कि ‘पल्लव’ का खिलना प्रमुदित जीवन का पर्याय है। जीवन बिना किसी बंधन के जब सुकून भरा होगा तब ही वहाँ मादक गान या प्रेम-प्रणय की गुंजाइश होगी। प्रकृति का वसंत और नवोल्लास मानव जीवन में भी छाए।

‘उच्छवास’ प्रेमगीत में सावन और भादो में प्रकृति के बदलते चितवन का चित्र है। प्रेम में हारे हुए कवि का मन विचलित है। उसकी आह भरी साँसें जो उसके दुःख का प्रतिरूप है। उस दुःख की छाया में अपने आंसुओं को गूंथकर पूरे आकाश को बादल की तरह घेर लेने को उद्द्यत हैं। प्रेमी का आँसू केवल आँसू नहीं वह अनमोल है। वर्षा का चित्रण करते हुए कवि उससे अपना संताप और पूरे संसार का पाप हरने का अनुरोध करते हैं, देखें- “गरज, गगन के गान! गरज गंभीर-स्वरों में,/ भर अपना संदेश उरों में औ’ अधरों में;/ बरस धरा में, बरस, सरित, गिरि, सर, सागर में,/ हर मेरा संताप, पाप जग का क्षणभर में।” (उच्छवास, सावन)

जल में ताप तो हरता ही है। पाप हरने की शक्ति भी उसके पास है। अल्मोड़ा की प्राकृतिक सुषमा से कवि की घनिष्ठता रही है। वैसे ही पर्वतीय प्रदेश की घाटी का एक सुंदर चित्र, देखें- “मेखलाकार पर्वत अपार/ अपने सहस्र दृग सुमन फाड़,/ अवलोक रहा है बार-बार/ नीचे जल में निज महाकार!/ -जिसके चरणों में पला ताल/ दर्पण-सा फैला है विशाल!!” विशाल

पर्वतों की परछाई उनके नीचे बहते हुए जलराशि में पड़ रही है। इसकी कल्पना करते हुए यहाँ कहा गया है मानो ये पर्वत बार-बार अपनी हजारों आँखों से उस ताल रूपी आईने में अपने विशाल आकार को देख रहा है। प्रकृति को जड़ नहीं; चेतन रूप में चित्रित किया गया है। केवल जल, फूल, तारे, चांदनी रात, संध्या, सागर और वसंत की सुंदरता को ही नहीं निहारते कवि; वे उनसे कुछ सीखने की इच्छा भी रखते हैं। जैसे, भौरें से उसका मीठा गान सीखना चाहते हैं। इसके लिए वे उसे मधुप कुमारी कह कर संबोधित करते हैं। संबोधन में भी एक अपनापन और आदर है। “सिखा दो ना हे मधुप-कुमारि!/ मुझे भी अपने मीठे गान”(मधुकरी)। ‘मोह’ कविता में कवि कहते हैं, “वृक्षों की छाया, जल की तरंगों, इंद्रधनुष के रंगों को, कोयल के बोल मधुकर की वीणा, कोमल कली और फूलों तथा सुधारश्मि युक्त जल - इन सबको छोड़कर मैं कैसे केवल तुम्हारे लिए छोड़ दूँ!” इसे उनके प्रकृति प्रेम एवं उनके संकोच दोनों ही रूपों में विद्वानों ने देखा है।

स्त्री चित्रण और प्रेम : ‘पल्लव’ में स्त्री को सौंदर्य, स्नेह और तृप्ति की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित किया गया है। अपनी ‘नारी रूप’ शीर्षक कविता में कवि ने स्त्री के लिए ‘देवि’, ‘माँ’, ‘सहचरी’ और ‘प्राण’ जैसे संबोधनों का प्रयोग किया है। बचपन की सरलता और भोलेपन से वे स्त्री का साम्य बिठाते हैं। प्रेम इन्हीं तत्वों से उपजता है और हृदय सरलता की ओर ही बिना प्रयास खिंचा चला जाता है, देखें- “शैशव ही है एक प्रेम की वस्तु सरल कमनीय;/ बालिका ही थी वह भी-/ सरलपन ही था उसका मन,/ निरालापन था आभूषण।” कवि भी प्रेमसूत्र में बंधे पर यह प्रेम असफल रहा।

कवि का हृदय विदीर्ण है यह देखकर कि गंगाजल जैसे पवित्र प्रेम को समाज ने ‘पापाचार’ कहा और अस्वीकार कर दिया। प्रेयसी की जगह कवि के जीवन में कोई न ले सका। अपने हृदय में बसी उस प्रेयसी की स्मृति को कवि नित अपनी मानसिक पूजा देते हैं। उसका शृंगार करते हैं। अपने आँखों के कपाट में बंद उसकी छवि का ध्यान करते हैं। “विधुर उर के मृदु-भावों से/ तुम्हारा कर नित नव-शृंगार/ पूजता हूँ मैं तुम्हें कुमारि!/ मूंद दुहरे दृग-द्वार!” (आंसू)। यह आत्मिक और सात्विक प्रेम न समाज से विद्रोह करता है न अपने प्रिय के प्रति मन में क्षोभ लाता है। वह अपने ही पवित्र भावों में रमा हुआ; कहता है, “करुण अतिशय उनका संशय/ छुड़ाते हैं जो जुड़े स्वभाव।”(आँसू)।

प्रेयसी के प्रति उनकी उदात्त भावना का परिचय इससे भी मिलता है जब वे कहते हैं, “त्रिभुवन की भी तो श्री भर सकती नहीं/ प्रेयसी के शून्य, पावन-स्थान को।” तीनों लोकों की विधात्री शक्ति भी प्रेयसी का पवित्र जगह नहीं भर सकती। यहाँ विधात्री शक्ति को कम नहीं कहा जा रहा है बस प्रेम की पावनता की शक्ति और उसकी ऊँचाई दिखाई गई है। नारी रूप का चित्रण करते हुए कवि की सौंदर्य मुग्धता नजर आती है। सागर के जल, चांदनी और छाया जैसी प्राकृतिक छवियों में भी स्त्री की कल्पना की है। प्रकृति का पुजारी स्त्रीपूजा में भी मग्न लगता है। स्त्री के केश को उन्होंने उसका स्वर्गिक शृंगार कहा है। यही जानकार उन्होंने भी अपने बाल लंबे रखे हैं। ऐसी भावना वाली पंक्तियाँ ‘नारी रूप’ कविता के आरंभ में ही हैं। अपने बालों के लिए कवि की यह कल्पना उनकी स्त्री के प्रति पूज्य प्रेम भावना से प्रेरित जान पड़ती है। ‘विनय’ कविता स्त्री रूपी देवी का प्रार्थना गान है। इसमें कवि याचना भी करता है। स्त्री चित्रण में देह भावना बिल्कुल अनुपस्थित है। सखा के रूप में भी स्त्री का चित्रण किया है जैसे, ‘वसंत श्री’ कविता। इसमें कवि जानने को उत्सुक है कि वह कौन खेल रही है? अपनी कई कविताओं में वे स्वयं बालिका के रूप में प्रस्तुत हुए हैं। मादा भौंरे और चिड़ियों के लिए भी उन्होंने सुंदर शब्द गढ़ा है, जैसे- मधुप कुमारि, विहगबाला इत्यादि। ‘वनबाला’ ‘वन्यदेवियाँ’ और ‘परियों’ के साथ ‘भिखारिणी’ की छवि का भी प्रयोग किया है। “सखि! भिखारिणी-सी तुम पथ पर/ फैला कर अपना अंचल/ सूखे-पातों ही को पा क्या/ प्रमुदित रहती हो प्रतिपल? (छाया)। यह प्रयोग छाया को चित्रित करते हुए कवि ने किया है। कल्पना और स्वप्न के साथ यथार्थ का संयोजन भी कवि ने किया है। जल की लहरों में भी कवि ने स्त्री रूप देखा है। उसका दिव्य चित्रण किया है-“ओ अकूल की उज्जवल-हास!/ अरी अतल की पुलकित श्वास!/ महानंद की मधुर उमंग!/ चिर शाश्वत की अस्थिर लास!/ मेरे मन की विविध तरंग/ रंगिणी सब तेरे ही संग/ एक रूप में मिले अनंग।” (वीचि विलास)

प्रणय और वेदना : प्रेम विरही यह कवि सृष्टि के हर व्यापार में अपनी प्रियतमा को खोज रहा है। उसी को साकार देख रहा है। “देखता हूँ, जब पतला/ इंद्रधनुषी हल्का/ रेशमी घूंघट बादल का/ खोलती है कुमुद-कला;/ तुम्हारे ही मुख का तो ध्यान/ मुझे करता तब अंतर्धान;/ न जाने तुमसे मेरे प्राण/ चाहते क्या आदान!”(आंसू)। शाम का समय है। वर्षा के बाद आसमान में इंद्रधनुष छाता है। बादलों की धुँध छंट जाती है और चाँदनी का शुभ्र प्रकाश झिलमिल करने लगता है। इस छवि में प्रेयसी के रूप का ध्यान कर कवि अपने आप को भूल जाता है। अपने हृदय की

विकलता का रहस्य वह समझ भी नहीं पा रहा है। वह प्रकृति की हर हलचल में अपनी प्रेयसी को क्यों देख रहा है? उसे या उसके प्राणों को उस सुकुमारी से भला क्या चाहिए? शरीर और आत्मा का मिलन यदि होते-होते रह जाए! तब कौन विकल न होगा! आकर्षण का विकल्प मिल सकता है पर प्रेम का क्या विकल्प है! विकलता का स्वीकार और आत्म का विस्तार, यही ना; जिस ओर कवि अपनी बाद की कविताओं में बढ़े भी हैं। पर अभी वे अपने संसार को इस दुःख में डूबा हुआ देख रहे हैं। "कहाँ है उत्कंठा का पार!!/ इसी वेदना में विलीन हो अब मेरा संसार!/ तुम्हें जो चाहो है अधिकार!/ टूट जा यहीं अब हृदय हार!!!" (उच्छ्वास)। प्रणय को कवि ने 'करुण' कहा है। कवि अपनी वास्तविक स्थिति पर हैरान भी है, "विरह है अथवा यह वरदान!/ कल्पना में है कसकती-वेदना,/ अश्रु में जीता, सिसकता गान है;/ शून्य आहों में सुरीले छंद हैं,/ मधुर लय का क्या कहीं अवसान है!"(आँसू)। यहीं कवि स्थापित करते हैं कि पहला कवि कोई वियोगी ही होगा। दुःख से जो मंजा हुआ है उसी की आह से हृदय को बाँध लेने वाली कविता निकल सकती है।

जीवन सत्य और मनोभाव : प्रकृति पर मानव जीवन का आरोपण करते हुए कवि भले उसके संतुलित समीकरण को अंत तक न ले जाते हों। पर बीच-बीच में कई जीवन सत्यों और मनोभावों के रहस्य से परिचय करा देते हैं। रोग और पाप का तो परिहार किया जा सकता है। परंतु संदेह जो अमूर्त है। उसका कुछ नहीं किया जा सकता। यह हृदय की कमजोरी है। इंसान का सबसे शक्तिशाली शत्रु यही है। द्रौपदी के रेशमी वस्त्र की भांति इसका कोई ओर-छोर नहीं है। संदेह आकाश में फैलने वाला लता है जो स्वयं बिना ठौर का है पर मनुष्य को उल्लास विहीन, निर्बल कर देता है। इस संदेह रूपी 'पाले' ने ही कवि का अपनी प्रेयसी से मिलन नहीं होने दिया। जिससे जीवन महज एक उच्छ्वास बनकर रह गया है। "अश्रुओं में रहता है हास,/ हास में अश्रुकणों का भास;/ श्वास में छिपा हुआ उच्छ्वास,/ और उच्छ्वासों में ही श्वास!" (उच्छ्वास, भादो)। ये संदेही लोग करुणा के पात्र हैं। जीवन क्या है? जीवन में मानव की भूमिका क्या है? जीवन बहुत सुंदर है। उसकी फुलवारी में सुंदर-सुंदर फूल हैं जो मन को आह्लादित करते हैं। अर्थात सुख और आनंद के बहुत साधन हैं यहाँ! पर जीवन का कर्म मार्ग बड़ा कठिन है और मानव का मन फूल-सा कोमल। इस जग की सुंदरता मानव से ही है। सुंदर मन वाले मानव से। अपने जीवन की तुलना मधुकर से करते हुए कवि कहते हैं, "मेरा मधुकर का-सा जीवन।/ कठिन कर्म है; कोमल है मन;/ विपुल मृदुल सुमनों से सुरभित/ विकसित है विस्तृत जग-उपवन!"

मधुकर और फूल का साथ कुछ पलों के लिए ही होता है। 'मधुकर' विरहमग्न प्रिय का प्रतीक है। फिर अपने मन को सांत्वना देते हुए कवि कहते हैं, "सच नहीं होता सदा अनुमान है!/ कौन भेद सका अगम आकाश को?" इससे जीवन का सत्य भी व्यंजित होता है कि मनुष्य की अपनी सीमाएँ हैं। भविष्य पर उसका वश नहीं है। बस आज उसके हाथ में है। तभी कवि छाया की परसेवा की भावना को देखकर उससे सीखना चाहता है पर दुःख से दुखी होना। "पर-पीड़ा से पीड़ित होना/ मुझे सिखा दो, मद हीन।" (छाया)। दुःख को दूर करने का प्रयत्न उसे अनुभव करने के बाद ही आरंभ किया जा सकता है।

पौराणिक संदर्भ : 'अनंग' शीर्षक से एक लंबी कविता है। 'वीचि विलास' में भी इसका उल्लेख है। 'अनंग' कामदेव का पर्याय है। शिव ने जब कामदेव को भस्म कर दिया था तब रति बिलखती हुई उनके पास आई। रति को वरदान देते हुए शिव ने कामदेव को बिना शरीर के ही सबको प्रेरित करने की शक्ति दे दी। वाही अनंग है बाद में इसका जन्म कृष्ण कुल में हुआ और पुनः रतिसे मिलन भी। 'अनंग' ही इस संसार का आधार है, ऋतु परिवर्तन और नव जीवन तथा उल्लास सबकी सृष्टि की शक्ति इसमें है। यह प्रेम का प्रेरक देव है। संदेह के लिए "द्रौपदी का यह दुरंत दुकूल है!" कहा गया है। यह द्रुपद की पुत्री और पांडवों की पत्नी है। पांडवों और कौरवों के जुए के खेल में पांडवों ने इन्हें दांव पर लगाया और हार गए। बलात द्रौपदी को भवन से खींचकर राज दरबार में लाया गया। दु:शासन द्वारा उनका वस्त्रहरण करने की कोशिश की गई। यह वस्त्र बढ़ता ही रहा। द्रौपदी के सखा कृष्ण हैं। यह उनकी कृपा थी। 'छाया' कविता में छाया की तुलना दमयंती से की गई। 'नल और दमयंती' भारतीय प्रेम कहानी है। नल के बिछोह में दमयंती का मुख मलिन रहता है। छाया की म्लानता देख कवि उससे कहते हैं कि क्या तुम्हें भी दमयंती की भांति कोई नल छोड़ गया है। वामन डग, इंद्रजाल और इंद्रासन जैसे संदर्भ भी आए हैं। वृंदावन, व्रज और मथुरा का जिक्र भी आया है।

बोध प्रश्न

- 'पल्लव' में वर्णित मुख्य विषयों पर प्रकाश डालिए।
- 'पल्लव' शीर्षक की सार्थकता बताइए।
- 'पल्लव' में आए पौराणिक संदर्भों का नाम बताइए।

14.3.4 'पल्लव' का कला पक्ष

काव्यभाषा

'पल्लव' की काव्यभाषा सरस, कोमल और माधुर्य गुण युक्त है। शब्द प्रयोग की दृष्टि से यह वैविध्य भरा है। तद्भव और देशज शब्दों के साथ तत्सम शब्दों का अधिक प्रयोग किया गया है। इनका भाषिक सह प्रयोग भी ध्यान खींचता है, जैसे- स्वर्णजाल, पावन-अंचल, सुरभित-हार, भग्न-उर, चिर-आख्यान, अभेद्य-पट, हिम-जल, शीतल-छाया इत्यादि। काया भाषा का प्रयोग भी यहाँ द्रष्टव्य है- "चूर्ण शिथिलता-सी अंगड़ाकर/ होने दो अपने में लीन।" इस तरह का प्रयोग बहुत कम है।

ध्वनि सौंदर्य और चित्रात्मक काव्य भाषा की बहुलता है। इनकी विशेषता इनका सस्वर होना है। कविता की भाषा के संबंध में पंत का मानना है, "भाषा का और मुख्यतः कविता की भाषा का, प्राण राग है। राग ही के पंखों की अबाध उन्मुक्त उड़ान में लयमान होकर कविता सांत को अनंत से मिलाती है। राग ध्वनि-लोक निवासी शब्दों के हृदय में परस्पर स्नेह तथा ममता का संबंध स्थापित करता है।" एक उदाहरण: "तजकर तरल तरंगों को,/ इंद्र-धनुष के रंगों को/ तेरे भ्रू-भंगों से कैसे बिंधवा दूँ निज मृग-सा मन?/ भूल अभी से इस जग को।" इन रागबद्ध पंक्तियों के अंत में ओकार की ध्वनि आई है जो पंक्ति का सौंदर्य बढ़ाती है। अपने शब्दचयन की प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए पंत ने 'पल्लव' की भूमिका में लिखा है, "भ्रू से क्रोध की वक्रता, 'भृकुटी' से कटाक्ष की चंचलता, 'भौंहों' से स्वाभाविक प्रसन्नता और आह्लाद का हृदय में अनुभव होता है।" शब्द चयन और प्रयोग में अर्थ के सूक्ष्म अंतर पर कवि सचेत रहे हैं। शब्दों का नवनिर्माण भी इन्होंने किया और काव्य की संगीतात्मकता की रक्षा के निमित्त जितना आवश्यक हुआ इन्होंने व्याकरण के नियमों को भी तोड़ा-मरोड़ा। शब्दों के नवनिर्माण में उपसर्ग, प्रत्यय, संधि और समास का उपयोग किया गया। भाव की तीव्रता को बढ़ाने के लिए विशेषण का प्रयोग तीनों रूपों में किया गया है, जैसे - सुंदर, सुंदरतर, सुंदरतम, करुण, करुणतर, करुणतम। आगे काव्य शैली का विवेचन किया जा रहा है।

काव्यरूप

'पल्लव' प्रगीतकाव्य है जो पश्चिम से आयातित काव्यरूप है। इसे 'लिरिक' नाम से जाना जाता है। इसके प्रमुख तत्व हैं- गेयता, भावप्रवणता, आत्माभिव्यक्ति, भावान्विति और

संक्षिप्तता। 'पल्लव' के गीतों में गेयता है। आत्माभिव्यक्ति भी है। भावनाएँ कहीं प्रबल हैं और कहीं स्थिर। भावों की एकसूत्रता के निर्वाह का आरंभ हुआ है पर ये अपने चरम तक क्रम से विकसित होकर नहीं पहुँच सकी हैं। एक मुख्य भाव के बीच में कवि ने कई भावों को गुंथा है। उनकी यह चेष्टा सहज है। अपने भाव रूपी हृदय के गान को उन्होंने ज्यों-का-त्यों रख दिया। अपनी शब्दशक्ति से उसके बाह्य रूप को मन भर संवारा है।

रस

सौंदर्य और प्रकृति के पुजारी पंत का काव्य मधुरता भरा और सरस है। 'आँसू' और 'उच्छवास' में वियोग शृंगार के दर्शन होते हैं। कुछ अन्य गीतों में भी इसके साथ शांत और करुण रस का प्रयोग हुआ है। इन्होंने वीभत्स रस पर भी अपनी दृष्टि डाली है। उदाहरण: "अखिल यौवन के रंग उभार/ हड्डियों के हिलते कंकाल/ कचों के चिकने, काले व्याल/ केंचुली, कांस, सिवार,/ गूँजते हैं सबके दिन चार,/ सभी फिर हाहाकार!" (परिवर्तन)

अलंकार

अलंकार के संदर्भ में पंत का विचार है, "अलंकार भाव की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार हैं। वे भाषा की पुष्टि के लिए, राग की परिपूर्णता के आवश्यक उपादान हैं। वे वाणी के आचार, व्यवहार, रीति, नीति हैं। पृथक स्थितियों के पृथक स्वरूप, भिन्न अवस्थाओं के भिन्न चित्र हैं।" शब्दालंकार और अर्थालंकार का विपुल प्रयोग किया गया है। रूपक और उपमा आरंभ से अंत तक बहुतायत में हैं।

अनुप्रास: "कौन तुम अतुल, अरूप, अनाम?/ अये अभिनव अभिराम।" (शिशु)

पुनरुक्ति प्रकाश: "करा दो ना कुछ कुछ मधुपान।" (मधुकरी)

मानवीकरण: चला मीन दृग चारो ओर,/ गह-गह चंचल-अंचल छोड़,/ रुचिर-रुपहरे-पंख पसार/ अरी वारि की परी किशोर (वीचि विलास)

अप्रस्तुत विधान: गूढ़ कल्पना सी कवियों की/ अज्ञाता के विस्मय सी/ ऋषियों के गंभीर हृदय सी/ बच्चों के तुतले भय सी। (छाया)

छंद

'पल्लव' में मात्रिक छंदों का प्रयोग किया गया है। छंद के संबंध में पंत का विचार है, "छंद अपने नियंत्रण से राग को स्पंदन-कंपन तथा वेग प्रदान कर निर्जीव शब्दों के रोड़ों में एक कोमल सजल कलरव भर, उन्हें सजीव बना देते हैं। वाणी की अनियमित साँसें नियंत्रित हो जाती, तालयुक्त हो जाती; उसके स्वर में प्राणायाम, रोओं में स्फूर्ति आ जाती, राग की असंबद्ध झंकारें एक वृत्त में बंध जाती, उनमें परिपूर्णता आ जाती है।" उनके अनुसार मुक्त काव्य के अंतर्गत छंदों की गति बदलने से पहले एक विश्राम लेना आवश्यक होता है। ऐसा करने से लय बाधित नहीं होता है जिससे रागात्मकता बनी रहती है, उदाहरण:"शैशव ही है एक प्रेम की वस्तु सरल कमनीय;/ बालिका ही थी वह भी-/ सरलपन ही था उसका मन,/ निरालापन था आभूषण/।" इस छंद में 'बालिका ही थी वह भी' पंक्ति विश्राम है। "शैशव ही है एक प्रेम की वस्तु सरल कमनीय" यह 27 मात्रा का सरसी छंद है। उसके बाद विश्राम है, "बालिका ही थी वह भी" । फिर 15 मात्रा का जयकरी छंद अंतिम दो पंक्तियों में है। 16 मात्रा और 14 मात्रा के छंदों का भी प्रयोग किया है। इसके अलावा भी हैं। उनकी कविताओं में जहाँ कल्पना उत्तेजित होने का भाव भरती है वहाँ रोला छंद का प्रयोग हुआ है। रोला सममात्रिक छंद है जिसके प्रत्येक चरण में 24 मात्रा होती है। 'परिवर्तन' कविता में रोला के अतिरिक्त 16 मात्रा का छंद आया है।

प्रतीक और बिंब

'पल्लव' में दृश्य बिंब, श्रव्य बिंब, स्पर्श बिंब और घ्राण बिंब का विपुल प्रयोग हुआ है। आस्वाद्य बिंब बहुत कम हैं। बिंबों के प्रयोग से भाषा की चित्रात्मकता बढ़ी है।

दृश्य और भाव बिंब: "श्रमित, तपित अवलोक पथिक/ रहती या यों दीन, मलीन?/ ऐ विटप की व्याकुल-प्रेयसी!/ विश्व वेदना में तल्लीन।/ दिनकर-कुल में दिव्य-जन्म पा/ बढ़कर नित तरुवर के संग,/ मुरझे पत्रों की साड़ी से/ ढँक कर अपने कोमल अंग;" (छाया)

दृश्य और श्रव्य बिंब: "गिरि का गौरव गाकर झर झर/ मद से नस नस उत्तेजित कर,/ मोती की लड़ियों से सुंदर/ झरते हैं झाग भरे निर्झर।/ गिरिवर के उर से उठ-उठ कर/ उच्चाकांक्षाओं से तरुवर/ हैं झाँक रहे नीरव नभ पर/ अनिमेष अटल कुछ चिंतापर" (उच्छवास)

दृश्य, स्मृति और भाव बिंब: मेरा पावस ऋतु-सा जीवन/ मानस-सा उमड़ा अपार मन;/ गहरे, धुँधले, धुले, साँवले/ मेघों से मेरे भरे नयन। आँसू

दृश्य, श्रव्य और भाव बिंब: भीरू-झींगुर-कुल की झनकार/ कंपा देती तंद्रा के तार;/ न जाने खद्योतों से कौन/ मुझे पथ दिखलाता तब मौन। (मौन निमंत्रण)

पंत ने बिबों का संश्लिष्ट प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार प्रतीकों का भी चयन वैविध्य भरा है, जैसे- आँसू के लिए 'नयन के बाल', यौवनकालके लिए 'मधुकाल', प्रेमी के लिए 'मधुप', 'विहगबाल','मधुकर', विषाद के लिए 'पतझड़', मानसिक आकुलता के लिए 'झंझा', मन में उठते भाव के लिए 'तरंग', सांसारिक सुख के लिए 'अरण्य चीत्कार' का चयन किया। उनकी सभी कविताएँ प्रतीकात्मक है। कहीं प्रेमी के लिए प्रतीक ग्रहण किया गया तो कहीं ब्रह्म के लिए।

बोध प्रश्न

- बिंबों के प्रयोग से क्या बढ़ता है?
- पंत के अनुसार भावों की अभिव्यक्ति के विशेष द्वार क्या है?

14.4 पाठ सार

'पल्लव' संग्रह की कविताएँ भाव, कल्पना और चिंतन का मिश्रित रूप हैं। प्रकृति के साथ स्त्री, जीवन, प्रेम, प्रणय एवं विविध मनोभावों को अपनी कविता का विषय बनाया है। इन सबको कविता में ढालने के लिए प्रकृति से विविध उपमाओं को चुनकर; उसे अपनी कल्पना शक्ति से रुचिकर और ग्राह्य शब्दों में ढाला है। पंत की कल्पना प्रधान सौंदर्य दृष्टि हर जगह प्रमुख रही है। 'वीचि विलास' कविता में जलक्रीड़ा के आनंद की अनुभूति का वर्णन किया गया है। जल की लहरों के शोर और उसकी को संबोधित करते हुए कवि उससे उसे अपने हृदय में भर देने का विनय करते हैं। जलक्रीड़ा का आनंद बहुत ऊँचा है। स्वर्ग के सुख के समान इस आनंद से यह संसार अनभिज्ञ है। यथार्थ की दुनिया में विचरण करने वाले प्राणी कल्पना-लोक का आनंद कहाँ ले पाते हैं! समयाभाव है! जल की ये चंचल लहरें कैसे चाँद के किरनों का झूला झूलती हैं। उस जल को किशोर परी का रूप देकर विविध उपमानों के संग कवि उसकी तुलना करता है, जैसे-बिना नाल के फेनिल फूल, छुई-मुई, स्वर्ण-स्वप्न इत्यादि। इस कविता में प्रणय के लिए

कपूर, 'कोमल' और 'क्रूर' जैसे शब्दों का प्रयोग किया है। "निज अधरों पर कोमल, क्रूर/ शशि से दीपित प्रणय कपूर" यह जल की लहरों में कल्पित 'परी' के संदर्भ में है।

'मौन निमंत्रण' कविता में एक अज्ञात मौन प्रकृति की हर हलचल में कवि महसूस करता है और पाता है कि वह उसे बुला रही है। रात्रि, वर्षा, वसंत, सागर की लहरों का शब्दचित्र खींचा है। यह मौन कभी उसे फूल की सुगंध बनकर बुलाती है तो कभी वायु, और कभी जुगनू की टिमटिम रोशनी से। स्पष्ट है प्रकृति के बदलाव उसके शृंगार की ओर कवि आकृष्ट होता है। उसे अपलक निहारता है। और उसे देखने में अपना सुख-दुःख भुला बैठता है। जो मौन उसे इस ओर प्रवृत्त करती है उससे वह अनजान है। एक अज्ञात रहस्य की खोज इस कविता में है। इसपर रहस्यवाद का प्रभाव कहा जा सकता है। 'अनजाने मौन' को कवि अपने सुख-दुःख का सहचर कहता है। इसी प्रकार 'स्वप्न' कविता 'सोया हुआ शिशु अपने अतीत की कौन सी सुधि खोजता है?' इसी भाव पर केंद्रित है। यहाँ भी दो सखियाँ इस अज्ञात रहस्यमय अतीत की चर्चा करती हैं जो स्वप्न में दिखाई देता है। एक सखी बोल उठती है, "स्वप्न जग है केवल स्वप्न असार/ अर्पित कर देती मारुत को/ वह अपने सौरभ का भार।"

पंत की अन्य कल्पना प्रधान रचनाएँ हैं- 'विश्व वेणु', 'निर्झर गान', 'निर्झरी', 'नक्षत्र' इत्यादि। 'छाया' की अंतिम पंक्ति भी रहस्य भावना का परिचय देती है, देखें "फिर तुम तम में, मैं प्रियतम में/ हो जाएँ द्रुत अंतर्धान!" छाया अंधकार में विलीन हो जाए और कवि अपने प्रियतम में। यह प्रियतम कवि की प्रेयसी नहीं है यहाँ परमोच्च सत्ता की ओर इशारा है। छाया भी वृक्ष की प्रेयसी है, अंधकार की नहीं। वह विलीन अंधकार में होती है।

संग्रह की अंतिम कविता छायाकाल है। इससे पहले 'परिवर्तन' कविता है जिसमें पुराने युग को स्वर्णकाल कहा गया है। जीवन के विविध चरण बालपन, यौवन और बुढ़ापे में मनुष्य की परिवर्तित जीवन शैली, उसके जीवन के सुख, आनंद और मृत्यु के साथ ज्ञान-लोकसेवा इत्यादि विषयों की संक्षिप्त चर्चा है। मनुष्य की जीवन शैली में परिवर्तन हो रहा है। उसकी सोच परिवर्तित हुई है और इससे समाज परिवर्तित हुआ है। समाज की सुख-शांति जो खो रही है उसका चित्रण कवि ने किया है, देखें- "रुधिर के हैं जगती के प्रात,/ चितानल के ये सायंकाल;/ शून्य-निःश्वासों के आकाश,/ आँसुओं के ये सिंधु विशाल;/ यहाँ सुख सरसों, शोक सुमेरु-/ अरे जग है जग का कंकाल!!/ वृथा रे, ये अरण्य चीत्कार,/ शांति-सुख, है उस पार"। वीभत्स यथार्थ का

चित्रण करने में भी प्रकृति का साथ नहीं छूटा है। कवि जीवन के उस पार जहाँ शांति है, वहाँ जाने की बात करता है। जीवन से उसपार तो इस लोक का पार हुआ। जीवन का अर्थ सुख-दुःख और इसके सृजन,पालन और संहार की दार्शनिकता की भी झलक इस कविता में है। स्याही की बूंद, याचना, विश्वव्याप्ति, सोने का गान, बालापन, विश्वछवि, स्मृति इत्यादि कविताओं में भी कवि ने प्रकृति को आधार बनाते हुए जीवन को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखने की कोशिश की है। बादल कहते हैं, "हम सागर के धवल-हास हैं/ जल के धूम गगन की धूल/ अनिल-फेन, उषा के 'पल्लव',/ वारि-वसन, वसुधा के मूल;"। विश्व-छवि कविता में गुलाब के फूलों से कवि अपने जीवन की समता देते हैं। गुलाव काँटों में खिलता है। वह वहां मुस्कुराता है। जग में सुगंध बिखेरता है। बहुत बार मनुष्य एक कांटा चुभने से रोने लगता है। अवसाद से घिर जाता है। कवि ने भी कांटे सहे हैं पर वे मुस्कुरा रहे हैं और अपनी लेखनी से मुस्कुराहट, आनंद और उत्कर्ष का पाठ पढ़ा रहे हैं।

विद्वानों ने 'पल्लव' पर कई अंग्रेजी समीक्षकों और भारतीय विद्वानों का प्रभाव देखा है। भावग्रहण करने की छूट साहित्य में रहती है। तभी एक ही भाव पर केंद्रित कई तरह की रचनाओं का आस्वाद्य लेकर हम उसकी तुलना करने की ओर प्रवृत्त होते हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भी एक पंक्ति का उदाहरण दिया है जो पंत की पंक्ति के समान है, देखें- "सुमनदल चुन चुन कर निशि भोर/ खोजना है अजान वह छोर।(पंत) ....so We are driven./ onward and upward in a wind of beauty.(Abercrombe). छायावाद और पंत की काव्यकला को समझने के लिए 'पल्लव' उत्कृष्ट कृति है।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. 'पल्लव' की कविताएँ कल्पना प्रधान हैं। इनमें रहस्य और जिज्ञासा की भावना भी द्रष्टव्य है।
2. मानवीकरण के रूप में प्रकृति का चित्रण 'पल्लव' की मुख्य विशेषता है।
3. 'पल्लव' की भाषा प्रवाहमयी, चित्रात्मक, रससिक्त और आलंकारिक है। भाषा और भाव में मैत्री संबंध है।

4. "छोड़ द्रुमों की मृदु छाया/ तोड़ प्रकृति से भी माया,/ बाले! तेरे बाल-जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन?/ भूल अभी से इस जग को"- 'मोह' कविता के इस प्रथम छंद को रामस्वरूप चतुर्वेदी ने छायावाद के रचनात्मक घोषणापत्र का आरंभिक अंश माना है।
5. पंत पर रवीन्द्रनाथ का प्रभाव सर्वाधिक दिखाई देता है। निराला ने 'पंत और पल्लव' नामक अपनी कृति में इस प्रभाव को सोदाहरण दिखाया है।
6. 'पल्लव' में मानव के विविध भावों को प्राकृतिक बिंबों के साथ सुंदरता से अंकित करने की चेष्टा की गई है।

14.6 शब्द संपदा

1. उच्छ्वास = आह भरना
2. ताल = तालाब
3. द्रुम = वृक्ष
4. भग्न = टूटा हुआ
5. भावप्रवणता = भावुकता
6. सुमेरु = सर्वश्रेष्ठ, सबसे ऊँचा

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'पल्लव' के माध्यम से प्रकृति चित्रण का वर्णन कीजिए।
2. 'पल्लव' में निहित पंत की स्त्री भावना का उल्लेख कीजिए।
3. 'पल्लव' में आए हुए जीवन सत्य एवं मनोभावों का वर्णन कीजिए।
4. 'पल्लव' के कला पक्ष का विश्लेषण कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'पल्लव' की काव्य-भाषा पर चर्चा कीजिए।
2. 'पल्लव' की प्रतीक और बिंब योजना पर प्रकाश डालिए।
3. 'पल्लव' में प्रयुक्त छंद और अलंकारों का विवेचन कीजिए।
4. पंत की कल्पनाशीलता पर अपना मत प्रकट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'पल्लव' का रचनाकाल क्या है? ( )

(अ) 1926 (आ) 1826 (इ) 1925 (ई) 1921

2. 'पल्लव' का मुख्य तत्व क्या है? ( )

(अ) प्रेम (आ) प्रणय (इ) कल्पना (ई) रहस्य

3. 'आँसू' कविता का मुख्य भाव क्या है? ( )

(अ) प्रेम स्मृति (आ) सामाजिकों को कोसना (इ) रोना (ई) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'पल्लव' में वर्ष ....से ....तक की रचनाएँ संकलित हैं।
2. 'पल्लव' .... की रचना है।
3. 'पल्लव' की रचनाएँ पहले ....और .... पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी थीं।
4. पंत की प्रसिद्ध कल्पनापूर्ण कविता बादल ....की ....से प्रभावित है।

III. सुमेल कीजिए -

1. रवींद्र	(अ) अवसाद
2. पतझड़	(आ) मधुकर
3. प्रिय	(इ) सांसारिक सुख
4. अरण्य चीत्कार	(ई) उर्वशी

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. पल्लव : सुमित्रानंदन पंत
3. पंत और पल्लव : निराला
4. सुमित्रानंदन पंत : शचीरानी गुर्टु
5. पंत रचना संचयन : कुमार विमल

इकाई 15 : महादेवी वर्मा : एक परिचय

रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना

15.2 उद्देश्य

15.3 मूल पाठ : महादेवी वर्मा : एक परिचय

15.3.1 महादेवी वर्मा : जीवन वृत्त

15.3.2 सृजनात्मक व्यक्तित्व

15.3.3 महादेवी वर्मा की रचनाएँ

15.3.4 काव्य सौंदर्य

15.4 पाठ सार

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

15.6 शब्द संपदा

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

आधुनिक हिंदी काव्य के छायावाद युग के चार प्रमुख स्तंभों - बृहत चतुष्टयी - में से एक महादेवी वर्मा हैं। वे हिंदी की सर्वाधिक प्रतिभावान और प्रसिद्ध कवयित्रियों में से एक हैं। किसी ने उन्हें 'छायावाद की मीरा' कहा है और कोई उन्हें 'महीयसी' कहकर उनकी प्रतिभा को चार चाँद लगाता है। जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत के साथ-साथ महादेवी वर्मा ने भी छायावाद की प्राण-प्रतिष्ठा की और इन कवियों के निधन के बाद भी छायावादी मूल्यों, स्थापनाओं और संदेशों की रक्षा की। महादेवी वर्मा ने गद्य-पद्य की भाषा और उसके शिल्प में नवाचार की बुनियाद रखी। अपना परिचय देते हुए महादेवी कहती हैं -

मैं नीर भरी दुख की बदली
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली ।

इस इकाई में महादेवी का बस इतना सा ही परिचय आपको नहीं मिलेगा। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के बहुत से पहलुओं पर भी आप विचार करेंगे। देखना यह है कि ब्रजभाषा से खड़ीबोली में प्रवेश करती आधुनिक हिंदी कविता को छायावादी युग और उसके बाद भी अपने विपुल लेखन से प्रभावित और समृद्ध करने वाली महादेवी आखिर अपना परिचय इस प्रकार क्यों देती हैं? आपको यह भी देखना होगा कि छायावाद की एक प्रतिनिधि हस्ताक्षर महादेवी वर्मा अपने युगीन यथार्थ से संवेदना के धरातल पर किस प्रकार प्रभावित होती हैं और अपने काव्य में इसे किस प्रकार अभिव्यक्त करती हैं।

छायावादी कवि-चतुष्टय की विख्यात कवयित्री महादेवी वर्मा विलक्षण गद्य की भी रचयिता हैं। डॉ. लोहिया ने एक बार कहा था, “महादेवी जी भारत में सबसे अच्छा गद्य लिखती हैं। वे गद्य की राजकुमार हैं।” विद्वान यह मानते हैं कि “महादेवी के गद्यकार-रूप उनके कवि रूप से विचारों और शैली दोनों ही दृष्टि से थोड़ा भी कम महत्वपूर्ण नहीं है।” उनकी इस बात में जो तथ्य और सत्य है उसकी पड़ताल भी इस इकाई में आपके द्वारा हो जानी है।

15.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- महादेवी वर्मा के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- औ महादेवी वर्मा के कृतित्व और रचना यात्रा से अवगत हो सकेंगे।
- महादेवी वर्मा की काव्य संवेदना का परिचय प्राप्त करेंगे।
- महादेवी वर्मा की कविता के मूल तत्वों को समझ सकेंगे।
- महादेवी के काव्य-कौशल और उनकी रचनाशीलता से परिचित हो सकेंगे।
- छायावादी काव्य में महादेवी वर्मा के योगदान और स्थान को पहचान सकेंगे।

15.3 मूल पाठ : महादेवी वर्मा : एक परिचय

15.3.1 महादेवी वर्मा : जीवन वृत्त

महादेवी वर्मा का जन्म होली के दिन 26 मार्च, 1907 को उत्तर प्रदेश के फ़र्रुखाबाद नामक नगर में हुआ था। माता-पिता की पहली संतान 'महादेवी' का जन्म लंबी प्रतीक्षा और मनौती के बाद हुआ था। इसलिए उनके बाबा ने अपनी कुलदेवी के नाम पर बालिका को 'महादेवी' नाम दिया। महादेवी के पिता का नाम श्री गोविंद प्रसाद वर्मा और माता का नाम श्रीमती हेमरानी था। बचपन से ही चित्रकला, संगीतकला तथा काव्यकला में उनकी रुचि थी। सात वर्ष की आयु में 'आओ प्यारे तारे आओ, मेरे आँगन में बिछ जाओ' जैसी कविताएँ लिखकर महादेवी ने अपनी योग्यता का परिचय दिया। उन्हें अपने वकील पिता से नफासत-पसंदी और विदुषी माता से भारतीय संस्कार मिले। वे बचपन से ही श्रम का महत्व सीख गई थीं। अपने घर का आँगन बुहारना, लीपना और गेहूँ बीनना से लेकर वे खाना बनाना और परोसना आदि कामों में कुशल थीं। अपने पारिवारिक संस्कार और माता-पिता तथा परिवेश के प्रभाव को स्वीकार करते हुए महादेवी ने लिखा है, "एक व्यापक विकृति के समय निजी संस्कारों के बोझ से जड़ीभूत वर्ग में मुझे जन्म मिला है। परंतु एक ओर साधनापूत, आस्तिक और भावुक माता तथा दूसरी ओर सब प्रकार की सांप्रदायिकता से दूर, कर्मनिष्ठ दार्शनिक पिता ने अपने-अपने संस्कार देकर मेरे जीवन को जैसा विकास दिया, उसमें भावुकता बुद्धि के कठोर धरातल पर, साधना एक व्यापक दार्शनिकता पर और आस्तिकता एक सक्रिय, पर किसी वर्ग या संप्रदाय में न बंधने वाली चेतना पर ही स्थित हो सकती थी। जीवन की ऐसी पार्श्व भूमि पर माँ से पूजा आरती के समय सुने गए मीरा, तुलसी आदि के तथा स्वरचित पदों के संगीत पर मुग्ध होकर मैंने ब्रजभाषा में पद-रचना आरंभ की थी।"

सक्सेना परिवार की तत्कालीन मान्यताओं के अनुसार नौ वर्ष की अल्पायु में महादेवी का विवाह हो गया और एक सप्ताह के लिए वे अपनी ससुराल भी गईं। पर पति से नहीं बनी। इसके बाद महादेवी ने वैवाहिक जीवन के स्थान पर शिक्षा का वरण किया और प्रथम श्रेणी में मिडिल पास कर पूरे प्रांत में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इलाहाबाद आने पर ही उनके मन में साहित्यिकता का अंकुर फूटा। वे कई बड़े कवियों के संपर्क में आईं। बापू (महात्मा गांधी) के संपर्क में आने से भी उनका लेखन प्रभावित हुआ। महादेवी की कविताएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं

में छपने लगीं। पढ़ाई करते-करते वे एम.ए. कर सकीं और वे वर्षों तक प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्राचार्य रहीं। 'खूब लड़ी मर्दानी' की कवयित्री सुभद्राकुमारी चौहान महादेवी की बचपन की सहेली हैं। इलाहाबाद (अब प्रयागराज) से प्रकाशित होने वाली 'चाँद' नामक मासिक पत्रिका का संपादन किया। आजादी का शंखनाद करने वाले इसके 'फाँसी' अंक को पढ़कर आप आज भी देश प्रेम से भर उठेंगे। इस पत्रिका के अवैतनिक संपादन में उन्होंने नारी की गरिमा और उसके भविष्य को सँवारने का यत्न किया। 'साहित्यकार संसद' और 'रंगवाणी नाट्य संस्था' की भी स्थापना की। साहित्यकार संसद के द्वारा आपने साहित्यकारों को आर्थिक सहायता प्रदान की। 'आधुनिक युग की मीरा' उनको इसी कारण कहा जाता है क्योंकि महादेवी ने अपनी कविताओं से वियोग और पीड़ा को शब्दबद्ध किया है। कविता, गद्य, चित्र, संगीत, राष्ट्रीय आंदोलन, स्त्री सशक्तीकरण आदि अनेक क्षेत्रों के लिए बरसों अथक कार्य किया और 11 सितंबर, 1987 को इस असार संसार से विदा ली।

महादेवी वर्मा के प्रायः सभी ग्रंथों को पुरस्कार मिले। 'यामा' के लिए भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ। मंगलाप्रसाद पारितोषिक, भारत भारती पुरस्कार, सकसेरिया पुरस्कार, द्विवेदी पदक आदि उन्हें लेखन के लिए मिले और उनको साहित्यिक सेवा के लिए अनेक विश्वविद्यालयों ने मानद डी.लिट. प्रदान की। भारत सरकार ने पद्म भूषण और पद्म विभूषण से नवाजा। उनके सम्मान में डाक टिकट जारी किया गया। 1979 में साहित्य अकादमी की सदस्यता ग्रहण करने वाली वे पहली महिला थीं।

बोध प्रश्न

- महादेवी को किन दो उपाधियों से विभूषित किया जाता है?
- महादेवी कौन-सी पत्रिका का संपादन करती थीं?
- महादेवी द्वारा स्थापित साहित्यिक संस्था का नाम क्या है?
- महादेवी को आधुनिक मीरा क्यों कहा जाता है?

15.3.2 सृजनात्मक व्यक्तित्व

संगीत, चित्र, काव्य, गीत, रेखाचित्र, संस्मरण, संस्मरणात्मक रेखाचित्र, निबंध, अनुवाद, काव्यमय चित्र, चित्रमय काव्य तथा चित्र गीत आदि अनेक विधाओं में रचना करने वाली

महादेवी वर्मा का सृजनात्मक व्यक्तित्व बहुमुखी है। 'नीरजा' से लेकर 'दीपशिखा' तक की रचना करने वाली महादेवी की प्रशंसा समालोचकों और कवियों ने मुक्त कंठ से की है। गंगा प्रसाद पांडेय महादेवी की तुलना 'हिमालय' से करते हैं - उनके व्यक्तित्व का वही उन्नत और दिव्य रूप, वही विराट और विशाल प्रसार, वही अमल धवल तथा अचल-अटल धीरता-गंभीरता, वही करुणा एवं तरलता और सबसे बढ़कर सुखकर शुभ हास। यही तो महादेवी है।" निराला जी लिखते हैं-

हिंदी के विशाल मंदिर की वीणा-वाणी।

स्फूर्ति-चेतना-रचना की प्रतिमा कल्याणी।

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा के सृजनात्मक व्यक्तित्व की तुलना हिमालय से क्यों की गई है?
- महादेवी की विशिष्टता के दो प्रमुख कारण क्या हैं?
- महादेवी की कविता का मुख्य स्वर क्या है?
- महादेवी की कविता में विषय वैविध्य न होने का क्या कारण है?

15.3.3 महादेवी वर्मा की रचनाएँ

पाठशाला में ही अपने हिंदी अध्यापक से प्रेरित होकर ब्रजभाषा में समस्या-पूर्ति करने वाली बालिका ने धीरे-धीरे खड़ीबोली में भी लिखना शुरू किया। उसी समय माँ से सुनकर एक करुण कहानी को खंड काव्य के रूप में लिख डाला। कविता के इस शैशव के बाद महादेवी ने उन्होंने अनुभूति प्रधान कविताएँ लिखना शुरू किया। राष्ट्रीय और सामाजिक जागरण या देशभक्ति की कविताओं के स्थान पर हृदय की पुकार को लिखा। पहली काव्य-कृति 'नीहार' 1930 में आई। इनकी प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं - नीहार (1930), रश्मि (1932), नीरजा (1935), सांध्य गीत (1936)। इन्हीं कृतियों के 185 गीतों का संग्रह यामा (1936), दीपशिखा (1942), साधिनी (1964) तथा प्रथम आयाम (1984)। सप्तपर्णा (1959) में ऋग्वेद के आधार पर कविताएं हैं। बाल्मीकि, कालिदास, अश्वघोष, भवभूति आदि कवियों की रचनाओं के अनुवाद और हिमालय (1963) नामक संग्रह में राष्ट्रीय गौरव की कविताएँ हैं।

महादेवी वर्मा प्रखर कवयित्री तो हैं ही, गद्यकार भी कुछ कम नहीं। किसी ने उनके गद्य को ठीक ही 'करुणा की चित्रलिपि में जीवन का गद्य' कहा है। महादेवी की गद्य रचनाओं में अतीत के चलचित्र (1941), शृंखला की कड़ियाँ (1942), स्मृति की रेखाएँ (1943), विवेचनात्मक गद्य (1943), पथ के साथी एवं क्षणदा (1956) और आलोचनात्मक निबंध संग्रह साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध (1962) प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त महादेवी द्वारा लिखित अनेक भूमिकाएँ, भाषण, साक्षात्कार और लेख भी इनके रचनात्मक वैभव के साक्षी हैं। रचनात्मक गद्य के अतिरिक्त महादेवी का विवेचनात्मक गद्य उनकी 'दीपशिखा', 'यामा' और 'आधुनिक कवि' की भूमिकाओं में देखा जा सकता है। यद्यपि महादेवी ने कोई उपन्यास, कहानी या नाटक नहीं लिखा तो भी उनके लेख, निबंध, रेखाचित्र, संस्मरण, भूमिकाओं और ललित निबंधों में जो गद्य लिखा है वह श्रेष्ठतम गद्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। महादेवी वर्मा अपने गद्य लेखन के बारे में कहती हैं, "विचार के क्षणों में मुझे गद्य लिखना ही अच्छा लगता रहा है, क्योंकि उसमें अपनी अनुभूति ही नहीं बाह्य परिस्थितियों के विश्लेषण के लिए भी पर्याप्त अवकाश रहता है। मेरा सबसे पहला निबंध तब लिखा गया था जब मैं सातवीं कक्षा की विद्यार्थिनी थी, अतः जीवन की वास्तविकता से मेरे परिचय कुछ नवीन नहीं है।" (शृंखला की कड़ियाँ, भूमिका, पृ. 12)

महादेवी वर्मा संभवतः अकेली ऐसी हिंदी लेखिका हैं जिन्होंने पशु-पक्षियों को 'मेरा परिवार' कहा है। उन पर लिखा है, अर्थात उनको और उनके साहचर्य को उसी प्रकार अपने आत्मीय सम्बोधन और संस्मरण के योग्य समझा जैसा वे शोषित उत्पीड़ित मनुष्यों को समझती हैं। यह याद रखना होगा कि आज हमारी जानकारी बड़ी सीमित होती जा रही है और पशु पक्षियों के प्रति लोगों में करुणा और दया कुछ कम नज़र आती है। महादेवी ने अपने इस परिवार के प्रति गहरी संवेदना और प्रेम दिखाया है जो अन्यत्र दुर्लभ है। महादेवी ने विभिन्न पात्रों की भाषिक विविधता, ध्वनि वैविध्य और आंगिक विक्षेप की बारीकियों को जितनी गहराई से पकड़ा है उसे चिड़िया बेचने वाले बड़े मियां की भाषा में देखें, "ईमान कसं, गुरु जी, चिड़ीमार ने मुझसे इस मोर के जोड़े के नकद तीस रुपए लिए हैं। बारहा कहा, भाई जरा सोच तो अभी इनमें मोर की कोई खासियत भी है कि तू इतनी बड़ी कीमत ही मांगने चला।" (मेरा परिवार, पृ. 25)। अब आप एक देहाती औरत की भाषा का नमूना देखिए, "हमार मालकिन तौ रात-दिन कितबियन माँ गड़ी रहती हैं। अब हमहूँ पढै लागब तो घर-गिरिस्ती कऊन देखि

सुनी।" एक तरफ उर्दू की पृष्ठभूमि के बड़े मियां की भाषा, दूसरी तरफ अवध के देहात की एक निरक्षर स्त्री की भाषा। पशु-पक्षी से लेकर आम इन्सानों तक का ऐसा सटीक चित्रण हिंदी की अमूल्य निधि है।

महादेवी के काव्य संसार में राष्ट्रीयता और नवजागरण के जिस स्वर की कमी दिखाई देती है उसकी भरपाई इनके गद्य में हो गई है। इनके गद्य साहित्य में दलित और पीड़ित समुदाय के प्रति सहानुभूति और संवेदना का प्राधान्य है। नारी के प्रति समाज की पुरातन दृष्टि के प्रति आक्रोश है। वे केवल शोर नहीं मचाती बल्कि अपने जीवन में इस वर्ग के लिए किए गए कारों के सहारे कुछ लिखकर उन्हें प्रेरित करती हैं। कहा जा सकता है कि उन्होंने अपने जीवन की वेदना को आम जनता की वेदना से मिलाया और उसे अपने रचना संसार का कंठ हार बनाकर प्रस्तुत किया।

गद्य रचनाओं में महादेवी का उदार और सामाजिक व्यक्तित्व बहुत प्रखरता से मुखर होकर सामने आया है। इनकी गद्य कृतियाँ अधिक नहीं हैं। लगभग 25 संस्मरणात्मक रेखाचित्र और 35 निबंध हैं। कुछ आलोचनाएँ भी हैं। महादेवी का गद्य उनकी वैचारिक दृष्टि का परिणाम है। नारी की दशा का चित्रण करने के लिए और उसे सशक्त करने के लिए वे आजीवन लिखती रहीं। 'स्मृति की रेखाएँ', 'अतीत के चलचित्र' और 'पथ के साथ' में लेखिका के शब्द-चित्रों के माध्यम से स्त्री के विविध रूपों का चित्रण किया है। 'शृंखला की कड़ियाँ' में उनका नारी विषयक दृष्टिकोण मुखर हुआ है। महादेवी वर्मा के गद्य में, मुख्यतः उनके द्वारा लिखे गए रेखाचित्रों और संस्मरणों में, एक विशेष प्रकार का चित्रांकन देखा जा सकता है। सूक्ष्म पर्यवेक्षण और कलापूर्ण रेखांकन करके महादेवी व्यक्ति चित्र प्रस्तुत करने में बेजोड़ हैं। दूसरा गुण कवित्व शक्ति से अनायास ही आ गया है। भाषा में कुछ ऐसा प्रवाह हैं कि उनका गद्य काव्य लगाने लगता है। तीसरा गुण है - संवेदना की अतिशयता का। संवेदना और भावुकता का ऐसा मेल मिलाकर महादेवी ने लिखा है कि उनके लेखन की ईमानदारी हर पंक्ति में दिखाई देती है। शोषित और दलित की वेदना को प्रस्तुत करते समय वे उनसे खुद-ब-खुद जुड़ जाया करती थीं। चौथा गुण है- यथार्थ के प्रति आग्रह। महादेवी ने अपने गद्य को काल्पनिक पात्रों से नहीं भरा, यहाँ प्रस्तुत दीन दुखी जीवन से सीधे सहेजे गए हैं। महादेवी ने समाज के उपेक्षित वर्ग का चित्रण करने में और उन्हें मानवता का आदर्श घोषित करने में भाषा की समस्त सुधराई को सहेजा है।

महादेवी की गद्य भाषा में इसीलिए एक लय, संगीत और चित्रात्मकता आ बसी है। उनका एक-एक वाक्य विचार और वस्तु का दर्पण है। उन्होंने रेखाओं में भावना और कल्पनाओं के रंग बहुत गहरे हैं और ये रंग शब्दों के द्वारा पाठक के सामने इंद्रधनुष ले आते हैं।

महादेवी वर्मा का समस्त लेखन - गद्य और पद्य - भारतीय जीवन मूल्यों के प्रति आस्था रखना भी सिखाता है। आज जब चरित्र का संकट चारों ओर छाया है, तब सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अस्तेय आदि जीवन मूल्यों की संवेदना से प्रभावित होकर लिखा गया साहित्य हमारे काम का है। महादेवी ने इसी तरह के प्रभावों से प्रभावित होकर तमाम रचनाएँ लिखीं, रेखाचित्र बनाए, संस्मरणों को उकेरा... जिससे संवेदनाएँ नए रूपों में प्रस्तुत हो सकें। जिससे जीवन को भी कुछ सीख मिल सके।

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा का काव्य संग्रह 'यामा' उनके दूसरे काव्य संग्रहों से किस प्रकार भिन्न है?
- महादेवी ने किस प्रकार की कविताएँ अपने प्रथम काव्य संग्रह 'नीहार' में नहीं दीं?
- महादेवी वर्मा की कविता की चार विशेषताएँ क्या हैं?
- महादेवी 'मेरा परिवार' कहकर किसे संबोधित करती रहीं हैं?
- महादेवी के गद्य की चार प्रमुख विशेषताएँ क्या हैं?
- महादेवी की गद्य भाषा में काव्यात्मकता भी कैसे आ सकी है?
- महादेवी का लेखन हमें क्या सीख देता है?

15.3 4 काव्य सौंदर्य

महादेवी छायावाद के दूसरे कवियों से अलग और विशिष्ट हैं। इस विशिष्टता के दो प्रमुख कारण हैं। एक तो उनका कोमल हृदय नारी होना और दूसरा अँग्रेजी और बंगला के रोमांटिक और रहस्यवादी कवियों से प्रभावित होना। महादेवी के काव्य में एक साथ ही गीति, प्रणय, वेदना, दुख, करुणा, रहस्यवाद, छायावाद, सर्वात्मवाद के दर्शन किए जा सकते हैं। महादेवी के गीतों में लौकिक प्रतीकों का प्रयोग है पर उनका लक्ष्य पूर्णतया अलौकिक है। मानवीय मूल्यों का व्यापक प्रयोग करके महादेवी ने अपने गीतों में तन्मयता को प्रस्तुत किया है।

छायावादी युग की सामाजिक-राजनीतिक पृष्ठभूमि कुछ भिन्न थी। देश में अंग्रेजी शासन के विरोध में लोग उठ खड़े हुए थे। कवि भी राष्ट्र प्रेम को जगाने के लिए लिखने लगे थे। यह सच है कि कवि अपने समय की वास्तविकता, यथार्थ से प्रभावित होकर अपनी रचनाओं में उसकी विशिष्ट प्रवृत्तियों को अभिव्यक्ति देता है और उसकी रचनाएँ ही उस युग-विशेष की मूल प्रवृत्ति को रूपायित करती हैं। लेकिन महादेवी अपनी काव्य रचनाओं में प्रायः अंतर्मुखी रही हैं। अपनी व्यथा, वेदना और रहस्य भावना को ही इन्होंने अधिक मुखरित किया है। उनकी कविता का मुख्य स्वर आध्यात्मिकता और रहस्यवादी ही अधिक दिखायी देता है। आप यह कह सकते हैं कि महादेवी वर्मा का काव्य प्रासाद इन चार स्तंभों पर स्थित है - वेदनानुभूति, रहस्य-भावना, प्रणय भाव और सौंदर्यानुभूति।

महादेवी की कविता में वेदनानुभूति

महादेवी का समस्त रचना संसार, विशेषतः काव्य संसार, वेदनामय है। यह वेदना लौकिक वेदना नहीं बल्कि आध्यात्मिक जगत की वेदना है। कवयित्री इस वेदना को उस दुख के रूप में देखती हैं जो सारे संसार को एक सूत्र में बाँधें रखने की क्षमता रखता है। (रश्मि, भूमिका, पृ. 7)। आप जानते और समझते होंगे कि दुनियादारी के दुख का वर्णन करके साहित्यकार करुण रस की गंगा बहाते हैं। महादेवी का दुख ऐसा नहीं है। वे कहती हैं, “मुझे दुख के दोनों रूप ही प्रिय हैं, एक वह, जो मनुष्य के संवेदनशील हृदय को सारे संसार से एक अविच्छिन्न बंधनों में बांध देता है। और दूसरा वह जो काल और सीमा के बंधन में पड़े हुए असीम चेतन का कृंदन है।” (रश्मि, भूमिका, पृ. 7)। किंतु उनके काव्य में पहले प्रकार का नहीं, दूसरे प्रकार का ‘कृंदन’ ही अभिव्यक्त हुआ है। ‘हिंदी साहित्य का इतिहास’ लिखते हुए इस विषय में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उल्लेख किया है, “इस वेदना को लेकर उन्होंने हृदय की ऐसी अनुभूतियाँ सामने रखीं जो लोकोत्तर हैं। कहाँ तक वे वास्तविक अनुभूतियाँ हैं और कहाँ तक अनुभूतियों की रमणीय कल्पना, यह कहा नहीं जा सकता।” (हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 719)। वेदना की इस एकांत साधना के फलस्वरूप महादेवी की कविता में विषयों का वैविध्य बहुत कम है। उनकी कुछ ही कविताएँ ऐसी हैं जिनमें राष्ट्रीय और सांस्कृतिक उद्बोधन अथवा प्रकृति का चित्रण हुआ हो।

महादेवी वर्मा की कविता में विरह वेदना भाव के विभिन्न रूपों की उपस्थिति उनके व्यक्तित्व से आई है । वे स्वयं अपनी कविता में कहती हैं - मैं नीर भरी दुख की बदली। आचार्य

हजारी प्रसाद द्विवेदी 'हिंदी साहित्य की भूमिका' में लिखते हैं, "1900-1920 की खड़ीबोली की कविता में कवि के अपने राग-विराग की प्रधानता हो गई। विषय अपने आप में कैसा है यह मुख्य बात नहीं थी, बल्कि मुख्य बात यह रह गई थी कि विषयी (कवि) के चित्त के राग-विराग से अनुरंजित होने के बाद वह कैसा दिखता है। विषय इसमें गौण हो गया, विषयी प्रधान।"

महादेवी की कविता में ये वेदना आई कहाँ से आई? कुछ कहा नहीं जा सकता। वे लिखती हैं, शलभ मैं शापमय वह हूँ/ किसी का दीप निष्ठुर हूँ। "उनकी कविता में ऐसे न जाने कितने प्रसंग और संकेत मिलते हैं जो बताते हैं कि उनके मन में कहीं अथाह पीड़ा थी। एक ऐसा अकेलापन है जो उनके विवाहित जीवन के अपूर्ण रह जाने से आया या कहीं ओर से, कुछ समझ नहीं आता। यह जरूर है कि यह उनके जीवन में किसी अभाव के कारण है। पीड़ा का साम्राज्य ही उनके काव्य संसार की सौगात है। विफल प्रेम से मिली पीड़ा उनकी कविता के लिए कच्चा माल है। वे पीड़ा में भी हँसती हैं किंतु उसे छिपाती नहीं।

महादेवी की वेदना अनुभूतिजन्य होने के कारण उनकी कविताओं में सहज रूप से अभिव्यक्त हुई है। इसमें कोई बनावट नहीं है। ये भाव ऊपर से आरोपित बिलकुल नहीं हैं। इन्हें महादेवी ने खुद भोगते हुए लिखा है। वे 'यामा' में लिखती हैं, "हमारे असंख्य सुख हमें चाहे मनुष्यता की पहली सीधी तक भी न पहुंचा सकें, किंतु हमारा एक बिंदु आँसू भी जीवन को अधिक मधुर अधिक उर्वर बनाए नहीं रह सकता।"

यह भी आपको याद रखना होगा कि महादेवी की वेदना उनकी अपनी पीड़ा अवश्य है किंतु वह नितांत व्यक्तिगत नहीं है। विद्वान अवश्य कहते हैं कि उन्होंने जीवन में बहुत दुख देखा था। पर वे स्वयं कभी इसे स्वीकार नहीं करतीं। महादेवी की कविता में उनकी वेदना भाव दो विचारों का परिपाक है "आध्यात्मिक और मानवतावादी। आध्यात्मिक भाव उनकी कविता में बौद्ध धर्म के उनके गहन अध्ययन से आया। गौतम बुद्ध ने 'करुणा और वेदना' को संसार के मूल में देखा था। महादेवी ने अपनी कविता को वेदना के द्वारा करुणा और वेदना से संपन्न किया। जिस सिद्धार्थ ने 'हीरक हार' को त्याग कर दर-दर जाकर अपना संदेश सुनाया उसी सिद्धार्थ की पदचाप को कविता के शिल्प में सजाकर महादेवी अपने पाठकों को जगाती हैं। मानवतावादी भावभूमि की परिचायक महादेवी की कविता में समस्त मानव समाज के लिए उनके मन में दया, ममता, करुणा और वेदना के भाव हैं। 'सांध्यगीत' और 'दीपशिखा' में महदेवी की वेदना को

मानव मात्र के प्रति करुणा का रूप लेते देखा जा सकता है। उनकी करुणा मानव के साथ साथ समस्त प्राणी मात्र तक जा पहुँची है। डॉ. रामविलास शर्मा ने सही आकलन किया है, “महादेवी वर्मा की करुणा व्यक्तिपरक अथवा आत्मगत ही नहीं है। वह बहिर्मुखी एवं समाजपरक भी है, जिसका प्रमाण उनकी गद्य रचनाओं बंगाल के दुर्भिक्ष से संबन्धित काव्य संकल की भूमिका आदि हैं।

यह भी आपको स्मरण रखना होगा कि महादेवी के काव्य-लोक में वेदना की परिणति ‘आनंद’ में होती है। महादेवी दुख और पीड़ा के बोझ तले रोती-सिसकती नहीं, बल्कि निरंतर बढ़ते हुए आनंद भाव की ओर उन्मुख होती हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि महादेवी में वेदना का व्यक्तिगत रूप तो मिलता ही है, उसका समष्टिगत रूप भी मिलता है। उनके वेदनाभाव में आध्यात्मिक और मानवतावादी दोनों भावभूमियाँ हैं। वेदना की लय उनकी कविता में अनायास नहीं सायास आई है। इसका संधान कवयित्री ने खुद किया। अपनी वेदना को वे प्राणीमात्र की वेदना से आगे ले जाकर सृष्टि के सभी जीव जंतुओं तक ले जाती हैं। उनके काव्यलोक में वेदना की परिणति आनंद में होती है।

बोध प्रश्न

- अनुभूतिजन्य वेदना से आप क्या समझते हैं?

महादेवी वर्मा की कविता में रहस्यवाद

महादेवी की कविता में रहस्यवाद को अनेक विद्वानों ने रेखांकित किया है। कुछ आलोचक महादेवी के व्यक्तिगत एकाकीपन और अभाव को रहस्यानुभूति का कारण मानते हैं। महादेवी और रहस्यवाद को एक दूसरे का पर्याय भी कहा जाता है।

आप प्रश्न कर सकते हैं कि रहस्यवाद है क्या? यह जानने से पहले आगे बढ़ा भी नहीं जा सकता। जय शंकर प्रसाद ने कहा था कि काव्य में आत्मा की मूल अनुभूति की धारा रहस्यवाद है। इस परिभाषा से भी बात स्पष्ट न हो तो डॉ वर्मा की विस्तृत परिभाषा देखी जा सकती है, “रहस्यवाद जीवात्मा की उस अंतर्निहित प्रवृत्ति का प्रकाशन है, जिसमें वह दिव्य और अलौकिक शक्ति से अपना शांत और निश्चल संबंध जोड़ना चाहती है और यह संबंध यहाँ तक बढ़ जाता है कि दोनों में कोई अंतर नहीं रह जाता।”

यदि हम महादेवी वर्मा की कविताओं में रहस्यानुभूति की चर्चा करते हैं और इस दृष्टि से उनकी कई कविताओं को देखते हैं तो स्पष्ट होता है कि वे एक विराट सत्ता को सर्वत्र देखती हैं। उनका मानना है कि हमारे मूर्त और अमूर्त जगत एक दूसरे से इस प्रकार मिले हुए हैं कि एक यथार्थदर्शी दूसरे को रहस्य दृष्टा बनकर ही पूर्णता पाता है।

महादेवी के काव्य में रहस्यवाद के सभी चरणों की अभिव्यंजना हुई है। रहस्यवाद का पहला चरण है - कौतूहल और जिज्ञासा। महादेवी चकित शिशु के समान प्रकृति के समस्त कार्य व्यापार को देखकर चकित हो जाती हैं और पूछती हैं, 'प्रथम प्रणय की सुषमा सा/ यह कलियों की चितवन में कौन?'

डॉ. शशी मुदीराज के शब्दों में 'महादेवी की रहस्यवादी अनुभूतियों में (इस) मुक्ति की तड़पन को सबसे अधिक देखा जा सकता है। महादेवी के लिए मुक्ति का प्रश्न देश और जाति का ही नहीं, स्वयं का भी है। इस जगह प्रसाद, पंत और निराला जैसे निस्संग और निरपेक्ष भाव से लिख सकते हैं वैसे महादेवी नहीं, क्योंकि वे नारी हैं। अनादि काल से पुरुष-शासित समाज में शोषित और पीड़ित नारी ... नई आर्थिक और सामाजिक-राजनीतिक लड़ाई ने स्त्री के अस्तित्व को उभार दिया। उस समय की नारी अपनी अस्मिता के लिए छटपता रही थी। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि वह देश की मुक्ति में कहीं अपनी मुक्ति खोज रहीं थीं। वह इसके लिए सक्रिय संघर्ष कर रही थी। मुक्ति उसके लिए केन्द्रीय प्रसंग था। किंतु यह बात इतनी सीधी और सरल नहीं है। मुक्ति के लिए संघर्ष - वह भी एक लंबे पीड़न, प्रताड़ना, अपमान और यंत्रणा के इतिहास से छूटने का संघर्ष कथ्य को सरल नहीं रहने देता। उसमें अवसाद, विवशता, पीड़ा, आत्म-पीड़न के साथ-साथ आत्माभिमान, अहंकार को छूटा हुआ आत्माभिमान भी होगा। "यह आत्माभिमान महादेवी की रहस्यानुभूति का एक महत्वपूर्ण अंग है।"

बोध प्रश्न

- स्त्री के रूप में महादेवी दूसरे छायावादी कवियों से कैसे भिन्न हैं?
- रहस्यानुभूति को कविता में महादेवी किस प्रकार व्यक्त करती हैं?

महादेवी वर्मा की कविता में प्रतीक योजना

'प्रतीक' शब्द अँग्रेजी शब्द 'सिंबल' का हिंदी पर्याय है। इसका शाब्दिक अर्थ 'चिह्न' या 'प्रतिरूप' है। प्रतीक के प्रयोग द्वारा कवि अपनी जटिल और कठिन अभिव्यक्ति को सरल और

आसान कर देते हैं। छायावादी सभी कवियों ने अपने आपने काव्य में प्रतीक योजना को बखूबी स्थान दिया है। इसी परंपरा में महादेवी ने अपने काव्य में प्रतीकात्मक संकेत भाषा का आश्रय लिया है। वे छायावादी प्रतीकों के साथ-साथ मौलिक प्रतीकों का प्रयोग भी सफलतापूर्वक करती हैं। महादेवी एक रहस्यवादी कवयित्री हैं और उनकी कविता में परंपरागत और स्वनिर्मित दोनों प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग हुआ है।

परंपरागत प्रतीकों में वे प्रतीक हैं जो प्राचीन साहित्य में भी प्रयोग किए जाते रहें हैं और हमेशा से प्रयोग किए जाते रहें हैं। निर्गुण संत काव्यधारा के परंपरागत और परिचित प्रतीक एक तो सरल, ज्ञात और बोधगम्य हैं दूसरे उनका प्रयोग अनायास ही हो गया प्रतीत होता है। उदाहरण के लिए संसार को सागर कहना आम है। कली, भ्रमर, उषा, मेघ, पवन, दीपक आदि तमाम परंपरागत प्रतीक हमें महादेवी की कविता में मिलते हैं। उदाहरण के लिए रात्रि को नारी कहना परंपरागत है। महादेवी 'यामिनी' में स्त्री और रात्रि को एकाकार करते हुए लिखती हैं - धीरे-धीरे उतार क्षितिज से आ बसंत रजनी / तारकमय नव वेणी बंधन / राशि फूल कर शशि का नूतन / रश्मि वलय सीट धन अवगुंठन / मुक्ताहल अभिराम बिछा दे / चितवन से अपनी / पुलकित आ बसंत रजनी।

अनेक परंपरागत प्रतीक हैं। सांध्यगगन - लौकिकता के प्रति विराग का प्रतीक है। यामिनी सेवारत साधिका है। गौधूलि - करुण मिलन की बेला है और सरिता - करुणा की अविरल धारा है। यही नहीं तेल - आंतरिक स्नेह, झंझावत - विघ्न बाधाएँ, अंधकार - विषाद, वर्षा - करुणा, मकरंद - अश्रु, नभ की दीपावली - तारागण, गायक - साधक, आदि न जाने कितने प्रतीक महादेवी की कविता में बिखरे पड़े हैं। कई संत कवियों की भाँति महादेवी ने भी दाम्पत्य जीवन अर्थात गृहस्थ जीवन के प्रतीकों को अपने काव्य विशेषतः रहस्यवादी काव्य में स्थान दिया है। मीरा की तरह वे कई बार ईश्वर को अपना पति मानते हुए उनके प्रति अपना प्रेम निवेदन करती हैं। शरीर को पिंजड़ा और आत्मा को तोता मानते हुए कई कवि लिखते रहें हैं, महादेवी भी लिखती हैं - कीर का प्रिय आज पिंजर खोल दे।

संतों और सूफियों के द्वारा प्रयोग किए गए प्रयोगों के साथ-साथ महादेवी जी साकी, प्याला, मदिरा, आदि का खूब प्रयोग करती हैं। ये प्रयोग बहुत मार्मिक हैं, "छिपाकर लाली में चुपचाप / सुनहला प्याला लाया कौन?" अन्य छायावादी कवियों के समान प्रकृति को केंद्र में

रखकर महादेवी ने भी बहुत से प्रतीकों का प्रयोग किया है। महादेवी जी प्रकृति के प्रयोग में उसकी अव्यक्त गतियों को भी बड़ी कुशलता से शब्दबद्ध करती हैं। वे ऋतु तथा लौकिक भावों संबंधी प्रतीकों का प्रयोग रूपक, उपमान तथा लक्षणा के रूप में बड़ी खूबसूरती से करती हैं। 'मैं नीर भरी दुख की बदली' में रूपक का सुंदर प्रयोग है तो 'धूप सा तन दीप सी मैं' उपमान का सुंदर प्रयोग है।

आध्यात्मिक और भावात्मक प्रतीकों का महादेवी जी ने खुलकर प्रयोग किया है। इसमें उनकी गहन कल्पनाशक्ति कार्य करती है। लौकिक प्रतीकों को वे बड़ी खूबसूरती से अलौकिक को व्यक्त करने में लगा देती हैं। अपने काव्य संग्रहों के नाम भी वे प्रतीकात्मक रखती रहीं हैं, जैसे 'नीहार' - नैराश्यपूर्ण वातावरन का प्रतीक है। 'रश्मि' - आशा और उल्लास का प्रतीक है। 'नीरजा' - सूर्य अर्थात परम तत्व की ओर उन्मुख रहने वाली आत्मा का प्रतीक है। 'सांध्य गीत' - साधना के विकास और आस्था का प्रतीक है। 'दीपशिखा' विरह रूपी रात्रि को झेलती और साधना प्रारंभ करती आत्मा का प्रतीक है। महादेवी वर्मा के द्वारा 'दीपक' के प्रतीक से जलन, पीड़ा, वेदना का अर्थ ही प्रकट नहीं होता बल्कि स्वयं जलकर संसार को प्रकाशवान बना देने का अर्थ भी दिखाई देता है -

मधुर मधुर मेरे दीपक जल
युग युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिफल
प्रियतम का पथ आलोकित कर

महादेवी वर्मा ने भावात्मक, मनोवैज्ञानिक, रूपात्मक, प्रकृति संबंधी, पौराणिक-ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक और कला संबंधी क्षेत्रों से अनेक प्रतीक लेकर अपनी प्रतीक योजना को समृद्ध किया है। उदाहरण के लिए, 'मधुर राग तू मैं स्वर संगम', 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ' आदि 'संगीत' से लिए गए प्रतीक हैं ।

महादेवी वर्मा के कुछ स्वयं निर्मित प्रतीक भी हैं। इनकी योजना वे खुद करती हैं। यह उनकी मौलिक सूझ बूझ का फल है। उदाहरण के लिए परंपरागत रूप से 'शलभ' अर्थात 'भ्रमर' को आदर्श प्रेमी के रूप में ही प्रयुक्त किया जाता रहा है। परंतु महादेवी जी ने उसे मोह मूलक सांसारिक आकर्षण के रूप में भी प्रस्तुत किया है, जैसे -

शेषमाया यमिनी मेरा निकट निर्वाण

पागल, रे शलभ अनजान !

इसी प्रकार से तारक समूह को वे परंपरा से कुछ हटकर प्रस्तुत करती हैं -

राख़ से अंगार तारे झर चले हैं

ऋतु संबंधी प्रतीकों का प्रयोग भी बहुत मौलिक है -

हास का मधु दूत भेजो

रोष का भ्रू-भंगिमा पतझर को चाहे सहेजो

देखा जा सकता है कि महादेवी ने प्रतीकों का प्रयोग तीन प्रकार से किया है - रूपक, उपमान और लक्षणा। 'मैं नीर भरी दुख की बदली', 'धूप सा तन दीप सी मैं' क्रमशः रूपक और उपमान हैं। कहीं-कहीं महादेवी के प्रतीक दुरूह हो गए हैं। किंतु समग्रतः कहा जा सकता है कि महादेवी वर्मा के प्रतीक वर्ण्य वस्तु और विषय के विभिन्न पक्षों, अंगों और गुणों की व्यंजना एक साथ करते हैं और संबद्ध विषय या भाव को समग्र रूप से प्रस्तुत करते हैं।

बोध प्रश्न

- क्या महादेवी के प्रतीक बदले हुए अर्थ में भी दिखाई देते हैं?
- महादेवी द्वारा प्रयोग किए गए चार प्रतीकों के नाम लिखिए।

प्रणय

महादेवी के गीतों में वेदना और प्रणय भाव की प्रधानता है। उनके गीतों में स्थान-स्थान पर अपने प्रेमी को संबोधन है। वे एक प्रेमिका की तरह अपने प्रेमी को प्राप्त करने के लिए आकुल-व्याकुल रहती हैं। पर इस प्रेयसी का प्रेम लौकिक नहीं अलौकिक है। उनका आराध्य कोई व्यक्ति नहीं बल्कि चीर चेतन परम ब्रह्म है।

जो न प्रिय पहचान पाती

दौड़ती क्यों प्रति शिरा में प्यास विद्युत सी तरल धन ।

जब कभी प्रेम की यह पीड़ा बरदाश्त के बाहर हो जाती है तो वे इसमें करुणा और वेदना को मिलाकर कहती हैं -

क्या अमरों को लोक मिलेगा, मेरी करुणा का उपहार?

रहने दो हे देव अरे यह मेरा मिटने का अधिकार?

कहना न होगा कि महादेवी के प्रगीतों में प्रणय और वेदना सामान्य प्रणय वेदना नहीं है। वे सब तो उस प्रेम के पोषक और संवर्धक हैं। सुख-दुख, मिलन-विरह, अमृत-विष सब प्रेम सागर में मिलते हैं और एकाकार हो जाते हैं।

बोध प्रश्न

- 'महादेवी के प्रगीतों में वेदना और प्रणय सामान्य नहीं है' इसका क्या अभिप्राय है?

सौंदर्य

महादेवी वर्मा के गीतों में सौंदर्य का एक अलग रूप दिखाई देता है। यह सौंदर्य शारीरिक नहीं अपितु आत्मिक है। भावुकता, कल्पनाशीलता और आंतरिक शक्ति को एक साथ मिलाते हुए वे बड़ी कुशलता से अपनी इसी सौंदर्यानुभूति का चित्रण करती हैं। नारी की वेदना, त्रास, दमन, पीड़ा, उसकी साधना, आत्म-मंथन, उसका आत्मिक रहस्य और आध्यात्मिक उपासना और समर्पण आदि सभी कुछ उन्हें आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा देता है तथा संघर्ष करने के लिए बल प्रदान करता है। महादेवी अपने प्रगीतों में नारी ने आत्मिक सौंदर्य की भाव-लहरियों में पुरुष सौंदर्य का मर्यादित वर्णन करती हैं -

रजत रश्मियों की छाया में धूमिल घन सा यह आता,

इस निदाघ से मानस में करुणा के स्त्रोत बहा जाता।

इनके प्रगीतों में अव्यक्त के प्रति जिज्ञासा और विस्मय की करुणा का मार्मिक सौंदर्य दिखाई पड़ता है। मिलन के लिए आतुर विरहिणी स्वयं को बेबस और बेचैन महसूस करती हैं -

हाथ में लेकर जर्जर बीन

इन्हीं बिखरे तारों का जोड़

लिए कैसे पीड़ा का भार

देव आऊँ अनंत की ओर

इस प्रकार महादेवी अपने प्रगीतों में असीम सत्ता के परम सौंदर्य एवं प्रेम में समाहित होकर अद्भुत एवं अमर सौंदर्य की स्थापना करती है। महादेवी वर्मा को उनके सशक्त व्यक्तित्व के कारण कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने उन्हें 'हिंदी के विशाल मंदिर की सरस्वती' कह कर आदर दिया है। किंतु महादेवी खुद को 'नीर भरी दुख की बदली' कहकर अपने आप को वेदना और करुणा से जोड़कर प्रस्तुत करती हैं। उन्हें, आप जानते ही हैं, 'आधुनिक युग की मीरा' कहते हैं। ठीक भी है क्योंकि उनका जीवन और कृतित्व करुणा और संवेदना से आप्लावित दिखाई देता है। बचपन से ही गौतम बुद्ध का दर्शन और विचार उन्हें रुचिकर लगे और 'दुखवाद' को वे अपनी कविता में पेश करती हैं। उनका विचार है कि वेदना मन को निर्मल करती है और जीवन में उसका भी उतना ही महत्व है जितना आनंद का। उनकी वेदना में आशा है, निराशा नहीं। यही आशा उन्हें प्रिय से मिलने के लिए आतुर करती है और इसी आतुरता में आनंद की अनुभूति होती है। (करुणा - बहुत होने के कारण बुद्ध संबंधी साहित्य भी मुझे बहुत प्रिय रहा है' - 'आधुनिक कवि' माला, भाग एक की भूमिका से)

छायावादी कवियों की तरह महादेवी भी अपनी कविता में प्रतीकों का प्रयोग करती हैं। उनके बहुत से प्रतीक परंपरागत हैं तो कुछ वे खुद निर्माण करती हैं। 'दीपक' का प्रतीक उनकी पहचान ही बन गया है। परंपरागत (सूफी और संतों द्वारा विकसित) और स्वनिर्मित प्रतीकों के द्वारा महादेवी अपनी कविता के शिल्प को सजाती हैं। वे इनका प्रयोग रूपक, उपमान और लक्षणा के रूप में अलग-अलग ढंग से करती हैं, लौकिक प्रतीकों से वे अलौकिक को बड़ी कुशलता से व्यक्त करती हैं।

नारी की वेदना को प्रकृति के विविध रंगों से सजाकर और फूल, दीपक, सरिता, नीर भरी दुख की बदली बनकर भी जीवन के गीत गाने वाली महादेवी संसार के कल्याण की बात करती हैं। वे विश्व सुख के सामने अपने दुख को छोटा मानती हैं। लोक मंगल ही उनकी कविता का ध्येय है। महादेवी अपने मन में भरे दुख और पीड़ा से संसार में सुख की वर्षा करना चाहती हैं।

बोध प्रश्न

- महादेवी की कविता का क्या ध्येय है?

- दीपक’ के कम से कम चार प्रतीकार्थ बताइए।

15.4 पाठ सार

छायावाद के चार स्तंभों में से एक महादेवी वर्मा ने छायावाद के कवियों में अपना एक अलग स्थान बनाया। उन्होंने अपनी कविता का माध्यम पूरी तरह से गीत को बनाया । महादेवी ने अपने पारिवारिक जीवन की परवाह न करके अपने परिचितों और समाज के पीड़ितों को अपना परिवार बनाया। पति को परमेश्वर मानकर उसकी सेवा न करके मीरा के समान एक विशेष सत्ता को अपना पति मानकर उसके विरह में कविताएँ लिखीं। महादेवी ने राष्ट्रीय चेतना और देश को अपनी कविता में उतना स्थान नहीं दिया जितना उस समय अपेक्षित रहा होगा। इसकी भरपाई वे अपने गद्य में करती हैं। यहाँ वे दलित और पीड़ित समुदाय के प्रति अपनी सम्पूर्ण संवेदना और सहानुभूति प्रकट करती हैं। उनके गद्य लेखन में वेदना का हाहाकार ही नहीं है उसके नवनिर्माण का प्रयत्न भी है। महादेवी ने अपने जीवन में समाज की अनेक गली-सड़ी परम्पराओं को तोड़ा और अपने लेखन से समाज के हर वर्ग को नव निर्माण का संदेश भी दिया। महादेवी के काव्य और गद्य दोनों का जादू सर चढ़कर बोलता है। उनके लेखन से भारतीय जीवन मूल्यों के प्रति आस्था प्रबल होती है। जो लोग उन्हें केवल पीड़ा और निराशा की कवयित्री मानते हैं वे यह नहीं जानते कि उस पीड़ा में कितनी आग है जो जीवन के सत्य को उजागर करती है। अपने नाम के शाब्दिक अर्थ को क्रियात्मक सार्थकता देने वाली महादेवी वास्तव में महादेवी ही हैं।

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. महादेवी वर्मा ने छायावाद की समस्त विशेषताओं से युक्त गीत रचकर छायावाद-चतुष्टय में अपना स्थान बनाया।
2. विरह-वेदना, प्रणय निवेदन और रहस्य भावना महादेवी के गीतों की प्रमुख विशेषताएँ हैं।
3. प्रेम को आध्यात्मिक ऊँचाई प्रदान करने के कारण महादेवी को आधुनिक युग की मीरां कहा जाता है।

4. महादेवी ने परंपरागत और स्व निर्मित प्रतीकों द्वारा छायावादी कविता के शिल्प को समृद्ध किया।
5. महादेवी का काव्य निजी पीड़ा को सार्वजनिक पीड़ा और लोक-मंगल में विलीन करने की उदात्त चेष्टा का प्रतीक है।

15.6 शब्द संपदा

1. अद्वैत = द्वैत या भेद का अभाव, अद्वितीय
2. अनुप्राणित = प्रेरित, जिसे जीवन या स्फूर्ति प्रदान की गई हो
3. द्वैत = दो होने का भाव, भेद भावना
4. निर्वाण = जो समाप्त न हो, अचल
5. पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार = महादेवी एक ही शब्द का दो बार प्रयोग करती हैं, जैसे - मधुर-मधुर, पुलक-पुलक। दोनों शब्द योजक चिह्न (-) से जुड़े हैं। ऐसे प्रयोग से कविता का सौंदर्य बढ़ता है।
6. प्रणय = प्रेम, प्रीति, विश्वास
7. प्रतीक = चिह्न, प्रतिरूप
8. संपुट = कटोरे जैसी कोई वस्तु, अंजलि
9. संयत = संबद्ध, अविरल

15.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. महादेवी के काव्य के मूल तत्व 'वेदना' पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
2. "छायावादी कविता में महादेवी वर्मा द्वारा प्रयोग किए गए प्रतीकों का क्या स्थान है।" विस्तारपूर्वक विवेचन कीजिए।
3. महादेवी के प्रगीतों की विशेषताएँ बताइए।
4. महादेवी के साहित्यिक व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक सारगर्भित निबंध लिखिए ।

5. ‘महादेवी के काव्य में निराशा का नकारात्मक रूप नहीं, करुणा का सकारात्मक रूप है’ इस कथन को उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
6. “महादेवी की कविताओं में प्रकृति, प्रणय और वेदना का अंकन है।” इस पंक्ति का विवेचन कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. महादेवी को आधुनिक मीरा कहने का कारण क्या है?
2. स्त्री और प्रकृति के संबंध को कविता में कवयित्री महादेवी कैसे उकेरती हैं?
3. “महादेवी की कविता सुसज्जित भाषा का अनुपम उदाहरण है।” उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।
4. “महादेवी की कविता सीमित दायरे की कविता है।” क्या आप इस कथन से सहमत हैं? क्यों? क्यों नहीं?
5. लिखित पर सारगर्भित टिप्पणी लिखिए -
   क) महीयसी महादेवी
   ख) महादेवी काव्य की भूमिका
   ग) महादेवी की कविता में दुख और सुख
   घ) रहस्यवाद और महादेवी की कविता

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. महादेवी वर्मा का जन्म कब हुआ था? ( )
   (अ) 1897 (आ) 1905 (इ) 1907 (ई) 1910
2. महादेवी वर्मा का जन्म स्थान कौन सा है? ( )
   (अ) गाजियाबाद (आ) मुरादाबाद (इ) फ़र्रुखाबाद (ई) हैदराबाद

3. महादेवी वर्मा के काव्य की कौन सी विशेषता प्रमुख है? ( )

(अ) देश प्रेम (आ) वेदना (इ) कल्पना (ई) प्रकृति

4. महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में कौन सा तत्व प्रधान है? ( )

(अ) कल्पना (आ) यथार्थ (इ) रहस्य (ई) दास्तान

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. महादेवी वर्मा को .... के चार प्रमुख कवियों में गिना जाता है।

2. .... काव्य संग्रह में पूर्व प्रकाशित 185 कविताओं का संग्रह है।

3. महादेवी वर्मा को आधुनिक युग की ....कहा जाता है।

4. महादेवी के गीतों में लौकिक प्रतीकों के द्वारा .... की ओर लक्ष्य रहा है।

5. महादेवी अपने गद्य में .... के प्रति संवेदना व्यक्त करती हैं ।

6. महादेवी ने .... के विचारों से प्रभावित होकर लेखन किया ।

7. महादेवी वर्मा ने अपनी कविता का माध्यम पूरी तरह ....को बनाया है ।

III. सुमेल कीजिए -

1. बदली	(अ) करुणा का मूल
2. दीपक	(आ) सौंदर्य और नश्वरता का प्रतीक
3. पीड़ा और वेदना	(इ) काव्य संकलन
4. नीहार	(ई) प्रतीक
5. पथ के साथी	(ई) रेखाचित्र संस्मरण

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. महादेवी : सं. परमानंद श्रीवास्तव

2. महीयसी महादेवी : गंगा प्रसाद पांडे

3. महादेवी - नया मूल्यांकन : गणपति चंद्र गुप्त

4. छायावाद : नामवर सिंह

इकाई 16 : 'रश्मि' : काव्यालोचन

रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना

16.2 उद्देश्य

16.3 मूल पाठ : 'रश्मि' : काव्यालोचन

16.3.1 'रश्मि' काव्य संग्रह का सामान्य परिचय

16.3.1.1 कथ्य के स्तर पर

16.3.1.2 अभिव्यक्ति के स्तर पर

16.3.1.3 काव्य-भाषा के स्तर पर

16.3.2 समीक्षात्मक अध्ययन

16.4 पाठ सार

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

16.6 शब्द संपदा

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप जान ही चुके हैं कि महादेवी वर्मा छायावाद की प्रमुख कवयित्री हैं। उन्हें 'आधुनिक मीराँ' के नाम से भी जाना जाता है। यदि निराला के शब्दों में कहें तो महादेवी वर्मा 'हिंदी के विशाल मंदिर की सरस्वती' हैं। उन्होंने स्वतंत्रता के पहले का भारत भी देखा है और स्वतंत्रता के बाद के भारत भी। उन्होंने अपनी भावनाओं एवं अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने के लिए कविता को माध्यम बनाया। उनकी कविताएँ सिर्फ पाठकों को ही नहीं बल्कि

समीक्षकों को भी गहराई से प्रभावित करती हैं। आप महादेवी वर्मा के संपूर्ण साहित्य में भारतीयता को देख सकते हैं।

महादेवी वर्मा पर बौद्ध दर्शन का भी प्रभाव दिखाई देता है। उनकी कविताओं में वेदना को महसूस किया जा सकता है। उनकी यह वेदना वैयक्तिक न होकर, वैश्विक है। वह स्त्री अधिकारों के प्रबल पक्षधर थीं। इस इकाई में आप महादेवी वर्मा के कविता संग्रह 'रश्मि' का आलोचनात्मक अध्ययन करेंगे।

16.2 उद्देश्य

छात्रो! इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

- महादेवी वर्मा के काव्य संग्रह 'रश्मि' का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- 'रश्मि' काव्य संग्रह की कविताओं में निहित सौंदर्य पक्ष को जान सकेंगे।
- 'रश्मि' काव्य संग्रह की कविताओं में निहित भाव पक्ष को समझ सकेंगे।
- 'रश्मि' की काव्यगत विशेषताओं को पहचान सकेंगे।
- महादेवी वर्मा की काव्य संवेदना की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- महादेवी वर्मा की काव्य-भाषा को समझ सकेंगे।
- महादेवी वर्मा के जीवन दर्शन से अवगत हो सकेंगे।

16.3 मूल पाठ : 'रश्मि' : काव्यालोचन

16.3.1 'रश्मि' काव्य संग्रह का सामान्य परिचय

प्रिय छात्रो! 'रश्मि' महादेवी वर्मा की कविताओं का दूसरा संग्रह है। इसका प्रकाशन 1932 में हुआ था। वस्तुतः 1927-1932 के दौरान लिखी कविताओं को इस संग्रह में सम्मिलित किया गया है। इन कविताओं में एक ओर प्रकृति चित्रण है, तो दूसरी ओर आत्म गोपन, दुख, वेदना, मृत्यु, जीवन, अतृप्ति, आशा-निराशा, स्मृति, दुविधा आदि हैं। इन कविताओं के संबंध में स्वयं महादेवी वर्मा का यह कथन उल्लेखनीय है -

"रश्मि में मरी कुछ नई और कुछ पुरानी कविताएँ संग्रहीत हैं। इसके विषय में क्या कहूँ! यह मेरे इतने निकट है कि उसका वास्तविक मूल्य आंकना मेरे लिए संभव नहीं। हाँ, इतना कहने में मुझे संकोच न होगा कि मैं स्वयं अनित्य होकर भी जिन प्रिय वस्तुओं की नित्यता की कामना करने से नहीं हिचकती यह उन्हीं में से एक है।" (महादेवी वर्मा, रश्मि, भूमिका)।

छात्रो! इस कविता संग्रह के बार में समझना हो तो इस संग्रह में निहित एक-एक कविता के कथ्य और अभिव्यंजना पद्धति को समझना जरूरी है। तो आइए! हम संक्षिप्त रूप में ही सही कुछ प्रमुख कविताओं पर दृष्टि केंद्रित करेंगे।

16.3.1.1 कथ्य के स्तर पर

'रश्मि' शीर्षक कविता संग्रह की पहली कविता है 'रश्मि'। इसमें प्रभात का मनोरम चित्र अंकित है। उषा की अरुण किरणें विश्व के कण-कण पर पड़ने से रात का अँधेरा दूर भागता है। निस्तब्धता नष्ट हो जाती है और मधुर निर्झर की तरह संगीत बहने लगता है। ऐसी स्थिति में मनुष्य की चेतना भी जागृत हो जाती है। अर्थात उसके हृदय का कोना-कोना भी संगीत से भर जाता है। कुछ स्मृतियाँ मनुष्य के मन में झंकृत होने लगती हैं।

चुभते ही तेरा अरुण बान!
बहते कन कन से फूट फूट,
मधु के निर्झर से सजल गान!

***

सौरभ का फैला केश जाल,
करतीं समीर परियाँ विहार;
गीलीकेसर-मद झूम झूम,
पीते तितली के नव कुमार

इसके संबंध में स्वयं महादेवी का कथन द्रष्टव्य है - “उषा की अरुण किरण चितवन पर पड़ते ही विश्व की सारी निस्तब्धता एक अपूर्व संगीत में परिवर्तित हो जाती है। तब मनुष्य का हृदय भी उस संगीत में अपना स्वर मिलाए बिना नहीं रह पाता।” (रश्मि, पृ. 107)।

बोध प्रश्न

- ‘रश्मि’ शीर्षक कविता के माध्यम से महादेवी वर्मा क्या कहना चाहती हैं?
- ‘रश्मि’ शीर्षक कविता में किसका चित्रण है?

‘सुधि’ शीर्षक कविता में स्मृति को वसंत के आगमन के साथ तुलना करते हुए कवयित्री कहती हैं कि स्मृति का आना वसंत के आगमन से कम महत्व का नहीं होता। स्मृतियाँ जीवन को सरस और उर्वर बनाने में सहायक होती हैं-

> किस सुधि-वसंत का सुमन-तीर,
>
> कर गया मुग्ध मानस अधीर?

यहाँ सुधि-वसंत का आशय उस स्मृति से है जो वसंत के समान जीवन को सुख-दुख से भर देता है। इसी प्रकार ‘पपीहे से’ शीर्षक कविता के माध्यम से महादेवी कहती हैं कि प्रकृति से मनुष्य को बहुत कुछ सीखना होगा।

बोध प्रश्न

- ‘सुधि-वसंत’ का क्या अर्थ है?

छात्रो! इस संग्रह में संकलित एक कविता का शीर्षक केवल प्रश्नवाचक चिह्न (‘?’) है। यह शीर्षक पाठक को स्वतः ही आकर्षित करता है। मन में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि आखिर महादेवी वर्मा ने शीर्षक के रूप में इस तरह का प्रयोग क्यों किया! आप इस कविता को पढ़ेंगे तो पाएँगे कि इसमें प्रश्नों की शृंखला है। जैसे -

> हुआ त्यों सूनेपन का भान,
>
> प्रथम किसके उर में अम्लान?
>
> और किस शिल्पी ने अनजान,

विश्व प्रतिमा कर दी निर्माण?

इस कविता के माध्यम से कवयित्री यह प्रश्न करती हैं कि शून्य में किस पूर्ण-सत्ता ने एकाकीपन का अनुभव करके विश्व का निर्माण किया। वे आगे पूछती हैं कि वह इस पर इतने सुंदर रंग कौन चढ़ाता और मिटाता है? इसका सारा सौंदर्य क्षण भंगुर क्यों है? इस तरह के प्रश्न हमारे मन कभी न कभी उत्पन्न हो ही जाते हैं लेकिन उत्तर मिल पाना कठिन है। '?' शीर्षक कविता के समान 'रहस्य' शीर्षक कविता में भी सृष्टि के निर्माण से संबंधित केवल प्रश्न है।

बोध प्रश्न

- आपकी दृष्टि में '?' शीर्षक कविता के लिए उपयुक्त है या नहीं?

छात्रो! कहा जाता है कि जीवन क्षण भंगुर है। वह पल-पल परिवर्तित होता रहा है। वह कौन करता है और किसके करण होता है यह कोई नहीं जानते। कवयित्री यह मानती हैं कि इस परिवर्तन के पीछे एक अनजान शक्ति है। लेकिन हम उस शक्ति को न ही पहचान पाते हैं और न ही समझ पाते हैं कि हमारे साथ उसका संबंध क्या है। 'कौन है?', 'उपालंभ' और 'दुविधा' शीर्षक कविताओं में क्षण भंगुरता को देखा जा सकता है।

कुमुद-दल से वेदना के दाग़ को,
पोंछती जब आँसुओं से रश्मियाँ;
चौंक उठतीं अनिल के निश्वास छू,
तारिकायें चकित सी अनजान सी;
तब बुला जाता मुझे उस पार जो,
दूर के संगीत सा वह कौन है? (कौन है?)

बोध प्रश्न

- किन कविताओं में जीवन की क्षण भंगुरता का चित्रण है?
- क्षण भंगुरता का क्या अर्थ है?

महादेवी वर्मा मनुष्य को महत्व देती हैं। इस संबंध में उनका यह कथन उल्लेखनीय है - "मेरे लिए तो मनुष्य एक सजीव कविता है। कवि की कृति तो उस सजीव कविता का शब्द चित्र मात्र है जिससे उसका व्यक्तित्व और संसार के साथ उसकी एकता जानी जाती है।" (महादेवी वर्मा, भूमिका, रश्मि)। अतः 'रश्मि' काव्य संग्रह में पग-पग पर मनुष्य और उसके जीवन से संबंधित अंशों को देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न

- मनुष्य को महादेवी वर्मा क्या मानती हैं?

'गीत' शीर्षक कविता में महादेवी यह कहती हैं कि हमारा जीवन वीणा के समान है। परम-सत्ता इस वीणा से संगीत की सृष्टि करता है। कभी बेसुरी तो कभी मधुर। कवयित्री कहती हैं कि यह संगीत कभी-कभी विश्व-संगीत से हमें एक कर देती है तो कभी-कभी उससे अलग।

पल में रागों को झंकृत कर,
फिर विराग का अस्फुट स्वर भर,
मेरी लघु जीवन-वीणा पर
क्या यह अस्फुट गाते?

छात्रो! साधारण रूप से दीपक को जलाने के लिए हमें कुछ चीजों की आवश्यकता होती है। तो कवयित्री कहती हैं कि जीवन रूपी इस दीपक को जलाने के लिए भी कुछ चीजों की आवश्यकता है। लेकिन जीवन-दीप को जलाने वाली वस्तुओं के बारे में हम नहीं जानते। कवयित्री कहती हैं कि यदि समझ जाएँगे तो उसका बुझना आश्चर्यजनक नहीं लगेगा -

इन उत्ताल तरंगों पर सह -
झंझा के आघात,
जलना ही रहस्य है बुझना -
है नैसर्गिक बात।

'जीवन' शीर्षक कविता में कवयित्री ने इस जीवन सत्य को उजागर किया है कि मृत्यु जीवन का परम विकास है -

“अमरता है जीवन का ह्रास,

मृत्यु जीवन का परम विकास”।

दूर है अपना लक्ष्य महान,

एक जीवन पग एक समान;

बोध प्रश्न

- जीवन के संबंध में महादेवी वर्मा के क्या विचार हैं?

महादेवी वर्मा के अनुसार मनुष्य एक सजीव कविता है। “कवि की कृति तो उस कविता का शब्द-चित्र मात्र है जिससे उसका व्यक्तित्व और संसार के साथ उसकी एकता जानी जाती है। वह एक संसार में रहता है और उसने अपने भीतर एक और इस संसार अधिक सुंदर, अधिक सुकुमार संसार बसा रखा है।” (रश्मि, भूमिका)।

मनुष्य जब तक अबोध रहता है - अर्थात बालक है तब तक उसे स्वार्थ की संकुचित सीमा नहीं बाँध पाती। वह तितलियों के साथ खेलता है, फूलों के साथ हँसता है, तारों से बातें करता है, मेघों के साथ रोता है। लेकिन धीरे-धीरे वह प्रकृति से कट जाता है और अपने में सिमट जाता है। कवयित्री ‘वे दिन’ शीर्षक कविता में उन दोनों को याद करती हैं जब मनुष्य का संबंध प्रकृति मात्र से था।

मानव जीवन आशा-निराशा, आस्था-अनास्था, सुख-दुख, राग-द्वेष से भरा हुआ है। ‘दुख’ शीर्षक कविता में जीवन मर्म छुपा हुआ है। भले ही सुख की तुलना में दुख मलिन लगे लेकिन महादेवी के अनुसार यह जीवन को उर्वर बनाने के लिए आवश्यक है -

दुख के पद छू बहते झर झर,

कण कण से आँसू के निर्झर,

हो उठता जीवन मृदु उर्वर,

लघु मानस में वह असीम जग को आमंत्रित कर लाता।

बोध प्रश्न

- जीवन को उर्वर बनाने के लिए महादेवी वर्मा के अनुसार क्या आवश्यक है?

मनुष्य महत्वाकांक्षी है। वह जीवन में आगे बढ़ने के लिए कुछ न कुछ पाने की कोशिश करता ही रहता है। 'आशा' शीर्षक कविता में महादेवी वर्मा कहती हैं कि जिसे हम दुख का सागर समझ रहे हैं उसमें एक दिन सुख की बुलबुलें उठेंगी। भले ही स्मृतियों की रेखाएँ आज धुँधली लग रही हों लेकिन वे ही इंद्रधनुष के रंगों से रंग जाएँगी -

वे मधु दिन जिनकी स्मृतियों की

धुँधली रेखायें खोईं,

चमक उठेंगे इंद्रधनुष से

मेरे विस्मृति के घन में।

विस्मृति उस समय असहनीय हो जाती है जब हम अभाव का अनुभव करने लगते हैं। यही 'स्मृति' शीर्षक कविता का कथ्य है -

कसक कसक उठती सुधि किसकी?

रुकती सी गति क्यों जीवन की?

क्यों अभाव छाये लेता

विस्मृतिसरिता के कूल?

मनुष्य अपने मन में अनेक इच्छाओं को पालता है। यदि वह किसी चीज से तृप्त हो जाता है तो विकास अवरुद्ध हो जाएगा। क्योंकि तृप्ति का अर्थ है इच्छा का अंत। इच्छा में जो सुख शांति होती है वह पूर्ति में नहीं होती। यह जीवन का कटु सत्य है जिसे महादेवी वर्मा 'अतृप्ति' शीर्षक कविता के माध्यम से व्यक्त करती हैं -

चिर तृप्ति कामनाओं का

कर जाती निष्फल जीवन,

बुझते ही प्यास हमारी

पल में विरक्ति जाती बन।

****

मेरे छोटे जीवन में

देना न तृप्ति का कणभर;

रहने दो प्यासी आँखें

भरतीं आँसू के सागर।

'आह्वान' शीर्षक कविता में जहाँ कवयित्री कहती हैं कि मनुष्य का हृदय असीम अंधकार में, घने मेघों में, अथाह जल में, एक असीम छाया मात्र देखकर किसी भूले हुए स्नेह के आकर्षण के खिंचकर संसार से दूर उड़ जाना चाहता है वहीं 'मेरे पता' शीर्षक कविता में कहती हैं कि 'धड़कनों से पूछता है क्या हृदय पहिचान?' वे यह स्पष्ट करती हैं कि जिस प्रकार धड़कन का अस्तित्व हृदय में ही उसी प्रकार सीमित का अस्तित्व असीम में है।

महादेवी की मान्यता है कि मनुष्य का परिचय देना असंभव है। क्योंकि मानव जीवन से जुड़े अनेक ऐसे प्रश्न हैं जिनका समाधान किसी के पास नहीं है। जन्म-मृत्यु आदि से संबंधित प्रश्नों को सुलझाना असाध्य है। इसीलिए वे कहती हैं -

नाम से जीवन से अनजान,

कहो क्या परिचय दे नादान!

***

सिंधु को क्या परिचय दें देव!

बिगड़ते बनते वीचि-विलास;

क्षुद्र हैं मेरे बुद्बुद् प्राण

तुम्हीं में सृष्टि तुम्हीं में नाश!

'निभृत मिलन' और 'तू और मैं' शीर्षक कविताओं में जड़-चेतन और सीमा-असीम के मिलन को दर्शाया गया है। इसी प्रकार 'उलझन', 'प्रश्न', 'विनिमय', 'देखो', 'अंत', 'मृत्यु', 'जब',

'क्रय', 'समाधि से', 'क्यों' और 'कभी' शीर्षक कविताओं के माध्यम से मानव जीवन से संबंधित अनेक रहस्यों का उद्घाटन किया गया है।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि 'रश्मि' में संकलित कविताओं के माध्यम से महादेवी वर्मा के जीवन दर्शन तथा मनुष्य संबंधी उनकी धारणाओं को जाना जा सकता है।

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा के अनुसार मनुष्य का परिचय देना क्यों असंभव है?

16.3.1.2 अभिव्यक्ति के स्तर पर

छात्रो! अभी तक हम ने कथ्य के स्तर पर 'रश्मि' की कविताओं का अध्ययन किया है। अब हम अभिव्यक्ति के स्तर पर इन कविताओं का अध्ययन करेंगे। अभिव्यक्ति से यहाँ आशय है अपने भावों और विचारों को व्यक्त करना। जब तक रचनाकार के विचार और अनुभव अधिक सघन नहीं होंगे तब तक वह उन्हें सार्थक और प्रभावी ढंग से व्यक्त नहीं कर पाता। इतना यही नहीं उसकी रचना में गहनता को नहीं देखा जा सकता। 'संकल्पिता' में महादेवी वर्मा यह स्पष्ट करती हैं कि "भाव की न आवृत्ति संभव है न अनुकरण, किंतु विचार अनंत बार प्रत्यावर्तित होने तथा अनूदित होने की क्षमता रखता है।" (दो शब्द)

छात्रो! अब तक आप जान ही चुके हैं कि 'रश्मि' की कविताओं में अनेक विषयों को समेटा गया है लेकिन सबके मूल में मनुष्य है। इन कविताओं में कवयित्री ने अपने विविध भावों को सूक्ष्म रूप से अभिव्यक्त किया है। कुछ प्रमुख भावों को देखेंगे -

दुख :

महादेवी वर्मा की कविताओं की मूल भूमि दुख है। (दूधनाथ सिंह)। दुख और निर्वाण- दोनों शब्द बौद्ध धर्म की आचार-संहिता के प्रमुख अंग हैं। महादेवी वर्मा पर बौद्ध धर्म का प्रभाव था। इसकी खुलासा उन्होंने अपने निबंध 'करुणा का संदेशवाहक' में किया है। दुख के संबंध में महादेवी का यह कथन उल्लेखनीय है - "मुझे दुख के दोनों रूप प्रिय हैं, एक वह जो मनुष्य के संवेदनशील हृदय को सारे संसार से एक अविछिन्न बंधन में बाँध देता है और दूसरा वह जो काल और सीमा के बंधन में पड़े हुए असीम चेतना का क्रंदन है।" (रश्मि, भूमिका)। महादेवी कहती हैं कि -

रजतरश्मियों की छाया में धूमिल घन सा वह आता;

इस निदाघ के मानस में करुणा के स्रोत बहा जाता। (मृत्यु)

महादेवी वर्मा का मानना है कि दुख में जीवन का मर्म छिपा हुआ रहता है। सुख तो मृगमरीचिका के समान है। जबकि दुख जीवन बरसाने वाले मेघों के समान है। "व्यक्तिगत सुख विश्व वेदना में धुल कर जीवन को सार्थकता प्रदान करता है और दुख विश्व के सुख में घुल कर जीवन को अमरत्व।" (रश्मि, भूमिका)। महादेवी निर्वाण को दो अर्थों में प्रयोग करती है - एक है मृत्यु और दूसरा है अंतहीन नींद अर्थात चिरस्थायी प्रशांति। उनके अनुसार मृत्यु जीवन की अंतिम अतिथि है। लंबी यात्रा से थके हुए प्राणों को मृत्यु का अभिनंदन करना चाहिए जो उन्हें विश्राम देकर नवजीवन के प्रभात पथ पर अग्रसर होने का उत्साह देती है -

प्राणों के अंतिम पाहुन !

***

तू एक अतिथि जिसका

पथ है देख रहे अगणित दृग

साँसों में घड़ियाँ गिन गिन! (मृत्यु)

महादेवी वर्मा दुख को एक ऐसा काव्य मानती है जो संसार को एक सूत्र में बाँधे रखने की क्षमता रखता है। "हमारे असंख्य सुख हमें चाहे मनुष्यता की पहली सीढ़ी तक भी न पहुँचा सकें किंतु हमारा एक बूँद आँसू भी जीवन को अधिक मधुर अधिक उर्वर बनाए बिना नहीं गिर सकता।" (रश्मि, भूमिका)। सुख को मनुष्य अकेला भोगना चाहता है लेकिन दुख को बाँटना चाहता है। महादेवी दुख को जीवन की उर्वर शक्ति मानती हैं लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि वह सिर्फ और सिर्फ दुख और आँसुओं की माला को ही गूँथना चाहती।

बोध प्रश्न

- महादेवी की कविताओं की मूल भूमि क्या है?
- महादेवी वर्मा दुख को जीवन की उर्वर शक्ति क्यों मानती हैं?
- मनुष्य किसे अकेला भोगना चाहता है?

• महादेवी वर्मा निर्वाण को किस अर्थ में स्वीकार करती है?

वेदना :

महादेवी ने अपनी कविताओं में वेदना की मार्मिक अभिव्यक्ति की है। वे कहती हैं -

है पीड़ा की सीमा यह
दुख का चिर सुख हो जाना

***

आवे बन मधुर मिलन-क्षण
पीड़ा की मधुर कसक-सा;
हँस उठे विरह आठों में -
प्राणों में एक पुलक सा। (अतृप्ति)

कवयित्री परम-सत्ता की प्रतीक्षा में जीवन व्यतीत करती हैं और पूछती हैं -

सुरभि वन जो थपकियाँ देता मुझे,
नींद के उच्छ्वास सा, वह कौन है? (कौन है)

महादेवी की वेदना वैयक्तिक न होकर विश्वजनीन है। उसे सभी का सुख-दुख अपना लगता है। विश्व कल्याण उनका मुख्य उद्देश्य है -

अपनेपन की छाया तब
देखी न मुकुरमानस ने;
उसमें प्रतिबिंबित सबके
सुख दुख लगते थे अपने। (वे दिन)

महादेवी के काव्य में सिर्फ दुख और वेदना ही नहीं बल्कि सुख के क्षण भी विद्यमान हैं। प्रकृति की रमणीयता को भी देखा जा सकता है। उनकी कविता में जहाँ निराशा है वहीं आशा के क्षण भी हैं। जहाँ अनास्था है वहीं आस्था विद्यमान है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि

उनकी कविताओं में विविध आयाम हैं। उनकी कविताओं में उदात्त भाव को देखा जा सकता है। उनकी दृष्टि विराट है, भौतिक नहीं।

बोध प्रश्न

- महादेवी की कविताओं की क्या विशेषता है?

16.3.1.3 काव्य-भाषा के स्तर पर

काव्य-भाषा की बात करें तो नाम से ही स्पष्ट है कि यह कविता के जन्म लेने की भाषा है (रामस्वरूप चतुर्वेदी)। कविता में आदि से लेकर अंत तक शब्द ही शब्द होते हैं। इनसे ही ध्वनि, छंद, लय, अलंकार, प्रतीक आदि उभरते हैं। छायावादी कवियों के अनुसार कविता भावों की सहज अभिव्यक्ति है। जयशंकर प्रसाद की मान्यता है कि अनुभूति के लिए शब्द-विन्यास तथा छंद आवश्यक है। "छायावाद ने नए छंद बंधों, सूक्ष्म सौंदर्यानुभूति को जो रूप देना चाहा वह खड़ी बोली की सात्विक कठोरता नहीं सह सकता था। अतः कवि ने कुशल स्वर्णकार के समान प्रत्येक शब्द की ध्वनि, वर्ण और अर्थ की दृष्टि से नाप-तौल और काट-छाँट कर तथा कुछ नए गढ़कर अपनी सूक्ष्म भावनाओं को कोमलतम कलेवर दिया।" (महादेवी वर्मा, साहित्यकार की आस्था और अन्य निबंध, पृ. 68-69)।

महादेवी वर्मा भाव को विशेष महत्व देती है। इस संबंध में उनका यह कथन उल्लेखनीय है - "सब प्रकार की आलंकारिकता से शून्य सरल लोकगीतों में जो अंतरतम तक प्रवेश कर जाने वाली भावतीव्रता है, वह भी स्वानुभूतिमयी ही मिलेगी।" (कैलाश चंद्र भाटिया, हिंदी काव्य-भाषा की प्रवृत्तियाँ, पृ. 176 से उद्धृत)। छात्रो! अब हम 'रश्मि' का विवेचन काव्य-भाषा के स्तर पर करेंगे।

बोध प्रश्न

- छायावादी कवियों के अनुसार कविता क्या है?

प्रतीकात्मकता :

महादेवी की कविताओं की एक विशेषता है प्रतीकात्मकता। उनकी कविताओं में भारतीय संस्कृति और मान्यताओं को देखा जा सकता है। यह पहले भी कहा जा चुका है कि महादेवी वर्मा

अपनी बात को प्रतीकों और बिंबों के माध्यम से अभिव्यक्त करती है। उनकी अधिकांश कविताओं में दीपक के प्रतीक को देखा जा सकता है। इस संबंध में उनका यह कथन उल्लेखनीय है-

> "आरती के दीपक की लौ छूकर माथे से लगाने की हम सब में होड़ रहती थी और लौ को छूने की इच्छा में अनेक बार मेरी उँगलियाँ भी जल जाती थीं। लौ में पतिंगों का जलना देखना मुझे सदा कष्ट देता था और आज भी देता है, पर उन्हें रोकने का उपाय न तब था और न आज है। माँ की पूजा-आरती के अतिरिक्त तुलसी-चौरे पर भी दीपक रखा जाता था। .... मैंने ब्रजभाषा में जो तुकबंदियाँ करना आरंभ किया था उसमें भी दीपक और फूल की चर्चा अधिक थी। फूलों को खिला देना तो मेरे हाथ में नहीं था, न मैं उन्हें मुरझाने से रोक सकती थी, किंतु दीपकों को बुझाना जलाना तो मेरे हाथ में था। स्वभावतः दीपक की झिलमिलाहट का आकर्षण मेरे लिए विशेष था। ... भारत के कला, अलंकरण, आस्था, ज्ञान, सौंदर्यबोध, साहित्य आदि में दीपक का प्रतीक विशेष महत्व रखता है। मेरे निकट भी वह प्रतीक इतना आवश्यक है कि मैं उसके माध्यम से बुद्धि और हृदय दोनों की बात सहज ही कह सकती हूँ। काव्य में प्रतीक कवि के चरित्र और संघर्ष दोनों का संकेत देता है।" (दीपगीत, भूमिका)।

छात्रो! अब आपको यह स्पष्ट हो चुका होगा कि महादेवी वर्मा की कविताओं में दीपक इतने बार क्यों आता है। दीपक को प्रतीक के रूप में प्रयोग करके उन्होंने अपने मनोभावों को अभिव्यक्त करने में सफलता अर्जित की हैं।

महादेवी वर्मा की कविताओं में प्रयुक्त कुछ प्रतीकों की सूची दी जा रही है -

अंधेरा - विषाद, पीड़ा

इंद्रधनुष - मधुर मिलन की स्मृतियाँ

उषा - सुख

जलना - विश्व सेवा के लिए आत्मत्याग

झंकार - हृदय का स्पंदन

झंझा - क्षोभ

तिमिर - विषाद

दीपक - करुण जीवन

प्रभात - आनंदोद्रेक

बुद्बुद् - क्षण

रश्मि - ज्ञान की किरण

रात्रि - विषाद

लहर - हृदय का भावावेग

वसंत - आनंद, प्रफुल्लता

वीणा - हृदय, आत्मा

वीणा के तार - हृदय के भाव

बोध प्रश्न

- महादेवी अपनी कविताओं में दीपक का प्रयोग क्यों करती है?
- दीपक किसका प्रतीक है?
- महादेवी की कविताओं में प्रयुक्त कुछ प्रतीकों के उदाहरण दीजिए।

चित्रात्मकता :

'रश्मि' की कविताओं को पढ़ते समय आँखों के सामने अनेक चित्र उपस्थित हो जाते हैं। प्रकृति के चित्र देखें -

चुभते ही तेरा अरुण बान!

बहते कन कन से फूट फूट,

मधु के निर्झर से सजल गान। (रश्मि)

****   ****

गुलालों से रवि का पथ लीप

जला पश्चिम में पहला दीप,

विहंसती संध्या भरी सुहाग,

दृगों से झरता स्वर्ण पराग (?)

उपर्युक्त पंक्तियों को पढ़ते समय पाठक के आँखों के सामने चित्र उभरना स्वाभाविक है। इस तरह के अनूठे प्रयोग करने में महादेवी सफल हैं। चित्रात्मक भाषा ही नहीं किसी भाव को अभिव्यक्त करने के लिए शब्दों की आवृत्ति भी करती हैं।

बोध प्रश्न

- चित्रात्मकता का क्या अर्थ है?

पुनरुक्ति का महत्व :

भावों को अभिव्यक्त करने के लिए तथा अतिरिक्त बल देने के लिए पुनरुक्ति विशेष रूप से सहायक सिद्ध होती है -

गीलीकेसर-मद **झूम झूम**,

पीते तितली के नव कुमार (रश्मि)

***   ***

मंजरित नवल मृदु देहडाल,

खिल खिल उठता नव पुलकजाल (सुधि)

***   ***

स्मित से झरतीं किरणें **झर झर** (गीत 2)

***   ***

राशि राशि फूलों के वन

शत शत झंझावात प्रलय - (दुख)

***   ***

घुल घुल जाता यह हिमदुराव,

गा गा उठते चिर मूक भाव,

अलि **सिहर सिहर** उठता शरीर (सुधि)

इसी प्रकार छलक-छलक, बुद-बुद, चाह-चाह, थक-थक, कल-कल, गिन-गिन, कसक-कसक आदि पुनरुक्तियों का प्रयोग किया गए हैं। लगता है कि इन सभी पुनरुक्तियों में कवयित्री को कन कन (कण कण) विशेष प्रिय है -

- बिखर कर कन कन के/ गुनगुनाते रहते यह तान (जीवन)
- बहते कन कन से फूट फूट (रश्मि)
- जगाती कण कण में स्पंदन (?)
- गीतों में भर चिर सुख चिर दुख/ कण कण में बिखराते! (गीत)
- कण कण से आँसू के निर्झर (दुख)
- परिचित हो लूँ कण कण से (अतृप्ति)

बोध प्रश्न

- पुनरुक्तियों का प्रयोग क्यों किया जाता है?
- आप किसी भाव को व्यक्त करने के लिए किस प्रकार से पुनरुक्तियों का प्रयोग करेंगे।

ध्वन्यात्मकता

ध्वन्यात्मक प्रयोग को भी इन कविताओं में देखा जा सकता है। इससे चित्र और सजीव हो जाते हैं। कुछ उदाहरण देखिए-

- इन कनक रश्मियों में अथाह

  लेता हिलोर तम-सिंधु जाग;

  बुद्बुद् से बह चलते अपार,

  उसमें विहगों के मधुर राग (रश्मि)

- पल में रागों को झंकृत कर
  फिर विराग का अस्फुट स्वर भर
  मेरे लघु जीवन-वीणा पर
  क्या यह अस्फुट गाते? (गीत)
- जब मुरली मृदु पंचम स्वर
  कर जाता मन पुलकित अस्थिर
  कंपित हो उठता सुख से भर
  नव लतिका सा गात (गीत 2)
- मधु के निर्झर से सजल गान (रश्मि)
- हिम-बिंदु नाचती तरलप्राण (रश्मि)
- मरमर की मधुर संगीत छेड़ (रश्मि)
- गा गा उठते चिर मूक भाव (सुधि)

रंग संयोजन :

महादेवी की कविताओं में रंग संयोजन को भी देखा जा सकता है। काला, नीला, स्वर्णिम, लाल आदि रंगों को देखा जा सकता है। उन्होंने इन विविध रंगों की छवियों को अपने भावों की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त किया है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं -

- इंद्रधनुष के रंगों से/ चित्रित कर मुझको दे डाली?
- बदलता इंद्रधनुष सा रंग
- नील गगन पा लेता घन सा/ तम सा अंतहीन विस्तार
- है अतीत तम घोर
- पावस की निशि में जुगनू का/ ज्यों आलोक प्रसार
- चांदी सी स्मित के डोरे

- नील नभ का असीम विस्तार
- आलोक तिमिर दो छोरें
- गुलालों से रवि का पथ लीप
- कनक औ' नीलम-यानों पर
- दिन बरसा अपनी स्वर्ण रेणु
- निशि के आँसू

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा की कविताओं में प्रयुक्त कुछ रंगों के उदाहरण दीजिए।

विशेषण :

इंद्रधनुषी वितान

विहँसती संध्या

द्रुत पंखोंवाले मन

आलोक तिमिर

विषाद के मोती

कपोल गुलाब

स्वर्ण पराग

महादेवी वर्मा की कविताओं में अप्रस्तुत विधान, मानवीकरण, सूक्ष्म अनुभूति, कोमल पदावली, विराम चिह्नों का सम्यक प्रयोग, लोक शब्दावली आदि को भी देखा जा सकता है।

16.3.2 समीक्षात्मक अध्ययन

छायावादी कविता में व्यक्तिगत भावनाओं को प्रधानता दी जाती है। अर्थात कवि अपने सुख-दुख, आशा-निराशा, आस्था-अनास्था आदि को प्रकृति के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इसके लिए वह प्रतीकों और बिंबों का सफल प्रयोग करता है। इतना ही नहीं वह प्रकृति को

मानव के रूप में भी अंकित करता है। महादेवी वर्मा की कविताओं में भी हम तरह-तरह के भावों और उन भावों को अभिव्यक्त करने के लिए उपयुक्त प्रतीकों, बिंबों आदि को देख सकते हैं। उनकी कविताओं में भारतीय संस्कृति को देखा जा सकता है। यदि कहें कि उनका चिंतन वैश्विक है तो गलत नहीं होगा। वे स्त्री शिक्षा को अत्यंत महत्व देती हैं। अपनी कविताओं के माध्यम से वे सामाजिक चिंता को व्यक्त करती हैं। वे अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए दिन-रात, अंधकार-प्रकाश, दीपक, जल आदि को प्रतीकों के रूप में प्रयोग करती हैं।

हिंदी साहित्य के इतिहास में वस्तुतः उन्हें पीड़ा और वेदना की कवयित्री कहा जाता है। उन्हें 'आधुनिक मीराँ' के नाम से भी संबोधित किया जाता है। शिवमंगल सिंह सुमन उन्हें 'अप्रतिहत आराधना की अमर ज्योति' कहकर संबोधित किया है।

महादेवी वर्मा ने अपनी कविता के संदर्भ में स्पष्ट करते हुए कहा था कि उनकी कविता उनके विश्राम-क्षणों का प्रतिबिंब है। मनुष्य हृदय की मुक्त साधना को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है तो है वह कविता कहलाती है (रामचंद्र शुक्ल)। कवि अपने मनोभावों को शांत मनःस्थिति में शब्द बद्ध करता है। महादेवी की कविता के अनेक आयाम हैं। उनकी कविता के संदर्भ में इलाचंद्र जोशी का यह कथन देखें -

> "महादेवी जी की एक-एक कविता, एक-एक गीत केवल अपने-आप में अनमोल मोती नहीं है, वरन् वह एक-एक मोती अपने-आप में अनेक अनमोल मोतियों को छिपाए है। और उनमें से प्रत्येक मोती को मोती बनने में जिन अपार साधनाओं और बाधाओं का सामना करना पड़ा है, उनकी व्याख्या किसी भी हालत में सहज-साधारण नहीं है। किसी भी सीप की मोती बनने की प्रक्रिया साधारण नहीं होती, फिर महादेवी मानस के मोती तो साहित्य-संसार में दुर्लभतम और अमूल्य निधि है- उनकी प्रक्रिया और भी जटिल है - उनके लिए केवल स्वाति-नक्षत्र की ही आवश्यकता नहीं है।" (इलाचंद्र जोशी, भूमिका, महीयसी महादेवी, पृ. 6-7)

दूधनाथ सिंह कहते हैं कि महादेवी इन प्रतीकों के माध्यम से अपने कथ्य को ऊँचाइयों तक ले जाती हैं। उनके कथ्य को समझने के लिए पाठक को किसी अद्वैत सत्ता तक पहुँचने की आवश्यकता नहीं होती। "महादेवी का प्रेम और दुख, महादेवी के गीतों में उनका अनाथपन, वह या वैसा नहीं है जो सुलझ सकता है, या जिसका कोई निदान है। निराला की तरह उन्होंने

परमात्मा की बाँह भी नहीं पकड़ी, शरण भी नहीं माँगी। महादेवी न तो मीरा है, न कालिदास, न निराला। महादेवी समस्त स्त्री-जाति हैं। एक विरल वीरांगना है महादेवी।" (महादेवी, पृ. 21)

महादेवी वर्मा की कविताओं में अनुभूति और विचार के धरातल पर एकान्विति है। उनकी कविताओं में विस्मय, जिज्ञासा, दुख और आध्यात्मिकता के भाव मिलते हैं। "महादेवी ने अज्ञात प्रियतम के प्रति प्रणय-निवेदन किया है, किंतु उनका प्रणय दुख प्रधान है। "महादेवी का यह दुखवाद निराशा या अकर्मण्यता का व्यंजक नहीं है। उन्होंने दुख को केवल व्यक्तिगत जीवन के संदर्भ में स्वीकार किया है, सामाजिक जीवन के प्रसंग में तो वे अथक और अमर साधना में विश्वास करती हैं। उनका दुखवाद किसी सीमा तक समाज-कल्याण की भावना में संपृक्त है।" (सं. नगेंद्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 538)

बोध प्रश्न

- महादेवी दुख को कहाँ तक स्वीकार करती है?
- शिवमंगल सिंह सुमन ने महादेवी को क्या कहकर संबोधित किया था?
- अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए महादेवी वर्मा किन प्रतीकों का प्रयोग करती थीं?

16.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! अब तक आपने महादेवी वर्मा कृत 'रश्मि' का आलोचनात्मक अध्ययन किया है। अब तक के अध्ययन से आप समझ ही चुके होंगे कि इस कविता संग्रह में संग्रहीत कविताओं में मानव जीवन की विविध छवियाँ अंकित हैं। जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत की विविध स्थितियों और मनोभावों को इन कविताओं में देख सकते हैं। एक ओर प्रकृति के मनोरम चित्र अंकित है तो दूसरी ओर मनुष्य की असीम वेदना। महादेवी वर्मा कृत 'रश्मि' में संकलित कविताओं में सुख-दुख, आशा-निराशा, प्रेम-विरह की अद्‌भुत संयोजन को देखा जा सकता है। महादेवी अपने व्यक्तिगत सुख की बात नहीं करती, बल्कि वह समस्त संसार की बात करती हैं।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. 'रश्मि' में संकलित कविताओं में एक ओर प्रकृति का मानवीकरण है, तो दूसरी ओर आत्म गोपन, दुख, वेदना, मृत्यु, जीवन, अतृप्ति, आशा-निराशा, स्मृति, दुविधा, विस्मृति आदि हैं।
2. महादेवी की वेदना वैयक्तिक न होकर विश्वजनीन है। उन्हें सभी का सुख-दुख अपना लगता है। समाज कल्याण की भावना प्रमुख है।
3. महादेवी के लिए मनुष्य एक सजीव कविता है।
4. महादेवी वर्मा का मानना है कि दुख में जीवन का मर्म छिपा हुआ रहता है। सुख तो मरीचिका के समान है। जबकि दुख जीवन बरसाने वाले मेघों के समान है। जीवन को उर्वर बनाने के लिए यह आवश्यक है।
5. उनकी कविताओं में उदात्तता को देखा आज सकता है। उनकी जीवन दृष्टि विराट है।
6. महादेवी की कविताओं की एक विशेषता है प्रतीकात्मकता। उन्होंने दीपक को आंतरिक वेदना व्यक्त करने के लिए उपयुक्त माना है।

16.6 शब्द संपदा

1. अप्रतिहत = बिना रुकावट, अपराजित
2. उदात्त = श्रेष्ठ
3. एकाकीपन = अकेला होने की अवस्था
4. एकान्विति = एक में अन्वित अर्थात् युक्त होना, ऐक्य, एकत्व
5. क्षण भंगुरता = क्षण भर नष्ट हो जाने का भाव, नश्वरता
6. निर्झर = पानी का झरना, जल-प्रपात
7. निस्तब्धता = गतिहीनता
8. प्रतीक = वह दृश्य वस्तु जो किसी अदृश्य वस्तु का प्रतिनिधित्व करने वाला, चिह्न

9. प्रत्यावर्तित = जिसका प्रत्यावर्तन (वापसी) हुआ हो

10. बिंब = प्रतिमूर्ति

11. मनःस्थिति = मन की दशा

12. विस्मृति = भूल जाना

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'रश्मि' काव्य संग्रह में संकलित कविताओं के आधार पर महादेवी वर्मा के मानव संबंधी विचारों को स्पष्ट कीजिए।
2. कथ्य के स्तर पर 'रश्मि' की कविताओं का विवेचन कीजिए।
3. 'रश्मि' की कविताओं के भाव पक्ष पर प्रकाश डालिए।
4. 'रश्मि' की कविताओं का सामान्य परिचय दीजिए।
5. अभिव्यक्ति के स्तर 'रश्मि' की कविताओं का विश्लेषण कीजिए।
6. 'रश्मि' की काव्य-भाषा पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'जीवन को उर्वर बनाने के लिए दुख आवश्यक है।' 'रश्मि' की कविताओं के आधार पर इस कथन पर विचार कीजिए।
2. महादेवी वर्मा को पीड़ा और वेदना की कवयित्री क्यों कहा जाता है? स्पष्ट कीजिए।

3. ‘महादेवी वर्मा का दुखवाद किसी सीमा तक समाज-कल्याण की भावना में संपृक्त है।’ क्या आप इस कथन से सहमत हैं। तर्कसंगत व्याख्या कीजिए।

4. ‘महादेवी वर्मा की कविताओं की विशेषता है प्रतीकात्मकता।’ इस कथन को उदाहरण सहित पुष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. महादेवी वर्मा मनुष्य को क्या मानती हैं? ( )

(अ) सजीव वस्तु (आ) सजीव कविता (इ) निर्जीव वस्तु (ई) निर्जीव कविता

2. जीवन को उर्वर बनाने के लिए महादेवी वर्मा के अनुसार क्या आवश्यक है? ( )

(अ) सुख (आ) दुख (इ) क्रंदन (ई) उल्लास

3. मृत्यु जीवन का परम ...... है। ( )

(अ) हास (आ) ह्रास (इ) विकास (ई) परिहास

4. कवि अपने मनोभावों को किस मनःस्थिति में शब्द बद्ध करता है? ( )

(अ) शांत (आ) अशांत (इ) दुखी (ई) उल्लास

5. मनुष्य किसे अकेला भोगना चाहता है? ( )

(अ) हास (आ) सुख (इ) दुख (ई) संपत्ति

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. जीवन को सरस और उर्वर बनाने में .... सहायक होती है।

2. इच्छा में जो सुख शांति होती है वह .... में नहीं होती।

3. महादेवी वर्मा की कविताओं में ...... संस्कृति को देखा जा सकता है।

4. महादेवी वर्मा की कविताओं में ‘दीपक’ .... का प्रतीक है।

5. महादेवी की वेदना .... है।

III. सुमेल कीजिए -

1. सौरभ का फैला	(अ) अरुण बान
2. गीलीकेसर-मद	(आ) दो छोरें
3. चुभते ही तेरा	(इ) केश जाल
4. आलोक तिमिर	(ई) गुलाबी प्रात
5. सुनहली सांझ	(उ) झूम झूम

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. रश्मि : महादेवी वर्मा

2. महीयसी महादेवी : गंगाप्रसाद पांडेय

3. महादेवी वर्मा की विश्वदृष्टि : तोमोको किकुचि

4. कविता के पक्ष में : ऋषभदेव शर्मा, पूर्णिमा शर्मा

5. हिंदी काव्य भाषा की प्रवृत्तियाँ : कैलाश चंद्र भाटिया

परीक्षा प्रश्न पत्र का नमूना

MAULANA AZAD NATIONAL URDU UNIVERSITY

PROGRAMME: M.A – HINDI

I – SEMESTER EXAMINATION

TITLE & PAPER CODE : आधुनिक हिंदी काव्य (MAHN101CCT)

TIME: 3 HOURS TOTAL MARKS: 70

यह प्रश्न पत्र तीन भागों में विभाजित हैं- भाग -1, भाग -2 और भाग - 3 प्रत्येक प्रश्न के उत्तर निर्धारित शब्दों में दीजिए।

भाग – 1

1. निम्न लिखित विकल्पों में सही विकल्प चुनिए। 10X1=10

i. आधुनिकता की दौड़ में हानि हो रही है- ( )

(अ) धर्म की (आ) मनुष्य की (इ) संस्कृति और समाज की (ई) सभी

ii.________विश्वयुद्धों का निर्माण हुआ ( )

(अ) विज्ञान के कारण (आ) आधुनिकता के कारण (इ) मध्य युग के कारण (ई) सभी

iii. ब्रह्मसमाज के संस्थापक कौन थे? ( )

(अ) केशवचंद्र सेन (आ) राजा राममोहन राय (इ) विवेकानंद (ई) स्वामी दयानंद सरस्वती

iv. खड़ी बोली के प्रथम महाकवि कौन हैं? ( )

(अ) मैथिलीशरण गुप्त (ख) श्रीधर पाठक (ग)हरिऔध (घ) रामनरेश त्रिपाठी

v . जयशंकर प्रसाद का काव्य संग्रह नहीं है? ( )

(अ) झरना (आ) लहर (इ) अतिमा (ई) कामायनी

vi. 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति' किसका नाटक है?   (   )

(अ) लाला लक्ष्मीनारायण लाल   (आ) उपेन्द्रनाथ अश्क

(इ) जगदीशचंद्र माथुर   (ई) भारतेंदु हरिश्चंद्र

vii. पै निज .... ज्ञान के रहत हीन के हीन।   (   )

(अ) भाषा   (आ) आशा   (इ) देश   (ई) राष्ट्र

viii. 'साकेत' किस प्रकार की विधा है?   (   )

(अ) महाकाव्य   (आ) खंडकाव्य   (इ) रूपक काव्य   (ई) इनमें से कोई नहीं

ix. मनुष्य किसे अकेला भोगना चाहता है?   (   )

(अ) हास   (आ) सुख   (इ) दुख   (ई) संपत्ति

x. पंत को ज्ञानपीठ पुरस्कार कब मिला?   (   )

(अ) 1969   (आ) 1959   (इ) 1926   (ई) 1960

भाग – 2

निम्न लिखित आठ प्रश्नों में से किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 200 शब्दों में देना आनिवार्य है।   5X6 =30

2. मानव और समाज पर कविता का क्या प्रभाव पड़ता है?

3.आधुनिकता की विशेषताएँ लिखिए।

4.अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के काव्य पर प्रकाश डालिए।

5.मैथिलीशरण गुप्त के काव्य की विशेषताएँ बताइए।

6.भारतेंदु हरिश्चंद्र को 'भारतेंदु' की उपाधि कैसे मिली?

7. शिशिर ऋतु से उर्मिला क्या कहती हैं?

8.कवि ने उर्मिला के सतीत्व को किस प्रकार चित्रित किया है?

9.प्रसाद के जीवन दर्शन पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डालिए।

भाग- 3

निम्न लिखित पाँच प्रश्नों में से किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर 500 शब्दों में देना अनिवार्य है। **3X10=30**

10. प्रसाद के व्यक्तित्व की विशेषताओं के बारे प्रकाश डालिए।

11. प्रसाद ने श्रद्धा सर्ग में कामायनी की सुंदरता का वर्णन किस प्रकार किया है? अपने शब्दों में लिखिए।

12. निराला की साहित्यिक यात्रा पर प्रकाश डालिए।

13. 'राम की शक्ति पूजा' की विषय वस्तु पर प्रकाश डालिए।

14. 'पल्लव' में आए हुए जीवन सत्य एवं मनोभावों का वर्णन कीजिए।